

ISSN-0971-8397



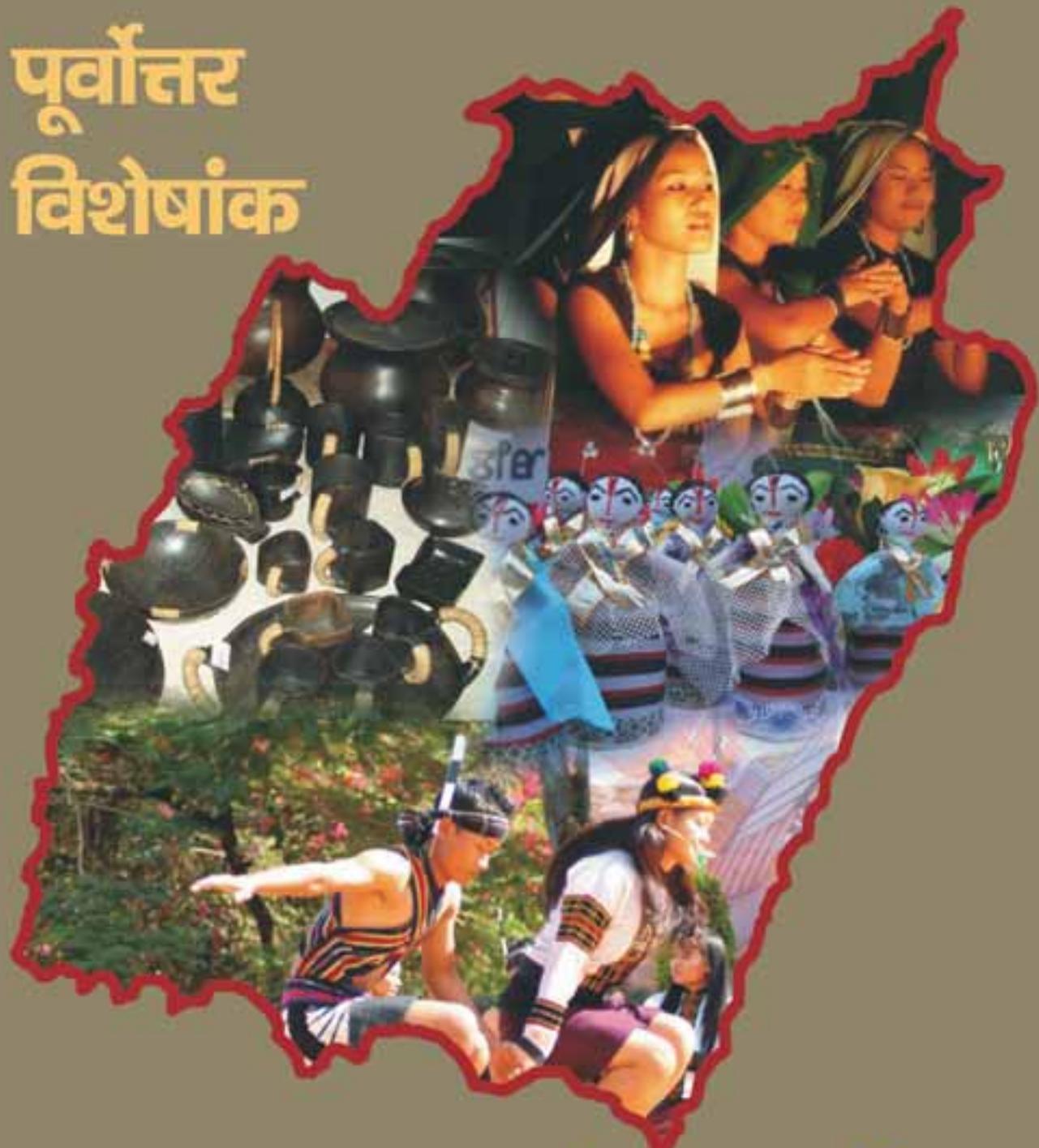
एंपांडा

दिसंबर 2009

विकास को समर्पित मासिक

मूल्य : 20 रुपये

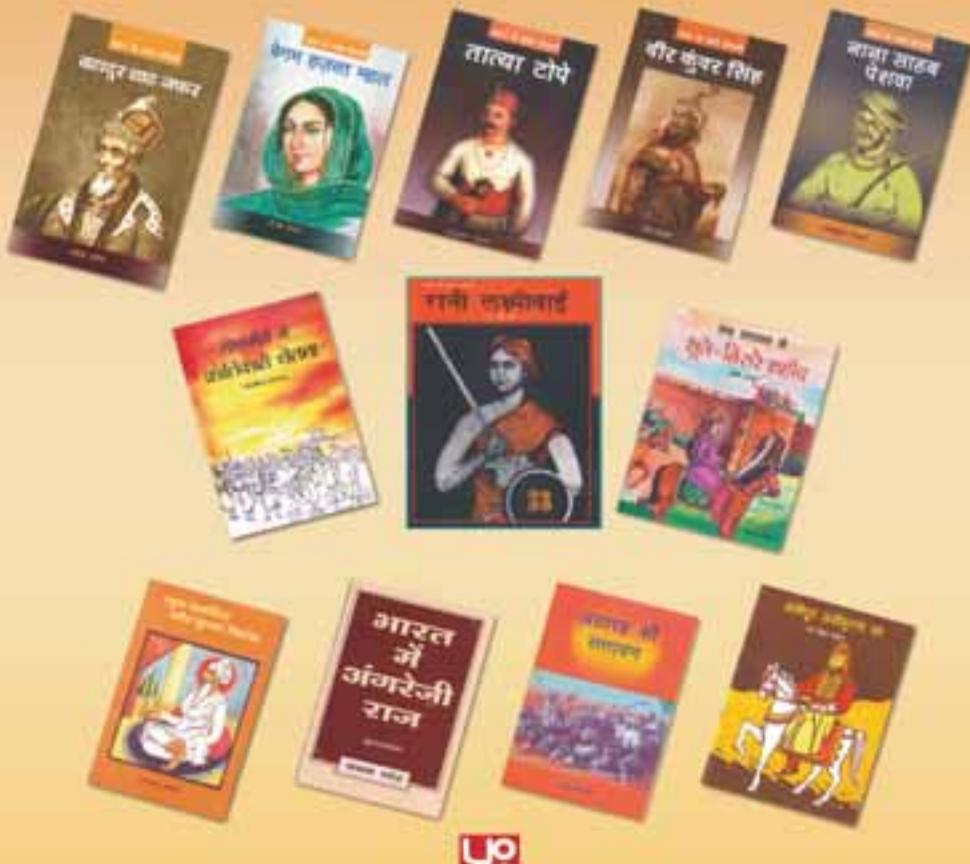
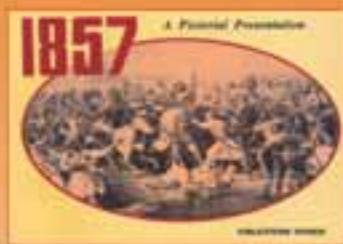
पूर्वोत्तर
विशेषांक



फ़ोकर्स : मणिपुर

प्रथम स्वतंत्रता संग्राम—1857

प्रकाशन विभाग की चुनिंदा पुस्तकें



प्रकाशन विभाग

सूखना और प्रशारण बंडलाइ, भारत सरकार
सूखना भवन, सी.जी.ओ. कौम्पलेकर, लोधी रोड, नई दिल्ली

विक्रेता: सूखना भवन, सी.जी.ओ. कौम्पलेकर, लोधी रोड, नई दिल्ली (24365810) ताज. नं. 196, सुरक्षा समिक्षकालय, दिल्ली (23880206)
सी-701, कौम्पलेकर, लोधी रोड, नई दिल्ली (24365810) १. पर्सेनेक इंस्ट., कौम्पलेकर (23880306) सुरक्षा भवन, एक ईड. जी. बी.ए. २. विन
इंस्ट. नया चैन्स (24917873) विहार राज्य संस्कारी बैंक वित्तियम, असोन राज्यालय, भटना (2663407) बैंक रोड, विक्रेता बर्मिंघम प्रेस
हिस्ट्रिक्यूलर्स (2330650) ताज. नं. १, दुल्ही अंडर, कौम्पलेकर, लोधी रोड-एस, कौम्पलेकर, सरकारी बैंक नं. ५, गुहाकाल अंडर, लोधी रोड, नया चैन्स (24900283) जल ताज, एक विन, कौम्पलेकर, लोधी रोड, कौम्पलेकर (26632244) कौम्पलेकर, कौम्पलेकर, जल ताज,
लोधी रोड, नया चैन्स (2663006) ताज. नं. ०८, न्यू कौम्पलेकर, कौम्पलेकर, कौम्पलेकर, लोधी रोड, मुकामारी (2663000)

अपना जननामी से लिख उनकी बेसाइट देखें—

योजना



वर्ष : 53 • अंक : 12 • दिसंबर 2009 अग्रहायण-पौष शक संवत् 1931 • कुल पृष्ठ : 76

प्रधान संपादक
नीता प्रसाद

वरिष्ठ संपादक
राकेशरेणु

संपादक
रेमी कुमारी

संपादकीय कार्यालय

538, योजना भवन, संसद मार्ग,
नयी दिल्ली-110 001

दूरभाष : 23096738, 23717910

टेलीफैक्स : 23359578

ई-मेल : exeed.yojana@gmail.com
yojanahindi@gmail.com

वेबसाइट : www.yojana.gov.in

www.publicationsdivision.nic.in

a) dpd@nic.in

b) dpd@hub.nic.in

संयुक्त निदेशक (उत्पादन)

जे.के. चन्द्रा

व्यापार व्यवस्थापक (प्रसार एवं विज्ञापन)
सूर्यकांत शर्मा

दूरभाष : 26100207, 26105590

फैक्स : 26175516

ई-मेल : pdjucir_icm@yahoo.co.in

आवरण : साधना सर्कसेना

- संपादकीय
- ढांचागत विकास में बुनियादी मुद्रे
- पूर्वोत्तर भारत में बैंकिंग परिवर्त्य
- पूर्वोत्तर हेतु संसाधनों का केंद्रीय पूल
- पूर्वोत्तर भारत में अंतर्देशीय जल परिवहन
- मणिपुर में आर्थिक नीति की चुनौतियां
- मणिपुर के जैव संसाधनों का वैज्ञानिक प्रबंधन
- जातीय संघर्ष और हाशिये पर मुख्यधारा राजनीति
- मणिपुर पर्यटन : मानचित्र और चुनौतियां
- मणिपुर में महिलाओं की स्थिति अतीत और वर्तमान
- ज़रूरत जैव कृषि की
- महिलाओं का राजनीतिक सशक्तीकरण
- जहां चाह वहां राह : ऊंची भूमि हेतु पूर्वोत्तर क्षेत्र सामूहिक संसाधन प्रबंधन परियोजना
- पूर्वोत्तर राज्यों के बारे में आकलन
- बांस के भंडार
- ब्रह्मपुत्र नदी पर बांध ?
- पूर्वोत्तर राज्यों में पर्यटन
- पूर्वोत्तर का स्वर्ग : नामदफा राष्ट्रीय उद्यान
- क्या आप जानते हैं? : माल एवं सेवा कर
- झरोखा जम्मू-कश्मीर का : कश्मीर में तरक्की की बयार
- ग़रीबी रेखा पर कुछ सवाल
- दोहा वार्ता के भविष्य और सार्थकता पर उठते सवाल
- विकलांगों के लिए सहायक उपकरण एवं प्रौद्योगिकी
- बच्चों के लिए हानिकर खाद्य व्यापार
- ज़रूरी है संतुलित आहार
- मंथन : मानव अधिकार का मेरुदंड 'आत्मवत् सर्वभूतेषु'

इस अंक में

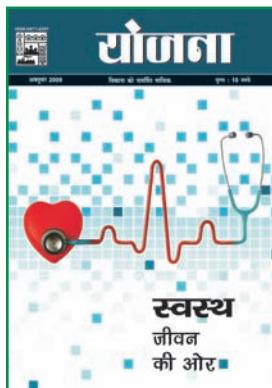
-	पी.पी. श्रीवास्तव	3
जोयिता देब	5	
देवेंद्र उपाध्याय	9	
अरविंद कुमार सिंह	12	
मैसनम बोबो सिंह	14	
एन. सी. तालुकदार	17	
ए. मार्गी सिंह	20	
बी. ब्रदीनारायण शर्मा	24	
च. जामिनी देवी	27	
डब्ल्यू. गधापियारी देवी	29	
एच. सुधीर	33	
खेलेना गुरुमयूम	37	
कीर्ति सर्कसेना	39	
नंदिनी	42	
संदीप दास	43	
संजीव काकोती	45	
-	47	
ब्रजकिशोर सिंह	48	
-	49	
सुनील	51	
योगेश कुमार	53	
विनोद कुमार मित्र	56	
प्रशांत भोई	61	
सुनील कुमार खण्डेलवाल	65	
सरोज कुमार शुक्ल	67	
	70	

योजना हिंदी के अतिरिक्त असमिया, बांग्ला, अंग्रेजी, गुजराती, कन्नड़, मलयालम, मराठी, तमिल, उडिया, पंजाबी, तेलुगु तथा उर्दू भाषाओं में भी प्रकाशित की जाती है। पत्रिका मंगवाने हेतु, नयी सदस्यता, नवीकरण, पुराने अंकों की प्राप्ति एवं ऐंजेसी आदि के लिए मनीआर्डर/डिमांड ड्राफ्ट/पोस्टल आर्डर 'निदेशक, प्रकाशन विभाग' के नाम से बनवा कर निम्न पते पर भेजें : व्यापार व्यवस्थापक (प्रसार एवं विज्ञापन), प्रकाशन विभाग, ईस्ट ब्लॉक IV, लेवल VII, आर.के. पुराम, नयी दिल्ली-110066 दूरभाष : 26100207, 26105590, तार : सूचनाप्रकाशन।

सदस्य बनने अथवा पत्रिका मंगाने के लिए आप हमारे निम्नलिखित विक्री केंद्रों पर भी संपर्क कर सकते हैं :- सूचना भवन, सीजीओ कॉम्प्लेक्स, लोधी रोड, नयी दिल्ली-110003 (दूरभाष : 24367260, 5610), हाल सं. 196, पुराना सचिवालय, दिल्ली-110054 (दूरभाष : 23890205) * 701, सी- विंग, सातवीं मर्जिल, केंद्रीय सदन, बेलापुर, नवी मुंबई-400614 (दूरभाष : 27570686) * 8, एसप्लानेट ईस्ट, कोलाकाता-700069 (दूरभाष : 22488030) * 'ए' विंग, राजाजी भवन, बंसल नगर, चैनई-600090 (दूरभाष : 24917673) * प्रेस रोड नवी गवर्नरमेंट प्रेस के निकट, तिरुवनंतपुरम-695001 (दूरभाष : 2330650) * ब्लॉक सं-4, पहला तल, गृहकल्प, एमजी रोड, नामपल्ली, हैदराबाद-500001 (दूरभाष : 24605383) * फस्ट फ्लॉर, 'एफ' विंग, केंद्रीय सदन, कोरामगला, बंगलुरु-560034 (दूरभाष : 25537244) * बिहार राज्य कोऑपरेटिव बैंक भवन, अशोक राजपथ, पटना-800004 (दूरभाष : 2683407) * हॉल सं-1, दूसरा तल, केंद्रीय भवन, सेक्टर-H, अलीगढ़, लखनऊ-226024 (दूरभाष : 2225455) * अंबिका कॉम्प्लेक्स, फस्ट फ्लॉर, पाल्वी, अहमदाबाद-380007 (दूरभाष : 26588669) * के.के.बी. रोड, नयी कॉलोनी, मकान संख्या-7, चेनीकुटी, गुवाहाटी-781003 (दूरभाष : 2665090)

चौदे की दरें : वार्षिक : 100 रु., द्विवार्षिक : 180 रु., त्रिवार्षिक : 250 रु.; विदेशों में वार्षिक दरें : पड़ोसी देश: 500 रु.; यूरोपीय एवं अन्य देश : 700 रु.

'योजना' में प्रकाशित लेखों में व्यक्त विचार लेखकों के अपने हैं। ज़रूरी नहीं कि ये लेखक भारत सरकार के जिन मंत्रालयों, विभागों अथवा संगठनों से संबद्ध हैं, उनका भी यही दृष्टिकोण हो। पत्रिका में प्रकाशित विज्ञापनों की विषयवस्तु के लिए 'योजना' उत्तरदायी नहीं है।



आपकी राय

निबंध प्रतियोगिता हर वर्ष आयोजित की जाए

यो जना का अक्टूबर 2009 अंक स्वास्थ्य के लगभग सभी पहलुओं को स्पर्श करता है। अच्छा स्वास्थ्य हमें प्रसन्न, शांतिमय एवं प्रभावोत्पादक बनाता है। इस अंक को पढ़ने के बाद संभवतः हर पाठक ने ऐसा अनुभव किया होगा। हर बार की भाँति इस बार भी संपादकीय हमें समस्या और उसके निराकरण के उपायों के प्रति जागरूक बनाता है। साथ ही यह हमें सकारात्मक कदम उठाने के लिए सशक्त रूप से प्रेरित करता है।

लेखिका शैलजा चंद्रा ने जनसंख्या स्थिरीकरण के लिए एक मौलिक सुझाव दिया है। इस पर हर नागरिक को गंभीरता से सोचना चाहिए। स्वास्थ्य से संबंधित ए.के. बनर्जी, नीलू अरुण, विनोद कुमार सिन्हा, जगदीश सक्सेना, सत्येंद्र रंजन तथा अन्य लेखकों के आलेख भी उल्लेखनीय रहे।

‘निद्रा और स्वास्थ्य’ शीर्षक आलेख स्वस्थ जीवन में निद्रा के अपरिहार्य योगदान को बड़ी सरलता से पाठकों के सम्मुख रखता है। योजना की उत्कृष्टता के संदर्भ में एक निवेदन है कि पाठकों की भागीदारी में बढ़ोतारी के लिए निबंध प्रतियोगिता हर वर्ष आयोजित की जाए। यह प्रेरक एवं उत्साहवर्धक रहेगा। योजना के उक्त अंक के लिए सभी योगदानकर्ताओं को धन्यवाद एवं शुभकामनाएं।

प्रवीण कुमार शर्मा
किशनगंज, बिहार

ई-मेल—prabinkr.s@gmail.com

जनसंख्या नियंत्रण जरूरी

यो जना अक्टूबर'09 अंक पढ़ा। भारत की जनसंख्या आज एक अरब को भी पार कर गई है। इतनी बड़ी जनसंख्या वाले देश में सबको स्वास्थ्य सुविधा मिले इसके लिए आजादी के समय से ही प्रयास जारी है। परंतु दिन दूनी रात चौगुनी बढ़ती जनसंख्या इसमें बाधक है। आज भी ऐसे देहाती क्षेत्र हैं जहां स्वास्थ्य सुविधाएं उपलब्ध नहीं हैं। वहां के बच्चे कुपोषण के शिकार हैं। स्वास्थ्य सेवाओं पर कितनी राशि खर्च की जा रही है लेकिन सरकार की जो भी योजनाएं केंद्र से चलकर राज्य और जिला से पंचायत स्तर तक पहुंचती है उनका बंदर-बांट कर लिया जाता है। मुट्ठीभर राशि ही पंचायत स्तर तक पहुंच पाती है। भारत में स्वास्थ्य सुविधाएं मुहैया कराने के लिए काफी पैसा विदेशों से आ रहा है जिसका यदि ईमानदारी पूर्वक संचालन किया जाए तो सबको सही समय पर स्वास्थ्य सुविधाएं उपलब्ध हो सकेंगी। एक बड़ी बाधा अशिक्षा है। अशिक्षित समाज अपने अधिकारों की रक्षा स्वयं नहीं कर पाता जिससे उसको मिलने वाले लाभ का बंदर-बांट आसान हो जाता है। आज भी ऐसे गांव हैं जहां के स्वास्थ्य केंद्रों पर चिकित्सक नहीं पहुंच पाते। वहां के लोगों की अशिक्षा इनके लिए लाभकर सिद्ध होती है। शिक्षा प्राप्त कर समाज में एकता, बधुत्व व प्राप्त अधिकार रक्षा के मामले में क्रांति लाई जा सकती है। कम पढ़े-लिखे लोगों से स्वास्थ्य विभाग के कर्मी बिना योजना बताए निशान (अंगूठे का) ले लेते हैं। उनको यह

पता नहीं चलता कि वस्तुतः वह क्या है। वे अपने अधिकारों के प्रति जागरूक हो नहीं पाते। जनसंख्या, भ्रष्टाचार और शिक्षा के प्रति जागरूकता के लिए पंचायतों की मदद लेनी होगी। जनसंख्या नियंत्रण के लिए पंचायत स्तर पर स्वास्थ्य संबंधी सेमिनार का आयोजन कर गांव के लोगों को इसके प्रति जागरूक करना होगा। भ्रष्टाचार मिटाने के लिए पंचायत स्तर पर कार्य करना होगा। जब तक पंचायत की जनता में भ्रष्टाचार को मिटाने का संकल्प नहीं दिखाई पड़ेगा तब तक भ्रष्टाचार का अंत नहीं होगा। पंचायतों में जनजागरूकता अधियान चलाना होगा। स्वास्थ्य सेवाओं की सफलता चूंकि शिक्षा पर आधारित है इसके लिए भी पंचायतों की मदद लेनी होगी। जब तक पंचायत के कर्मचारी व पदाधिकारी वफादार नहीं होंगे तब तक देश में स्वास्थ्य सेवाओं के प्रचार-प्रसार के साथ-साथ स्वास्थ्य लाभ नहीं पहुंच पाएगा। आवश्यकता इस बात की है कि सब मिलकर स्वास्थ्य सेवाओं को गांव-गांव तक पहुंचाएं। झुग्गी-झोपड़ियों में रहने वाले देश के नौनिहालों की रक्षा करनी होगी तभी हम राष्ट्र पर नाज़ कर सकते हैं। स्वास्थ्य विभाग के कर्मचारियों को भी वफादार रहना होगा। कहा जाता है कि ईश्वर का दूसरा रूप डॉक्टर होते हैं, परंतु जब तक वे अपने कर्तव्य का ठीक से अनुपालन नहीं करेंगे तब तक उन्हें ईश्वर का दूसरा रूप कहने में दुविधा होगी।

सत्य प्रकाश
बरवां, मीरगंज, गोपालगंज (बिहार)

देश का समृद्ध जीवंत पूर्वोत्तर क्षेत्र क्रमिक रूप से निरंतर रूपांतरण की प्रक्रिया में है।

राष्ट्रीयता के प्रारंभिक चरणों में एकीकरण और पृथक्करण के दो विपरीत ध्रुवों के बीच झूल रही ब्रह्मपुत्र की इस माटी का यह विचलन समाप्त हुए अरसा हो गया है। हिमालय पर्वत श्रेणी की पूर्वी प्रशाखाओं में जीवन के विविध रूपों में संपन्न हरे-भरे घने वन, विविध जीवनशैली और वेशभूषा तथा सांस्कृतिक परंपराओं के धनी जनजातीय समूह विविधता में एकता की मिसाल कहे जाने वाले भारत को पूर्वोत्तर क्षेत्र की अनुपम देन हैं। परंतु इस क्षेत्र के लोगों की आज की प्राथमिक चिंता सामाजिक-आर्थिक विकास है। समूचा देश इस बात से सहमत है। यह बात पिछले वर्ष जारी पूर्वोत्तर विज्ञन 2020 में भलीभांति परिलक्षित होती है। केंद्र, राज्य सरकारें, उद्योग, निजी क्षेत्र और सभ्य समाज, सभी अवस्थापना, संचार, स्वास्थ्य, शिक्षा और विकास के अन्य अभिन्न अंगों की खाई को पूरा करने में सश्रम लगे हुए हैं।

पिछले चार वर्षों से आपकी यह पत्रिका योजना पूर्वोत्तर राज्यों में चल रहे विकास कार्यों को लिपिबद्ध कर सुधी पाठकों के समक्ष प्रस्तुत करती रही है। हर वर्ष हम किसी एक राज्य पर विशेष ध्यान केंद्रित करते हैं। इस वर्ष हमारा फोकस मणिपुर पर है।

मणिपुर अर्थात् 'रत्नजटित भूमि' वर्ष 1891 में ब्रिटिश भारत में शामिल होने वाला अंतिम रजवाड़ा था। द्वितीय विश्व युद्ध के दौरान यहां पर जापानी और मित्र राष्ट्रों की सेनाओं के बीच भीषण युद्ध हुआ था। स्वतंत्रता के बाद 1956 में मणिपुर केंद्रशासित प्रदेश बना जिसे 1972 में पूर्ण राज्य का दर्जा हासिल हुआ। सपाट मैदानों वाला यह प्रदेश चारों ओर से ऊबड़-खाबड़ पहाड़ों से घिरा हुआ है। नैसर्गिक संपदा से परिपूर्ण 29 बोलियां बोलने वाली 30 से अधिक प्रजाति के जनजातीय लोगों का यह प्रदेश क्षेत्र की संपन्न सांस्कृतिक धरोहर को अपने योगदान से और समृद्ध बना रहा है।

इस बात के पर्याप्त संकेत हैं कि प्रचुर संसाधनों से परिपूर्ण होने के बावजूद मणिपुर का विकास अभी तक कोई विशेष उत्साहवर्धक नहीं रहा है। पिछले दो दशक के दौरान अधिकांश समय में सक्रिय रही विघ्नकारी शक्तियों ने विकास को पीछे धकेल दिया था। परंतु अब परिवर्तन के संकेत दिखने लगे हैं। सामाजिक मोर्चे पर, विशेषकर स्वास्थ्य एवं शिक्षा के क्षेत्रों में, हाल के वर्षों में अच्छी प्रगति हुई है। राज्य के मानव संसाधनों की पूर्ण संभावनाओं के दोहन के लिए यह आवश्यक शुरुआत है। आर्थिक मोर्चे पर पूर्वोत्तर राज्यों के लिए किए गए विशेष प्रावधानों और व्यवस्थाओं के साथ-साथ पूर्वोत्तर के 'विज्ञ 2020' को साकार करने के लिए किए जा रहे तमाम उपायों से मीठे फल प्राप्त होंगे, ऐसा विश्वास है। यहां खाद्य प्रसंस्करण जैसे कुछ उद्योग पहले ही अच्छी शुरुआत कर चुके हैं। आशा है कि पारंपरिक हथकरघा और हस्तशिल्प उद्योगों को भी पुनर्जीवन मिलेगा। जिरीबाम-तूपू-इंफाल रेललाईन के बन जाने पर, मणिपुर शीघ्र ही भारत के रेल मानचित्र पर आ जाएगा। समूचे देश के साथ रेल सुविधा से जुड़ जाने पर राज्य के विकास के लिए अवसरों के नये द्वार खुलेंगे। योजना के प्रस्तुत अंक में नीति-निर्माताओं, शिक्षाविदों और अन्य विषय-विशेषज्ञों के विद्वत्तापूर्ण लेखों में आपको पूर्वोत्तर क्षेत्र, विशेषकर मणिपुर में विकास के विभिन्न पहलुओं की झलक देखने को मिलेगी।

हमारी कामना है कि नववर्ष आप सबके लिए सुखद और समृद्धिदायी हो। □

Ranked best school in imparting training in IAS Exam.*

*(Business Sphere, Feb. 2009)



KSG

Passionate about your success...

G.S.

with

DR. Khan

(पूर्व में, भूगोल विद्यालय दिल्ली स्कूल ऑफ़ इकोनोमिक्स, दिल्ली विश्वविद्यालय में लैक्चरर)

पी.ओ.डी. तकनीक* हमारा आध्यात्म की तैयारी

केवल खान स्टडी ग्रुप द्वारा

सामान्य अध्ययन में 18 वर्षों के अध्यापन अनुभव से

डॉ. खान द्वारा विकसित एक अनुपम विधि



सामान्य अध्ययन

आपके व्यक्तिगत लक्ष्य में सहभागी

- इतिहास ● मनोविज्ञान ● लोक प्रशासन

बौद्ध प्रारंभ
नावरेख 2009
नामांकन प्रारंभ

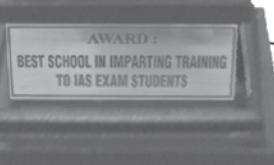
प्रारंभिक एवं मुख्य परीक्षा हेतु
उपलब्ध पत्राचार कोर्स

- सामान्य अध्ययन (English/Hindi)
- भूगोल (English/Hindi)
- इतिहास (English/Hindi)
- लोक प्रशासन (English/Hindi)
- समाजशास्त्र (English/Hindi)
- मनोविज्ञान (English/Hindi)

प्रारंभिक परीक्षा सीरीज
29 नवम्बर 2009 से प्रारंभ
नामांकन प्रारंभ

छात्र-छात्राओं के लिए पृथक होस्टल की सुविधा में सहयोग

विवरण पुस्तिका हेतु रु.50/- का डीडी/एमओ भेजें



**Separate Batches
for English & Hindi Medium**

KSG

खान स्टडी ग्रुप सर्वे कठिन परिश्रम में विश्वास रखता है, हमें यह अपेक्षा है कि मात्र वे प्रत्याशी ही प्रवेश तें जो कठिन परिश्रम के लिए तैयार हों।

यथान रहे: हमें सफलता के लिए शॉर्ट-कट की जानकारी नहीं है।

KHAN STUDY GROUP

2521, Hudson Line, Vijay Nagar Chowk, Near G.T.B. Nagar Metro Station, New Delhi - 110 009
Ph: 011-45552607, 45552608, 27130786, 27131786, 09717380832, send us mail: drkhan@ksgindia.com
You can also download Registration Form from our Website: www.ksgindia.com

YH-12/09/1

योजना, दिसंबर 2009

ढांचागत विकास में बुनियादी मुद्रदे

● पी.पी. श्रीवास्तव

बुनियादी ढांचे के विकास का अर्थ आमतौर पर अंतरक्षेत्रीय और क्षेत्र के भीतर सड़क, रेल, जल और वायु परिवहन यातायात; बैंकिंग, दूरसंचार आदि का विकास लगाया जाता है। अफसोस की बात यह है कि सबसे अधिक महत्वपूर्ण बुनियादी ढांचे, मानवीय बुनियादी ढांचे के विकास को नज़रअंदाज़ कर दिया जाता है जबकि एक ऐसे देश के लिए जो लंबे समय तक औपनिवेशिक शासन के अधीन रहा हो, यह ज्यादा गंभीर और नाजुक मसला होना चाहिए।

पूर्वोत्तर क्षेत्र जहां विकास की मंद गति के लिए केंद्रीय सहायता के अभाव को जिम्मेदार ठहराया जाता है, मानव संसाधन विकास की विशेष सार्थकता है। यह भी सर्वविदित है कि निवेश के अनुसार वहां प्रगति नहीं हुई है। अतः हमें निष्पक्ष और वस्तुनिष्ठ होकर वास्तविक

स्थिति, उपलब्धियों और खामियों का परीक्षण करना होगा।

उपर्युक्त संदर्भ में दो सर्वाधिक स्वीकार्य तथ्य हैं; प्रथम स्वतंत्रता के बाद से ही सभी केंद्रीय सरकारें, बिना इस बात का विचार किए कि कौन-सा दल सत्तारूढ़ था, पूर्वोत्तर क्षेत्र के लोगों की आवश्यकताओं के प्रति अत्यंत चिंतित रही हैं और सहानुभूतिपूर्ण रखैया रखती आई हैं। दरअसल, पूर्वोत्तर क्षेत्र के सामाजिक और आर्थिक विकास को केंद्र सरकार ने एक राष्ट्रीय कार्य के रूप में लिया है और उसे सर्वोच्च प्राथमिकता दी है। बुनियादी ढांचे के विकास में अवरोधों को दूर करने, न्यूनतम बुनियादी सेवाओं के प्रावधान और विकासोन्मुख वातावरण तैयार करने के लिए विशेष रणनीतियां तैयार की गई हैं।

दूसरे देश के अन्य क्षेत्रों की अपेक्षा पूर्वोत्तर

क्षेत्र में केंद्रीय सहायता का विकेंद्रीकरण कहीं अधिक उदारता से होता रहा है (प्रत्येक पंच वर्षीय योजना में प्रायः दोगुनी वृद्धि होती रही है)। तालिका-2 से यह स्पष्ट हो जाता है।

आइए, अब एक सरसरी नज़र पूर्वोत्तर में रह रहे लोगों (देश की कुल जनसंख्या का क़रीब 3.8 प्रतिशत) द्वारा भौगोलिक एवं जलवायुगत तथा ढांचागत खामियों के कारण अनुभव की जा रही समस्याओं के समाधान हेतु केंद्र सरकार द्वारा उठाए गए विशेष और बेजोड़ कदमों पर डालते हैं। इन उपायों में अग्रलिखित शामिल हैं :

- गाड़गिल फार्मूले से परे विशेष श्रेणी वाले राज्यों जैसा व्यवहार। उनकी योजना आवंटन का 90 प्रतिशत अनुदान के रूप में होता है और 10 प्रतिशत ऋण के तौर पर।
- गैरयोजना व्यय हेतु केंद्रीय सहायता के 20 प्रतिशत के इस्तेमाल की अनुमति।
- अंतरराज्यीय समस्याओं के निराकरण और इस तरह की परियोजनाओं का वित्तपोषण अपने ही बजट से करने के लिए वर्ष 1972 में पूर्वोत्तर परिषद (एनईसी) का गठन।
- संबंधित केंद्रीय मंत्रालयों को अपने वार्षिक बजट की कम-से-कम 10 प्रतिशत राशि पूर्वोत्तर राज्यों के विकास हेतु निर्धारित और व्यय करने के निर्देश की अनूठी व्यवस्था।
- नॉन लैप्सेबल सेंट्रल पूल ऑफ रिसोर्सेस (एनएलसीपीआर) के नाम से एक केंद्रीय कोष का गठन जिसमें बिना व्यय की गई राशि जमा हो जाती है और जिसका उपयोग पूर्वोत्तर क्षेत्र में ढांचागत विकास परियोजनाओं में निवेश के लिए किया जाएगा।

तालिका-1
पूर्वोत्तर में जनसंख्या घनत्व

जनसंख्या 2001 (लाख में)	क्षेत्रफल वर्ग किमी	प्रति किमी जनसंख्या	अभ्युक्ति
असम	267	78,438	340 सर्वाधिक जनसंख्या
त्रिपुरा	32	10,486	304 क्षेत्रफल में दूसरा सबसे छोटा
मेघालय	23	22,429	103
मणिपुर	22.9	22,327	107
नगालैंड	20	16,579	120
अरुणाचल प्रदेश	11	83,743	13 क्षेत्रफल में सबसे बड़ा
मिजोरम	9	22,081	40 केरल के बाद सर्वाधिक साक्षरता
सिक्किम	5.4	7,098	76 पूर्वोत्तर का नवीनतम सदस्य

अंतरराष्ट्रीय सीमायें : 98 प्रतिशत, भूटान के साथ (650 किमी), तिब्बत/चीन (1000 किमी), म्यांमा (1450 किमी) और बांग्लादेश (1640 किमी) शेष देश के साथ भू-संपर्क केवल पश्चिम बंगाल में भू-सीमा 20-27 किमी)

- पूर्वोत्तर क्षेत्र विकास (डीओएनईआर) के नये विभाग का वर्ष 2001 में गठन और एनएलसीआर के उपयोग के दायित्व सहित इसका एक पूर्ण मंत्रालय में उन्नयन।
- एनईसी (पूर्वोत्तर परिषद) का स्तर एक सलाहकार संस्था से बढ़ाकर वर्ष 2005 में पूर्वोत्तर के 8 राज्यों के लिए वैधानिक नियोजन संस्था के रूप में करना।

अब एक संक्षिप्त दृष्टि प्राकृतिक रूप से संपन्न पूर्वोत्तर क्षेत्र की अंतर्निहित शक्ति पर डालते हैं। प्रकृति ने इस क्षेत्र को बड़ी उदारता से अनेक उपहार दिए हैं।

पूर्वोत्तर क्षेत्र को प्रकृति का उपहार

देश के कुल भौगोलिक क्षेत्र का 7.9 प्रतिशत भाग पूर्वोत्तर क्षेत्र के 8 राज्यों में निहित है। इस क्षेत्र में सभी प्रकार के प्राकृतिक भू-भाग और जलवायु के उदाहरण देखने को मिलते हैं। उत्तर में बर्फ से ढंके हिमालय की पर्वत शृंखलाओं से लेकर नीचे की ओर म्यांमा और बांग्लादेश की छोटी पहाड़ियां तथा दो प्रमुख नदी प्रणालियों—ब्रह्मपुत्र और बराक का चौड़ा गर्म मैदानी इलाका इस क्षेत्र की विशेषता है। कुल भौगोलिक क्षेत्र का 52 प्रतिशत बनाच्छादित है। वर्ष 2003 के आंकड़ों के अनुसार सिक्किम में सर्वाधिक 82.29 प्रतिशत तो असम में सब से कम 34.45 प्रतिशत क्षेत्र बनाच्छादित है। इन भौगोलिक जलवायु कारकों के साथ-साथ भारी वर्षा ने पूर्वोत्तर को जल संसाधनों के लिहाज से काफी समृद्ध (देश के जल संसाधनों का 37 प्रतिशत) बना दिया है। यही बात जैव-विविधता और खनिजों के संबंध में भी लागू होती है। देश की कुल जैव-विविधता वाली संपदा का एक-तिहाई इसी विरल जनसंख्या वाले क्षेत्र में संकेन्द्रित है।

हमारे बहुमूल्य मानव संसाधन

पूर्वोत्तर के 2,62,179 वर्ग किलोमीटर क्षेत्र में फैले 200 के क़रीब भाषाएं/बोलियां बोलने वाले लगभग 400 समुदायों के 3.9 करोड़ लोग न केवल परिश्रमी हैं वरन् जुझारू भी हैं। यही इस क्षेत्र का सबसे बहुमूल्य संसाधन है। पूर्वोत्तर क्षेत्र बनावटी विविधता में बुनियादी एकता का बेजोड़ उदाहरण है। स्वशासन की पारंपरिक प्रणाली के तहत समुदाय से संबंधित मामलों में आम आदमी को भी समुचित तौर पर शामिल किया जाता था, फिर चाहे वह सुरक्षा का मामला हो या विकास का। इन प्रक्रियाओं और मूल्यों के क्षण से व्यवस्था कुछ गड़बड़ा गई है और इससे चिंता होती है।

इस पृष्ठभूमि के विरुद्ध हमें पूर्वोत्तर क्षेत्र में रचित नियोजित वास्तविक बुनियादी ढांचे के आंकड़ों के ब्यौरे में जाए बिना उनके विकास में आने वाली चुनौतियों का पता लगाने की कोशिश करनी चाहिए।

पूर्वोत्तर क्षेत्र में विकास संबंधी चुनौतियां इन कारणों से सामने आती हैं :

- भौतिक कारक, यथा भू-जलवायु संबंधी कारक, दुर्गम इलाके, भारी वर्षा और खेतों में कामकाजी मौसम का छोटा होना।
- मनोवैज्ञानिक कारक, यथा गुजारे के एकमात्र साधन जल, ज्ञानी और जगल पर नियंत्रण के लिए संघर्ष के पीढ़ियों पुराने इतिहास से प्रभावित अंतर्राष्ट्रीय एवं अंतरराज्यीय संबंध जिनके कारण पीढ़ियों से झगड़े और परस्पर झटके होती आई हैं। इस कारण का अब कोई अस्तित्व नहीं है, परंतु चिरकाल से चली आ रही भावनाएं और पूर्वग्रह अब भी बने हुए हैं जिनके कारण अंतर्राष्ट्रीय और

अंतरराज्यीय समन्वय और सहयोग का अभाव है। फलस्वरूप विकास प्रभावित होता है।

- ग्रामीण क्षेत्रों में पारंपरिक स्वशासन प्रणाली और ग्रामीण ढांचे का क्षरण छोटे और जनजातीय बहुल पूर्वोत्तर राज्यों द्वारा अपेक्षाकृत अधिक आबादी वाले बड़े राज्यों के प्रशासकीय और संस्थागत ढांचे को अपनाए जाने का यह अवांछित परिणाम है। इसका नतीजा यह हुआ है कि आम आदमी और सत्ता के केंद्रों के बीच पदानुक्रम के चरणों के लिहाज से दूरी बढ़ी है। नियोजन प्रक्रिया से आम आदमी दूर हो गया है और इस पर अब संपन्न और अभिजात वर्ग का प्रभुत्व और प्रभाव है। इसीलिए लोग विकास योजनाओं को सरकारी मशीनरी द्वारा लागू की जाने वाली सरकारी योजना के रूप में ही देखते हैं।

- देशज मूल्यों का क्षण : भौतिकतावादी विदेशी प्रभावों और मीडिया (विशेषकर टीवी चैनलों द्वारा) द्वारा दिखाए जाने वाले अमर्यादित कार्यक्रमों के कारण हमारे प्राचीन देशज मूल्यों का क्षण हो रहा है। वर्तमान शिक्षा के जो संदेश हैं वह पूर्वोत्तर क्षेत्र के समानता, ईमानदारी, सच्चाई, पारदर्शिता, विश्वास, श्रम का सम्मान, व्यक्ति से ऊपर समाज, आम सहमति के आधार पर सामूहिक सर्वसम्मत निर्णय लेने की बहुमूल्य धरोहर और सांस्कृतिक चरित्र से मेल नहीं खाते। ये पारंपरिक मूल्य अभी भी गांवों में आम आदमी में जीवित हैं, परंतु यह बात तभी लागू होती है जब वे अपने ही कबीले/जनजाति/समुदाय के लोगों से व्यवहार कर रहे हों।

तालिका-2
पूर्वोत्तर क्षेत्र : राज्यों की स्थिति

योजना	राज्य योजना	(निकटतम करोड़ रुपये में) केंद्रीय मंत्रालय	एनएलसीपीआर	परिषद (एनईसी)	पूर्वोत्तर योग
7वीं योजना से 1990 तक (व्यय) रोलिंग योजना एवं 8वीं योजना (1990-97) प्रावधान	10,344	अनुपलब्ध	—	1,285	11,629
9वीं योजना (1997-2002)	18,033	अनुपलब्ध	—	2,072	20,106
10वीं योजना (2002-07)	25,283	11,935	1,317	2,114	40,649
11वीं योजना (2007-09) (औसत प्रक्षेपण)	35,733	37,771	3,239	2,512	79,253
	26,214	19,670	1,649	1,224	68,425

- क्षमता कारक : ढांचागत परियोजनाओं के नियोजन, अभिकल्पन, कार्यान्वयन और सर्वेक्षण की तकनीकी, वित्तीय और प्रशासकीय क्षमता और बहुत परियोजनाओं पर सार्वजनिक निधि का समय सीमा के अंदर उचित ढंग से इष्टतम उपयोग की क्षमता का दोनों ही क्षेत्रों— सार्वजनिक और निजी, में आमतौर पर अभाव है।
 - इन पांचों कारकों में से पहले कारक पर विजय पाना कठिन नहीं है। लोग यहां के इलाके और जलवायु के आदी हैं। आधुनिक विज्ञान और प्रौद्योगिकी भू एवं जलवायु संबंधी कारकों से निर्मित प्रायः सभी प्रकार की भौतिक बाधाओं को दूर करने में समर्थ है।
 - दूसरा कारक— मनोवैज्ञानिक कारक, ये बेहतर संचार, शिक्षा, सामाजिक संपर्क और संवाद तथा परस्पर आर्थिक निर्भरता के फलस्वरूप धीरे-धीरे समय के साथ धूमिल हो जाएंगे।
 - तीसरा कारक यानी संपन्न और अभिजात वर्ग के हाथों सत्ता सिमटे जाने के फलस्वरूप आम आदमी का शासन व्यवस्था और विकास से प्रायः दूर होते जाने के संकेत अच्छी बात नहीं है। यह खुतरनाक हो सकता है। आम आदमी को विकास की प्रक्रिया में सक्रिय साझेदारी के लिए शुरुआती चरण से शामिल किए जाने का प्रयास किया जाना चाहिए। नियोजन की प्रक्रिया से लेकर क्रियान्वयन और फिर उसके पर्यवेक्षण और मूल्यांकन तक सभी चरणों में आम आदमी को शामिल किया जाना चाहिए। केवल वही उपाय भ्रष्टाचार, अक्षमता, पक्षपात, छीजन और सरकारी धन के दुरुपयोग, बुनियादी ढांचागत कारों में समय/धन की बरबादी और घटिया गुणवत्ता को उजागर कर सकता है। जागरूक जनमत स्वस्थ लोकतंत्र के लिए अनिवार्य है।
 - चौथा कारक : श्रेष्ठ पारंपरिक मूल्यों का जो क्षरण हुआ है वह एक गंभीर बीमारी है। इसका निदान केवल ऐसी संशोधित शिक्षा प्रणाली से ही हो सकता है जो प्रारंभिक अवस्था से ही शिक्षा में आदर्श मूल्यों को समाहित कर सके।
 - पांचवां कारक : अर्थात् क्षमता विकास भी शिक्षा की बदौलत ही हो सकेगा।
 - आगे का रास्ता
 - पूर्वोलिखित जो दो बुनियादी मुद्रे स्वस्थ लोकतांत्रिक प्रणाली को बनाए रखने के लिए महत्वपूर्ण हैं, उन्हें पूर्वोत्तर परिषद ने वर्ष 2005 में अपने गठन के बाद सर्वोच्च प्राथमिकता दी थी और निमानुसार कार्रवाई की गई थी :
 - विकास और शासन व्यवस्था में सक्रिय हिस्सेदारी निभाने के लिए आम आदमी को आमंत्रित करने की प्रक्रिया की शुरुआत जनसंपर्क कार्यक्रमों के जरिये शुरू की गई थी जिनमें पूर्वोत्तर शहरी और ग्रामीण क्षेत्रों के सभी वर्गों के 2-5 लाख लोगों से राय लेकर विकास के विभिन्न क्षेत्रों में उनकी अपेक्षाओं और आकांक्षाओं को दर्ज किया गया था। यह काम स्थानीय गैर-सरकारी संगठनों (एनपीओ) के कार्यकर्ताओं ने किया था। इनको वर्ष 2006 में ही 'पीपुल्स विज्ञन' के रूप में संकलित किया गया था। इस प्रक्रिया को साल-दर-साल चालू रखा गया था ताकि वैकासिक प्रक्रिया में उसकी रुचि बनी रहे। आशा है, इसे पुनः शीघ्र ही शुरू किया जाएगा।
 - नरसीरी से लेकर विश्वविद्यालय तक शिक्षा के पुनर्गठन की लंबी प्रक्रिया हो चुकी है। इसका उद्देश्य बुनियादी स्तर से ही प्रबुद्ध प्रगतिशील नागरिक समाज का निर्माण करना है। देशज मूल्य प्रणाली के सर्वोत्तम सामान्य तत्वों पर आधारित आधुनिक प्रगतिशील लोकतांत्रिक राष्ट्र के विकास और उसके संपोषण के लिए यह अनिवार्य है। संपन्न और सम्मानजनक आजीविका के लिए यह अनिवार्य है। सरकारी नौकरी के पीछे भागने की बजाय युवा वर्ग उत्पादक कारों में भाग लें। सरकारी नौकरियों का भी वैसे ही रास्ता बंद हो गया है।
 - सड़कों, रेलवे, विमान सेवाओं और अंतरराष्ट्रीय जलमार्ग के विकास की व्यापक योजना बनाते हुए सभी हितग्राहियों की शिखर स्तरीय बैठकें आयोजित की गई थीं और जिन परियोजनाओं पर काम चल रहा था उनको अतिरिक्त संसाधन दिए गए थे।
 - उपर्युक्त के लिए प्रेरणा पुनर्गठित पूर्वोत्तर परिषद की पहली बैठक में (12 अप्रैल '05) प्रधानमंत्री डॉ. मनमोहन सिंह के भाषण में मिली थी, जिसमें उन्होंने कहा था कि :
 - पूर्वोत्तर क्षेत्र में उपलब्ध मानव संसाधन के विकास को सर्वोच्च प्राथमिकता दिए जाने की आवश्यकता है।
 - कार्यशील लोगों के कौशल विकास का
- कार्य, उनके लिए उपयोगिता के आधार पर, कार्यस्थलों के आसपास ही किया जाना चाहिए।
- मैं यह बताना चाहूंगा कि पूर्वोत्तर के अनेक राज्यों में विज्ञान और गणित की शिक्षा एक कमज़ोर बिंदु है, जिसका परिणाम यह हो रहा है कि हम ऐसे छात्रों और स्नातकों को तैयार कर रहे हैं, जिनके पास रोजगार योग्य कौशल नहीं है। अतः पूर्वोत्तर क्षेत्र के शिक्षा माननिक्रिय की फिर से रूपरेखा तैयार करना भी इस परिषद की प्राथमिकताओं में होना चाहिए।
 - यदि हमें पूर्वोत्तर क्षेत्र के युवाओं को लाभप्रद रोजगार के अवसर मुहैया कराना है तो शिक्षा और व्यावसायिक कौशल की समग्र योजना अनिवार्य है।
 - बुद्धिमानी भरे इन शब्दों को राजनीतिक रूप प्रदान करने के लिए पूर्वोत्तर परिषद ने जुलाई'05 में पूर्वोत्तर क्षेत्रीय शिक्षा परिषद (एनईआरईसी) का गठन किया ताकि क्षेत्र में शिक्षा प्रणाली में कसावट लाई जा सके। इसके सदस्यों में पूर्वोत्तर क्षेत्र के विश्वविद्यालयों के वुलपति, आईआईटी गुवाहाटी और एनईआरआईएसटी ईटानगर के निदेशक जैसे शीर्ष शिक्षाविद्, 8 राज्य सरकारें क्षेत्रीय विशेषज्ञ और यूजीसी, इनू, एनसीआरटी जैसी राष्ट्रीय स्तर की संस्थाओं के विशेषज्ञ शामिल थे। गहराई से विचार-विमर्श करने के बाद एनईआरईसी ने 'पूर्वोत्तर क्षेत्र में शिक्षा का पुनर्गठन' शीर्षक से प्रकाशित शोधपत्र में अपने निष्कर्ष और सिफारिशों पेश कीं। इनके प्रमुख तत्व इस प्रकार हैं :
 - पूर्वोत्तर क्षेत्र में शिक्षा के परिदृश्य पर एनईआरईसी के मूलभूत निष्कर्षों और सिफारिशों में निम्नांकित शामिल हैं :
 - क 1. साक्षरता आकंड़ों में ऊंचे किंतु गुणवत्ता में नीचे : वर्तमान शिक्षा युवाओं को अति प्रतिस्पर्धी बाजार अर्थव्यवस्था में अपने उचित स्थान तलाशने में मदद नहीं करती। शिक्षण की गुणवत्ता में सुधार के लिए, पूर्वोत्तर परिषद ने एनसीआरटी की सहायता से प्राथमिक स्तर से लेकर सभी अप्रशिक्षित शिक्षकों (पूर्वोत्तर में क्रीड़ 1.25 लाख) के प्रशिक्षण के पहले कदम के रूप में कौशल उन्नयन एवं प्रेरणात्मक प्रशिक्षण (शुरुआत के

तौर पर गणित एवं विज्ञान का शिक्षण) कार्यक्रम की पहल की है। इन्होंने भी अपने शिक्षक प्रशिक्षण कार्यक्रम का विस्तार किया है।

ii. कला एवं संस्कृति : पूर्वोत्तर परिषद ने अपने बजट की एक प्रतिशत राशि शिक्षा प्रणाली में कला एवं संस्कृति के समावेश के लिए क्रमिक रूप से अलग से रखने का नीतिगत फैसला किया है। इससे बच्चों के लिए शिक्षा को रोचक बनाया जा सकेगा और इससे बीच में पढ़ाई छोड़ने वाले बच्चों की संख्या में काफी कमी आएगी।

iii. हमारे पूर्वी पड़ोसियों की भाषाओं का शिक्षण: यह हमारी 'पूरब चलो' (लुक ईस्ट) नीति को लागू करने के प्रकाश में महत्वपूर्ण है।

iv. शिक्षा में सूचना प्रौद्योगिकी का विस्तृत उपयोग : ताकि विभिन्न चरणों में दूरस्थ ग्रामीण विद्यालयों तक पहुंचा जा सके और छात्रों को आदर्श पाठ (विशेषकर विज्ञान एवं गणित पर) और शिक्षकों को पुनर्नव्यर्था पाठ्यक्रम की सामग्री नियमित रूप से भेजी जा सके।

ख i. क्षेत्रीय सांस्कृतिक भावनाओं से बेमेल क्षेत्रों को त्यागना : शिक्षा प्रणाली से विकास की पश्चिमी अवधारणा के जो मूल्य हम सीख रहे हैं उनसे व्यक्तिवाद, प्रतिस्पर्धा, विभाजन और मतदान से निर्णय और विरोध जो विरोध के लिए विरोध करता है, को बढ़ावा मिलता है जबकि पूर्वोत्तर क्षेत्र के नैतिक मूल्य व्यक्ति से ऊपर समाज, परस्पर विश्वास, सहयोग और सामूहिक आम सहमति पर सर्वसम्मत निर्णय में विश्वास रखते हैं। यह विसंगति अनेक असाधारण घटनाओं का मूल कारण है और इससे क्षेत्र की इष्टतम संभावनाओं की प्राप्ति में अवरोध पैदा होता है।

ii. ज्ञान और कौशल के बीच असंतुलन को दूर करना : अभीष्ट कौशल प्राप्त करने के लिए इसे व्यावसायिक धारा की सामान्य शिक्षण धारा के साथ एकीकरण कर प्राप्त किया जा सकता है। जिन विषयों का ज्ञान छात्र की अभिरुचि के अनुकूल होता है और शिक्षा को समाज की आवश्यकता के अनुसार ढाल लेता

है वह इसकी रोजगारोन्मुख संभावना में पर्याप्त सुधार ले आता है। इन्होंने और एनसीईआरटी के सहयोग से समाज के उन बर्गों तक पहुंचने का प्रयास किया जा रहा है जो अभी तक हमारी पहुंच से दूर रहे हैं। इनमें बीच में पढ़ाई छोड़ने वाले बच्चे, आंशिक रोजगार वाले और अन्य लोग शामिल हैं। इनके कौशल और ज्ञान के विकास के प्रथल किए जा रहे हैं।

iii. राष्ट्रीय निर्णय के उद्देश्यों पर बल : लार्ड मैकाले ने 19वीं शताब्दी में भारत की समग्र शिक्षा प्रणाली के स्थान पर भारत में औपनिवेशिक शासन बनाए रखने के लिए स्थानीय युवाओं को तैयार करने वाली शिक्षा प्रणाली को लागू किया था। समृद्धि के साधन के तौर पर स्थानीय उत्पाद के मूल्य संवर्धन के लिए कौशल के प्रशिक्षण को हतोत्साहित किया गया। हमारे आज के युवा भी सरकारी नौकरी के पीछे भागते हैं। भारत को एक ऐसी शिक्षा प्रणाली की आवश्यकता है जिसमें अग्रलिखित बातें शामिल हों :

- बच्चे में पहले से ही मौजूद पूर्णता की अभिव्यक्ति अथवा उसका प्रकटीकरण। केवल तथ्यों को इकट्ठा करने के बजाय मन की एकाग्रता हासिल करना।
- उत्पादक कार्यों के जरिये समृद्धि प्राप्त करने के लिए छात्र को अपने पैरों पर खड़ा होने में मदद करना और इस प्रकार राष्ट्र की समृद्धि में योगदान करना। उन्हें केवल सरकारी नौकरी पर निर्भर नहीं रहने देना।
- क्षेत्रीय/पारंपरिक/सांस्कृतिक स्वभाव के अनुसार राष्ट्रवादी और धर्मनिरपेक्ष दृष्टिकोण के विकास को अपने कबीले/जनजाति/समुदाय के संकीर्ण दायरे से परे ले जाना।
- शिक्षा को सार्थक और अर्थपूर्ण बनाना। इसके लिए देशज मूल्यों के समावेश पर एनईआरईसी की सिफारिशों को राज्यों को भेजा जा चुका है।

शिक्षित बेरोजगारी की आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए अपने क्षेत्र में उद्यम लगाने के इच्छुक स्थानीय युवाओं को समग्र प्रशिक्षण एवं सहारा देने के लघु अवधि के कार्यक्रम

के लिए डीपीआर (विस्तृत परियोजना रिपोर्ट) तैयार करने का काम इस समय प्रगति पर है। इस बीच, अन्य सिफारिशों को चरणबद्ध ढंग से लागू करने के लिए कदम उठाए जा रहे हैं।

एक और सच्चाई है जिससे इंकार नहीं किया जा सकता। अतीत में विकास के छूटे हुए तमाम कार्यों को शीघ्र पूरा करने के लिए भारी मात्रा में जो निवेश किया जा रहा है उसके ऐसे नतीजे सामने आ रहे हैं जिनके बारे में कभी सोचा भी नहीं गया था। अधोस्तरीय कार्य, रिसाव, धन का दुरुपयोग, बेर्डमानी और भ्रष्टाचार के कारण काले धन को बढ़ावा मिल रहा है जिससे अन्य अनेक गैर कानूनी गतिविधियों को पैर पसारने का मौका मिलता है। दिशाहीन और हताश युवक असामाजिक और आपराधिक गतिविधियों के आसान शिकार बन जाते हैं और जबरन वसूली तथा फ़िरौती के लिए अपहरण जैसे कार्यों में लग जाते हैं। आतंकवादी संगठन इसी तरह के पैसे पर पनपते हैं और नशीली दबाओं और हथियारों की तस्करी समस्या को और बढ़ा देती है। पूर्वोत्तर के अधिकांश क्षेत्रों को केंद्रीय करने से छूट मिली हुई है, परंतु लोगों से उनके वेतन, व्यवसाय और वाणिज्यिक वाहनों से कर के नाम पर वसूली की जाती है। नतीज़ा यह होता है कि आम चीज़ों के दाम बहुत बढ़ जाते हैं और इससे आम आदमी को ही कष्ट होता है। इसका निरान इसी में है कि समाज दृढ़ मूल्यों वाली जीवन पद्धति अपनाए। इसे बेहतर शिक्षा प्रणाली के जरिये ही प्राप्त किया जा सकता है।

इस प्रकार कहा जा सकता है कि सामाजिक-आर्थिक विकास की समस्या के समाधान में सबसे महत्वपूर्ण योगदान शिक्षा प्रणाली का है। समाज में भ्रष्टाचार को दूर करने और एकता को बढ़ावा देने के लिए पूर्वोत्तर क्षेत्र में शिक्षा प्रणाली का पुनर्गठन करना होगा। ऊपर जो सुझाव दिए गए हैं उनके साथ-साथ कुछ लघु अवधि के कदम उठाने होंगे। मानव संसाधन विकास एक लंबी चलने वाली प्रक्रिया है और इसे बड़े सोच-विचार और धैर्य के साथ आगे बढ़ाना होगा। □

(लेखक पूर्वोत्तर परिषद के सदस्य और पूर्वोत्तर क्षेत्रीय शिक्षा परिषद के अध्यक्ष हैं।
ई-मेल: ppshri@gmail.com)

पूर्वोत्तर भारत में बैंकिंग परिवर्तन

● जोयिता देब

पिछले कुछ वर्षों में भारत के वित्तीय क्षेत्र, विशेषकर बैंकिंग क्षेत्र में अनेक संरचनात्मक और नीतिगत परिवर्तन देखने को मिले हैं। किसी भी वित्तीय प्रणाली का मेरुदंड होने के नाते बैंकिंग क्षेत्र सदैव ही बुनियादी महत्व का क्षेत्र रहा है। पूरी व्यवस्था को प्रभावित करने वाली संस्था होने के कारण इस क्षेत्र का कोई भी प्रतिकूल कार्य अर्थव्यवस्था को जिस शिद्दत से प्रभावित करता है, उतना अन्य कोई वित्तीय संस्था नहीं करता। बैंकों के महत्वपूर्ण उद्देश्यों में एक है संसाधन जुटाना और किफायती ढंग से उसे आवंटित करना। इस कार्य को प्रभावी ढंग से निष्पादित करने की बैंकों की योग्यता कारपोरेट जगत के प्रदर्शन में झलकती है, जो आगे जाकर क्षेत्र अथवा अर्थव्यवस्था के विकास में दिखाई देती है। इसके साथ ही, यह एक स्थापित तथ्य

है कि औद्योगीकरण के लिए पूँजी जुटाकर जो वित्तीय विकास होता है, वही आर्थिक प्रगति को बढ़ावा देता है। कुशल तथा प्रगतिशील बैंक, उन उद्यमियों की पहचान कर और उनको पैसे देकर, इस प्रक्रिया को सुविधाजनक बना देते हैं, जिनसे उनके उद्यमों को सफल बनाने की आशा की जाती है। यहां यह उल्लेख करना ज़रूरी है कि भारत और अन्य अर्थव्यवस्थाओं में भी अवरोधों और खामियों को दूर कर कुशल बैंकिंग प्रणाली के विकास की दिशा में अनेक उपाय निरंतर जारी हैं। **विशेषत:** वैश्वीकरण और उदारीकरण की अपरिवर्तनीय प्रक्रिया द्वारा पेश की गई चुनौतियां, इन परिवर्तनों को अपरिहार्य बना देती हैं। जब से बैंकिंग क्षेत्र को प्रतिबंधों से मुक्त किया गया है, समूचे बैंकिंग क्षेत्र में व्यापक परिवर्तन हुए हैं। इस क्षेत्र की उत्पादकता और कार्य निष्पादन

में आमूल-चूल परिवर्तन आया है। इन परिवर्तनों के आकलन संबंधी अध्ययन, हमेशा ही नीति निर्माताओं, अनुसंधानकर्ताओं और इस क्षेत्र से जुड़े अन्य सभी लोगों के लिए चिंता का विषय रहे हैं।

पूर्वोत्तर भारत में बैंकिंग

कुशल बैंकिंग प्रणाली का किसी भी देश की अर्थव्यवस्था को ऊँचाई तक ले जाने में अहम भूमिका होती है। पूर्वोत्तर भारत के मामले में यह बात और भी उचित प्रतीत होती है, क्योंकि इस क्षेत्र का आर्थिक विकास बहुत कुछ बैंकों की कार्यकुशलता और उनकी उपलब्धता पर निर्भर करता है। अनुसूचित वाणिज्यिक बैंकों का बढ़ता हुआ नेटवर्क इस क्षेत्र में बचत को प्रोत्साहित करने में महत्वपूर्ण योगदान कर रहा है। पूर्वोत्तर राज्यों में विदेशी बैंकों की उपस्थिति प्रायः नगण्य है। इस क्षेत्र में खुदरा विदेशी शाखाओं का भी कोई अस्तित्व नहीं है। निजी बैंकों का आगमन हाल ही में शुरू हुआ है। भारत की ग्रामीण वित्तीय प्रणाली, औपचारिक और अनौपचारिक क्षेत्रों में दो तरह की संस्थाओं के माध्यम से काम करती है। हालांकि औपचारिक क्षेत्र ने बहु-एजेंसी दृष्टिकोण को अपनाया है, पूर्वोत्तर भारत में वाणिज्यिक और सहकारी बैंक यही दो प्रणालियां हैं जो ग्रामीण वित्तीय व्यवस्था को सहारा दिए हुए हैं। वहां अन्य कोई औपचारिक प्रणाली नहीं है।

क्षेत्र में शाखाओं का विस्तार

सुधारोत्तर काल में पूर्वोत्तर क्षेत्र में शाखाओं का व्यापक विस्तार हुआ है। बैंकिंग परिवर्तन में काफी बदलाव आया है। सार्वजनिक और निजी

तालिका-1

पूर्वोत्तर क्षेत्र में शाखा विस्तार और शेष भारत से उसकी तुलना

31 मार्च को समाप्त वर्ष	पूर्वोत्तर क्षेत्र में वाणिज्यिक बैंकों की शाखाओं की संख्या	शेष भारत में वाणिज्यिक बैंकों की शाखाओं की संख्या
2003	1915	—
2004	1920	67,313
2005	1952	68,339
2006	2027	69,417
2007	2076	71,781
2008	2051	76,891
2009	2133	80,369

स्रोत : भारत में बैंकिंग की प्रवृत्ति एवं प्रगति पर भारतीय रिजर्व बैंक की रिपोर्ट, 1996 से 2009

तालिका-2

क्षेत्र में बैंकों की शाखाओं का वितरण		
राज्य	2008	2009
अरुणाचल प्रदेश	73	76
असम	1,331	1,382
मणिपुर	77	80
मेघालय	190	201
मिज़ोरम	91	93
नगालैंड	82	86
त्रिपुरा	207	215

स्रोत : एनईडीएफआई, 2008-2009

दोनों प्रकार के बैंकों की अनेक नवी शाखाएं इस क्षेत्र में खुली हैं। हाल के दिनों में विदेशी बैंकों की शाखाओं ने भी इस क्षेत्र में प्रवेश किया है, हालांकि उनकी संख्या बहुत कम है।

ऋण जमा अनुपात

1992 में बैंकों पर से पार्बद्धियां हटाने के बाद से, भारतीय बैंकों ने अपनी सेवाओं और उत्पादों को सुधार कर और उनके लिए वैकल्पिक बाजारों की तलाश कर वैश्वीकरण और बाजारों के विनियंत्रण की चुनौतियों का उचित जवाब दिया

है। परंतु पूर्वोत्तर क्षेत्र में काम कर रही बैंकों के प्रदर्शन पर सरसरी नज़र डालने से पता चलता है कि इन बैंकों का निष्पादन राष्ट्रीय स्तर पर उनके कुल प्रदर्शन से काफी कम है। उदाहरण के लिए, पूर्वोत्तर क्षेत्र में बैंकों का सीडी (ऋण जमा) अनुपात केवल 35.8 है जबकि राष्ट्रीय स्तर पर यह अनुपात 72.5 है। इसी प्रकार, क्षेत्र में निवेश और ऋण जमा अनुपात मिलाकर 50.3 है जबकि राष्ट्रीय स्तर की कसौटी 2008 में 79.2 थी।

प्रति शाखा जनसंख्या

जैसाकि पूर्व में बताया गया है कि आर्थिक विकास और समृद्धि में बैंकों की भूमिका महत्वपूर्ण होती है। कुशल और प्रभावी बैंकिंग प्रणाली किसी भी अर्थव्यवस्था के समग्र विकास में अग्रणी भूमिका निभाती है। संतुलित आर्थिक विकास और प्रगति में भी इसकी अहम भूमिका होती है। जिस देश में और सभी भागों और क्षेत्रों में बैंकों की अच्छी सेवाएं उपलब्ध होती हैं, उसके विकास में संतुलन बना रहता है। इस पुष्टभूमि में, यह कहा जा सकता है कि क्षेत्र में बैंकों की शाखाओं का विशेषकर सुधारों के बाद,

तालिका-4

पूर्वोत्तर क्षेत्र में ऋण जमा अनुपात		
31 मार्च को समाप्त वर्ष	पूर्वोत्तर क्षेत्र	शेष भारत
1995	35.6	75
1996	34.5	74.4
1997	—	—
1998	29.9	72.6
1999	28.9	55.6
2000	28.1	61.9
2001	27.6	55.2
2002	26.9	54.8
2003	27.4	56
2004	29.8	56.7
2005	35.0	62.3
2006	39.3	59.2
2007	40.7	58.2
2008	40.7	66
2009	35.8	72.5

स्रोत : भारत में बैंकिंग की प्रवृत्ति और प्रगति पर आरबीआई रिपोर्ट, 1995 से 2009

तालिका-3

राज्य और जनसंख्या समूह के अनुसार बैंकिंग केंद्रों का वितरण							
राज्य	ग्रामीण शाखाएं		अर्धशहरी शाखाएं		शहरी शाखाएं		सभी केंद्र
अरुणाचल प्रदेश	47	47	10	10	0	0	57
असम	706	706	67	67	6	6	779
मणिपुर	35	33	13	13	2	2	50
मेघालय	114	115	12	12	2	2	50
मिज़ोरम	55	56	8	8	1	1	64
नगालैंड	32	32	1	1	0	0	33
त्रिपुरा	96	97	24	24	1	1	121

स्रोत : भारतीय रिजर्व बैंक

तालिका-5

क्षेत्रवार तुलना जनसंख्या प्रति शाखा							
प्रत्येक बैंक शाखा औसत जनसंख्या (हज़ारों में)	पूर्वोत्तर क्षेत्र	उत्तरी क्षेत्र	दक्षिणी क्षेत्र	मध्य क्षेत्र	पूर्वी क्षेत्र	पश्चिमी क्षेत्र	संपूर्ण भारत
2004	22	13	13	20	20	15	16
2005	22	13	12	20	20	15	16
2006	22	13	12	20	20	15	16
2007	22	13	12	20	20	15	16
2008	21	12	11	19	19	14	15

स्रोत : भारत में बैंकिंग की प्रवृत्ति एवं प्रगति पर आरबीआई रिपोर्ट, 2008

तालिका-6

पूर्वोत्तर क्षेत्र में अनुसूचित वाणिज्यिक बैंकों में कुल जमा राशि

वर्ष	जमा (करोड़ रु. में)
2003	21,606
2004	24,768
2005	28,958
2006	34,334
2007	41,880

स्रोत : आरबीआई, भारत में बैंकों से संबंधित सांख्यिकीय सारणियां

व्यापक विस्तार होने के बावजूद, क्षेत्र के अनेक हिस्सों में अभी भी पर्याप्त बैंकिंग सुविधाएं उपलब्ध नहीं हो पाई हैं। बैंकों की शाखाओं का भारी केंद्रीकरण है, जिसके कारण अन्य सभी क्षेत्रों की तुलना में इस क्षेत्र में प्रति शाखा जनसंख्या सबसे ज्यादा है। जनसंख्या के अनुपात में शाखाएं कम हैं।

क्षेत्र में पैसे जमा करने हेतु लोगों को प्रोत्साहित करना

बैंकों की कार्यकुशलता मापने का एक महत्वपूर्ण पैमाना बैंक में पैसा जमा करने के लिए लोगों को प्रोत्साहित करना होता है। इसी से

क्षेत्र में कुल जमा राशि को संतोषप्रद नहीं कहा जा सकता। वर्ष 2009 के आंकड़ों के अनुसार, क्षेत्र में कुल 13,41,82,922 लाख रुपये जमा हुए हैं जोकि शेष भारत की कुल जमा राशि का मात्र 2.3 प्रतिशत है। क्षेत्र में जमा राशि का विवरण निम्नलिखित है :

तालिका-7

पूर्वोत्तर क्षेत्र में अनुसूचित वाणिज्यिक बैंकों द्वारा ऋण प्रदाय

वर्ष	ऋण (करोड़ रु. में)
2003	5,692
2004	7,315
2005	10,010
2006	13,585
2007	17,162

स्रोत : आरबीआई, भारत में बैंकों से संबंधित सांख्यिकीय सारणियां

क्षेत्र में ऋण-प्रदाय

क्षेत्र में जमा राशि के संग्रह और ऋण प्रदाय के बीच काफी बड़ा अंतर है। परंतु, क्षेत्र के विभिन्न भागों में वाणिज्यिक गतिविधियों की वृद्धि के फलस्वरूप बढ़ते औद्योगिकरण और

ऋण का क्षेत्रवार वितरण

यह एक स्थापित तथ्य है कि किसी देश अथवा क्षेत्र का बहुमुखी विकास तभी संभव है जब अर्थव्यवस्था के सभी क्षेत्र समान रूप से समृद्ध हों। विभिन्न क्षेत्रों को वित्तीय और गैर-वित्तीय सहायता देकर बैंक इस संबंध में महत्वपूर्ण योगदान करते हैं। पूर्वोत्तर क्षेत्र में भी बैंक विभिन्न क्षेत्रों को वित्तीय सहायता आवंटित करने में समान रूप से जुड़े हुए हैं।

निष्कर्ष

वित्तीय क्षेत्र, विशेषकर बैंकिंग क्षेत्र में तेज़ी से हो रहे सुधारों के कारण इस क्षेत्र की पूरी दिशा और दशा ही बदल गई है। बैंक अब पहले की तुलना में कामकाज में अधिक उन्नत, प्रौद्योगिकी से लैस, ठोस नीतियों और सिद्धांतों से प्रेरित होकर काम कर रहे हैं। भारतीय बैंक अब किसी भी प्रकार के संकट का सामना करने में समर्थ हैं और उनमें नवाचार की प्रक्रिया सतत जारी है। परंतु इस क्षेत्र में बैंकों के कामकाज पर सरसरी नज़र डालें तो पता चलता है कि राष्ट्रीय स्तर पर यद्यपि बैंकों ने वैश्वीकरण और उदारीकरण की अपरिवर्तनीय प्रक्रिया की चुनौती का डटकर सामना किया है लेकिन पूर्वोत्तर क्षेत्र में अनेक मामलों में इनका प्रदर्शन कमज़ोर रहा है। चूंकि इस क्षेत्र का आर्थिक

तालिका-8

वर्ष	कृषि हेतु ऋण			लघु उद्योगों, औद्योगिक क्षेत्रों और सड़क एवं जल परिवहन संचालकों को ऋण प्रदाय	
	उर्वरक और अन्य सामग्री के वितरण हेतु वित्त	राज्य विद्युत बोर्ड को ऋण	अन्य प्रकार की परोक्ष सहायता	लघु उद्योगों को ऋण	औद्योगिक क्षेत्रों की स्थापना और सड़क एवं जल परिवहन संचालकों हेतु ऋण
2006	23	20	87	757	2
2007	29	39	91	1153	3

स्रोत : आरबीआई, भारत में बैंकों से संबंधित सांख्यिकीय सारणियां

आमतौर पर वित्तीय हस्तक्षेप की प्रक्रिया में बैंकों की भागीदारी तय होती है। इसी से बचत को बढ़ावा देने में बैंकों के योगदान का पता चलता है। सुधारों के बाद बैंक इस क्षेत्र में लोगों को बचत के लिए प्रेरित करने के काम में सक्रियता से जुटे हैं। इस प्रकार से जमा राशि को उत्पादक कार्यों में लगाने के लिए भी वे तेज़ी से काम कर रहे हैं। क्षेत्र के उद्यमी निवेशकों को इससे बड़ी मदद मिली है। इस दिशा में हुई उल्लेखनीय प्रगति का श्रेय क्षेत्र में सक्रिय अग्रणी बैंकों को भी जाता है। परंतु अन्य क्षेत्रों की तुलना में इस

उद्यमिता के कारण हाल के वर्षों में ऋण की मांग में काफी सुधार आया है। सरकार प्रायोजित विभिन्न योजनाओं के कारण भी बैंक ऋण की मांग में पर्याप्त वृद्धि हुई है। इसके बावजूद, राष्ट्रीय स्तर की तुलना में इस क्षेत्र का औसत प्रदर्शन काफी कम रहा है। उदाहरणार्थ वर्ष 2009 के आंकड़ों के अनुसार इस क्षेत्र में अभी तक कुल 5,03,35,537 लाख रुपये का ऋण प्रदान किया गया है, जोकि अखिल भारतीय स्तर पर कुल ऋण का मात्र 20.8 प्रतिशत है।

विकास बहुत कुछ बैंकिंग क्षेत्र पर ही निर्भर है। सरकार, नीति निर्माताओं और अन्य सक्षम अधिकारियों के लिए यह आवश्यक हो जाता है कि वे कुछ ऐसा प्रयास करें कि बैंक इस क्षेत्र में अन्य क्षेत्रों के समान क्षमता से काम करें ताकि पूर्वोत्तर क्षेत्र की अर्थव्यवस्था को राष्ट्रीय मुख्यधारा की अर्थव्यवस्था से जोड़ा सके और क्षेत्र के साथ-साथ समूचे देश को लाभ हो। □

(लेखिका असम विश्वविद्यालय, सिलचर स्थित स्कूल ऑफ मैनेजमेंट स्टडीज़ के वाणिज्य संकाय में सहायक प्रोफेसर हैं। ई-मेल : joyeeta-shg@yahoo.com)

पूर्वोत्तर हेतु संसाधनों का केंद्रीय पूल

● देवेंद्र उपाध्याय

केंद्रीय मंत्रिमंडल ने पूर्वोत्तर राज्यों के सर्वांगीण विकास के लिए 15 दिसंबर, 1997 को संसाधनों के केंद्रीय पूल के गठन को स्वीकृति दी थी। इस केंद्रीय पूल को संसाधनों हेतु कभी खत्म न होने वाला केंद्रीय पूल (एनएलसीपीआर) नाम दिया गया। इसका उद्देश्य पूर्वोत्तर राज्यों के ढांचागत विकास हेतु बजटीय आवंटन की गति को विभिन्न नयी ढांचागत परियोजनाओं के माध्यम से तेज़ करना है। आर्थिक एवं सामाजिक क्षेत्रों, ऊर्जा, सड़क और पुल, शिक्षा, स्वास्थ्य, जल आपूर्ति और खेलों को बढ़ावा देने के लिए केंद्रीय पूल से सहायता ली जाती है।

केंद्रीय पूल से केंद्रीय क्षेत्र की परियोजनाओं के अलावा राज्य क्षेत्र की परियोजनाओं के लिए भी राशि जारी की जाती है। 31 मार्च, 2009 तक केंद्रीय पूल की इस योजना के अंतर्गत 982 परियोजनाओं के निर्माण हेतु राशि जारी की गई तथा 42 परियोजनाओं को बीटीसी क्षेत्र के विशेष पैकेज के रूप में मंजूरी दी गई।

अप्रैल 1998 से, जब यह केंद्रीय पूल योजना शुरू हुई थी, मार्च'09 तक उक्त परियोजनाओं के लिए 5,742.68 करोड़ रुपये की राशि जारी की गई है। वर्ष 2007-08 से बोडो क्षेत्रीय परिषद बीटीसी क्षेत्र परियोजनाओं के लिए अलग बजट की व्यवस्था का प्रावधान किया गया। इसके अंतर्गत वर्ष 2007-08 में 100 करोड़ रुपये और 2008-09 में 67.03 करोड़ रुपये की राशि जारी की गई। परियोजनाओं के क्रियान्वयन के लिए इसमें एनएलसीपीआर और बीटीसी क्षेत्र परियोजनाएं शामिल हैं। लागत

के रूप में 7,766.12 करोड़ रुपये मंजूर किए गए।

पूर्वोत्तर क्षेत्र विकास मंत्रालय, भारत सरकार की वार्षिक रिपोर्ट 2008-09 में इन परियोजनाओं, उनके लिए मंजूर की गई तथा जारी की गई राशि के विस्तृत आकड़े दिए गए हैं। कुल 1,024 परियोजनाओं के लिए 31 मार्च, 2009 तक 7,766.12 करोड़ रुपये जारी किए गए हैं। जिनमें अरुणाचल प्रदेश को 1,036.48 करोड़ रुपये; असम को 2,011.58 करोड़ रुपये (बीटीसी क्षेत्र को 37 परियोजनाओं की कुल लागत 439.02 करोड़ सहित); मणिपुर 914.19 करोड़ रुपये; मेघालय 570.09 करोड़ रुपये; मिजोरम 650.59 करोड़ रुपये; नगालैंड 940.54 करोड़ रुपये; सिक्किम 636 करोड़ रुपये और त्रिपुरा 948 करोड़ रुपये शामिल हैं। सभी राज्यों के लिए 21.41 करोड़ रुपये तथा बीटीसी परियोजनाओं के अंतर्गत 37.24 करोड़ रुपये भी कुल जारी की गई राशि में शामिल है।

पूर्वोत्तर राज्यों के लिए विभिन्न मंत्रालयों एवं विभागों की केंद्रीय योजना में बजटीय प्रावधान वर्ष 1998-99 से 3,211 करोड़ रुपये था जो वर्ष 2008-09 में 15,526.82 करोड़ रुपये पर पहुंच गया। पूर्वोत्तर क्षेत्र विकास मंत्रालय ने 31 मार्च, 2009 तक 85 परियोजनाओं को मंजूरी दी।

वित्तीय वर्ष 2008-09 में एनएलसीपीआर के अंतर्गत अरुणाचल प्रदेश की 39 परियोजनाओं के लिए 16,597.77 लाख रुपये; असम की 46 परियोजनाओं के लिए 9,437.75 लाख रुपये; मणिपुर की 22 परियोजनाओं के लिए

8,435.68 लाख रुपये; मेघालय की 27 परियोजनाओं के लिए 9,482.69 लाख रुपये; मिजोरम की 9 परियोजनाओं के लिए 1,494.52 लाख रुपये; नगालैंड की 26 परियोजनाओं के लिए 10,380.71 लाख रुपये सिक्किम की 18 परियोजनाओं के लिए 6,290.77 लाख रुपये तथा त्रिपुरा की 10 परियोजनाओं के लिए 66,038.98 लाख रुपये की राशि जारी की गई। पूर्वोत्तर के सभी राज्यों के लिए जारी कुल राशि 66,038.98 लाख रुपये थी। वर्ष 2008-09 में अरुणाचल के लिए 13; असम (बीटीसी समेत) 21, मणिपुर 10; मेघालय 9; मिजोरम 5; नगालैंड 15, सिक्किम 9 तथा त्रिपुरा के लिए 3 परियोजनाएं केंद्रीय पूल के अंतर्गत मंजूर की गई। इन 85 परियोजनाओं की स्वीकृत लागत 954.53 करोड़ रुपये है। इस अवधि के दौरान अरुणाचल और सिक्किम में एक-एक, असम में तीन तथा मणिपुर में 4 परियोजनाएं केंद्रीय पूल के अंतर्गत पूरी हुई जिनकी स्वीकृत लागत राशि 109.12 करोड़ रुपये थी।

पूर्वोत्तर में जिस विकास योजना

पूर्वोत्तर क्षेत्र में रबड़ विकास की योजना रबड़ बोर्ड द्वारा तैयार की गई जिसे 11वीं पंचवर्षीय योजना से लागू किया जा रहा है। इसमें 25 हजार हेक्टेयर में नये पौधे लगाने तथा 1,750 हेक्टेयर क्षेत्र के पुराने रबड़ के वृक्षों के स्थान पर नये पौधे लगाने का प्रावधान किया गया है। पूर्वोत्तर राज्यों में रबड़ विकास की योजना हेतु 11वीं योजना प्रारूप में 118.10 करोड़ की प्रस्तावित राशि को बढ़ाकर 180.13

करोड़ रुपये कर दिया गया।

भारत सरकार ने त्रिपुरा में अनानास, सिक्किम में फलोरीकल्चर, आर्चिड एवं चेरी, पीपर तथा अदरक और असम में ताजा एवं प्रसंकृति अदरक के लिए कृषि निर्याज क्षेत्र स्थापित करने की मंजूरी दी थी, जो अब कार्य कर रहे हैं।

एपीडा ने असम औद्योगिक विकास निगम को अदरक के निर्यात के लिए पैकिंग हाउस और चार संग्रह केंद्र स्थापित करने के लिए 594 लाख रुपये मंजूर किए हैं, जिसके लिए 157 लाख रुपये जारी किए जा चुके हैं। चंफई (मिज़ोरम) में एकीकृत पैकिंग हाउस सुविधा की स्थापना हेतु एपीडा ने 320.36 लाख रुपये की वित्तीय सहायता की मंजूरी दी है तथा मिज़ोरम में दो और प्रस्ताव मिले हैं।

छोटे चाय उत्पादकों की सहायता के लिए 10वीं पंचवर्षीय योजना में शुरू स्कीम को 11वीं योजना में भी जारी रखा गया है। अब इसमें मिनी फैक्टरी के लिए सहायता का प्रावधान भी किया गया है।

पूर्वोत्तर क्षेत्रों में 11वीं पंचवर्षीय योजना में काफी विस्तार की योजनाओं के बारे में अनेक कदम उठाए गए हैं।

परियोजनाओं को समर्थन

भारत सरकार ने वर्ष 2005-06 में 12वें वित्त आयोग की सिफारिशों को स्वीकार करते हुए राज्य सरकारों को केवल अनुदान का एक हिस्सा ज्ञारी करने का फ़ैसला किया था। वर्ष 2008-09 में एनएलसीपीआर के लिए 650 करोड़ रुपये का बजटीय प्रावधान आशिक अनुदान के रूप में किया गया। ढांचागत विकास परियोजनाओं के लिए बोडो क्षेत्रीय परिषद (बीटीसी) क्षेत्र में एक करोड़ रुपये का प्रावधान अलग से किया गया। 31 मार्च, 2009 की स्थिति के अनुसार एनएलसीपीआर के अंतर्गत 660.38 करोड़ रुपये तथा बीटीसी क्षेत्र के लिए 67.03 करोड़ रुपये जारी किए जा चुके थे।

एनएलसीपीआर समिति की सिफारिश पर 1,750.92 करोड़ रुपये लागत की 195 परियोजनाएं तकनीकी आर्थिक जांच हेतु वर्ष 2008-09 में विचारार्थ थी। इसके अलावा इस अवधि में 954.53 करोड़ रुपये लागत की 85 परियोजनाएं मंजूर की गईं।

भारत सरकार, असम सरकार और बोडो आंदोलनकारियों के साथ फरवरी 2003 में

हुए त्रिपक्षीय समझौते के अंतर्गत वर्ष 2004-05 से 2008-09 तक 476.26 करोड़ रुपये की लागत की 42 परियोजनाओं को मंजूरी दी गई।

प्रधानमंत्री डॉ. मनमोहन सिंह ने जुलाई 2008 में एनईआर विज्ञन-2020 जारी किया था, जिसमें लक्ष्य निर्धारित किए गए हैं तथा चुनौतियों की पहचान कर पूर्वोत्तर क्षेत्र में शांति एवं समृद्धि के लिए विभिन्न क्षेत्रों में रणनीति लागू करने के सुझाव शामिल हैं।
लुक ईस्ट पॉलिसी (पूरब चलो नीति)

विदेश मंत्रालय ने दक्षिण-पूर्व एशिया के देशों के संगठन एएसईएन के साथ सहयोग कर पूर्वोत्तर राज्यों के लिए वर्ष 1990 से लुक ईस्ट पॉलिसी शुरू की है। इसका उद्देश्य व्यापार और निवेश में नये अवसरों का लाभ उठाना है।

कई पूर्वोत्तर राज्यों की सीमाएं चीन, बांग्लादेश और म्यांमा से मिलती हैं। इन राज्यों में अनेक सीमावर्ती विकास परियोजनाएं संचालित की जा रही हैं ताकि पूर्वोत्तर राज्यों को लाभ मिल सके। □

(लेखक स्वतंत्र पत्रकार हैं)

योजना आगामी अंक

जनवरी 2010 • गणतंत्र विशेषांक

भारतीय गणतंत्र अपने 60वें वर्ष में प्रवेश कर रहा है। 60 वर्ष की इस यात्रा में हमारी उपलब्धियां क्या-क्या रही हैं? कहां-कहां हम पीछे रह गए? इस मौके पर विभिन्न क्षेत्रों के विशेषज्ञों के गहन और बेबाक विश्लेषण और लाभ-हानि खाते के साथ योजना आपके सम्मुख उपस्थित होगा।

फरवरी 2010

योजना का फरवरी 2010 अंक बैकिंग क्षेत्र के बहुआयामी विकास और उसके सम्मुख खड़ी चुनौतियों पर केंद्रित होगा।

पूर्वोत्तर भारत में अंतर्देशीय जल परिवहन

● अरविंद कुमार सिंह

अरुणाचल प्रदेश, असम, मणिपुर, मेघालय, मिजोरम, नगालैंड, सिक्किम और त्रिपुरा जैसे भारत के पूर्वोत्तर क्षेत्र के राज्यों को प्रकृति का प्रचुर वरदान प्राप्त है। प्राकृतिक संपदा से भरपूर इन राज्यों में सांस्कृतिक संपन्नता भी खूब है। पूर्वोत्तर के राज्यों का दायरा 2,55,083 वर्ग किलोमीटर के विशाल क्षेत्र में फैला हुआ है। इसी इलाके में दार्जिलिंग तथा शिलांग जैसे विश्वविख्यात पर्यटन स्थल और काजीरंगा तथा मानस जैसे राष्ट्रीय अभयारण्य भी हैं। गुवाहाटी, जोरहाट, शिवसागर, बोमडिला, गंगटोक, हाफलंग, औरंग, जाटिंगा, तवांग तथा चेरापूंजी जैसे इलाके पर्यटकों की खास पसंद भी हैं। यही नहीं जगह-जगह यहां पर्यटक स्थलों की भरमार तो है ही वन्य जंतु तथा समृद्ध हस्तशिल्प भी यहां देश-दुनिया को अपनी ओर खींचती हैं।

साथ ही चीन, बर्मा, भूटान तथा बांग्लादेश की सीमाएँ भी पूर्वोत्तर के राज्यों से लगती हैं, लिहाज़ा इन इलाकों का सामरिक महत्व भी है। लेकिन विकास के तमाम सोपानों तथा नयी योजनाओं और संसाधनों के आवंटन के बाद भी देश के कई क्षेत्रों की तुलना में अभी भी पूर्वोत्तर का इलाक़ा पिछड़ा हुआ है। लेकिन धीरे-धीरे इन इलाकों में परिवहन साधनों का ज्ञाल मज़बूती से फैल रहा है। खासतौर पर वर्ष 2004 के बाद पूर्वोत्तर के विकास को पर्ख लग गए हैं। यहां रेल सुविधाओं का विकास हो रहा है तथा राष्ट्रीय जलमार्ग संख्या-2 भी विकसित हो रहा है। कठिन पहाड़ी भूभाग होने के कारण खासतौर पर रेल और सड़क सुविधाओं के विस्तार में यहां काफी लागत आती है। इसके साथ ही बाढ़, भूस्खलन और अन्य प्राकृतिक आपदाओं के साथ कई क्षेत्रों में उग्रवाद की समस्या के चलते भी विकास परियोजनाएँ बाधित होती हैं।

अभी पूर्वोत्तर के राज्य मुख्यतया सड़क परिवहन पर ही निर्भर हैं। इन इलाकों में क्रीब 82,000 किलोमीटर से अधिक सड़कों का ज्ञाल बिछा है। पर इनमें से 56,000 किलोमीटर सड़कें कच्ची हैं। इन पर बड़ा माल परिवहन नहीं चलाया जा सकता। इन सड़कों में भी 35,000 किलोमीटर से अधिक सड़कें असम में और क्रीब 15,000 किलोमीटर सड़कें अरुणाचल प्रदेश में पड़ती हैं। इसी तरह रेल नेटवर्क भी असम को छोड़कर अन्य राज्यों में विकसित नहीं हो सका है। ऐसी स्थिति में पूर्वोत्तर के राज्यों में जल परिवहन तंत्र के विकास को और ठोस दिशा देने की दिशा में पहल करना अपेक्षित है। आजादी के पूर्व पूर्वोत्तर की धमनी जल परिवहन तंत्र ही हुआ करता था। इसके माध्यम से न केवल बड़ी संख्या में यात्री गंतव्य तक पहुंचते थे, बल्कि काफी मात्रा में माल दुलाई भी होती थी। इसी तरह सेनाओं के संचालन के लिए भी अंतर्देशीय जल परिवहन पर ही मुख्य निर्भरता थी। वर्ष 1842 से ब्रह्मपुत्र नदी पर भाप से चलने वाले स्टीमरों की शुरुआत के बाद यहां आवागमन की गति और तेज़ हो गई थी। इसी दौरान प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में हुई तमाम तरक़क़ी ने अंतर्देशीय जल परिवहन तंत्र को प्रभावित करना शुरू किया और रेल और रेलों का वर्चस्व होता गया। हालांकि यूरोप, अमरीका, चीन तथा पड़ोसी बांग्लादेश में अभी भी काफी मात्रा में दुलाई अंतर्देशीय जल परिवहन तंत्र से हो रही है। भारत के पूर्वोत्तर इलाकों में इसकी प्रचुर संभावनाएँ बनी हुई हैं। बीते कुछ सालों से जल परिवहन क्षेत्र की दिशा में केंद्र और पूर्वोत्तर की राज्य सरकारों ने ध्यान देना शुरू किया है। पूर्वोत्तर भारत में कई छोटी-बड़ी नदियां हैं। इनमें कई ऐसी हैं जिनका नौवहन में महत्वपूर्ण

योगदान हो सकता है। ये नदियां आदिकाल से पूर्वोत्तर की जीवनरेखा रही हैं। खासतौर पर ब्रह्मपुत्र तो अग्रेज़ी राज में रेलों के विकास के बाद भी महत्वपूर्ण परिवहन का साधन रही थी। इसी के माध्यम से प्रमुख माल की दुलाई कोलकाता तक होती थी और बाहर से यहां माल पहुंचता था। अगर राज्य सरकारों की ओर से थोड़ा गंभीर प्रयास किया जाए तो क्रीब 4,000 किलोमीटर मार्गों पर फेरी सेवाएं चलाई जा सकती हैं और इसके मार्फत सड़कों और रेलों पर दबाव कम किया जा सकता है। इसके साथ ही इनमें से क्रीब 1,800 किलोमीटर जलमार्ग पर स्टीमर और बड़ी देसी नावें चलाई जा सकती हैं और काफी बड़ी मात्रा में माल परिवहन संभव हो सकता है। अभी इन व्यापक संभावनाओं का दोहन बहुत सीमित मात्रा में किया जा सका है। इस क्षेत्र में राष्ट्रीय जलमार्ग संख्या-2 धीरे-धीरे विकास की नदी गाथा लिख रहा है। असम में ब्रह्मपुत्र नदी, सादिया और धुबरी के मध्य क्रीब 891 किलोमीटर के लंबे दायरे में इस राष्ट्रीय जलमार्ग का विस्तार है। इसे 26 दिसंबर, 1988 को राष्ट्रीय जलमार्ग घोषित किया गया था। इसका प्रबंधन भारतीय अंतर्देशीय जलमार्ग प्राधिकरण के अधीन है जिसने बीते सालों में यहां आधारभूत सुविधाओं के विकास के लिए काफी कार्य किया है। इसी तरह बराक नदी को राष्ट्रीय जलमार्ग घोषित करने संबंधी बिल भी संसद में पेश किया जा चुका है। इसके साथ ही विकास का एक नया दौर शुरू होने की संभावना व्यक्त की जा रही है।

लेकिन राष्ट्रीय जलमार्ग संख्या-2 को छोड़कर बाकी जलमार्गों पर आधारभूत सुविधाओं की कमी है। इस क्षेत्र का अगर सलीक़े से और विकास हो जाए और जलमार्गों के आधुनिकीकरण

पूर्वोत्तर में नौवहन योग्य नदियां

नदियों का नाम	नौवहन योग्य नदियों की लंबाई (किमी में)
ब्रह्मपुत्र	891
बरीढ़ींग	161
कटकहल	161
सुबनसिरी	143
बराक	140
दिहांग	129
कोलोंग	121
गंगाधर	113
कोलोडीने	112
पांछर	105
कपाली	103
अन्य नदियां	2,012
कुल लंबाई	4,191

के साथ सभी सुविधाओं से संपन्न कर दिया जाए तो काफी संख्या में रोजगार की संभावनाएं भी विकसित हो सकती हैं और कुल माल और यात्री परिवहन में इसकी हस्सेदारी बहुत अधिक बढ़ सकती है। इतना ही नहीं इसकी मदद से पूर्वोत्तर की पर्यटक संभावनाओं को पंख लग सकते हैं, क्योंकि कूज़ नदी के माध्यम से भी

बड़ी संख्या में पर्यटकों को इस तरफ खींचा जा सकता है। पूर्वोत्तर क्षेत्र में नौवहन योग्य नदियां निम्न हैं :

इन आंकड़ों से साफ़ है कि पूर्वोत्तर भारत में जल परिवहन की असीम संभावनाएं हैं। इनमें माल परिवहन, रात्रि नौका, नदी पोत विहार, जल क्रीड़ा तथा पर्यटन संबंधी कार्यकलापों को और गति दी जा सकती है। बराक नदी के बारे में तो संभाव्यता अध्ययन भी कराए जा चुके हैं। मिज़ोरम में भी इसकी व्यापक संभावनाएं हैं। आजादी के पहले चटगांव और देमागिरी के बीच बहुत सुंदर संपर्क कर्णफूली नदी के माध्यम से जलमार्ग ढारा बना हुआ था। इसी तरह से ब्रह्मपुत्र की सहायक लोहित, धनश्री और सुबनसिरी, त्रिपुरा की गुमटी और हौरा, नगालैंड की तिजू और मिज़ोरम की कोलोडीन नदियां भी माल और यात्री यातायात में प्रमुख भूमिका निभाने की संभावनाएं रखती हैं। पूर्वोत्तर परिषद के तीसरे क्षेत्रीय सम्मेलन (गुवाहाटी, 9 से 11 मार्च, 2007) में भी अंतर्देशीय जल परिवहन पर विशेष चर्चा की गई थी और इसके कार्यकरण की समीक्षा के साथ केंद्र सरकार से अनुरोध किया गया था कि बराक नदी को भी राष्ट्रीय जलमार्ग घोषित करने की

प्रक्रिया तेज़ की जाए।

जहां तक असम का सवाल है तो जल परिवहन के क्षेत्र में यह राज्य आज भी महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहा है और केंद्र सरकार के प्रयासों के साथ असम सरकार का अंतर्देशीय जल परिवहन निदेशालय भी काफी कार्य कर रहा है। असम पूर्वोत्तर के राज्यों का प्रवेशद्वारा होने के साथ ही इन इलाकों के लिए काफी समय से संचार और परिवहन का केंद्र बना रहा है। असम के विभिन्न इलाके रेल सेवा से भी जुड़े हुए हैं। यहां ब्रह्मपुत्र और बराक दो बेहद महत्वपूर्ण नदियां हैं। इन पर केंद्रीय अंतर्देशीय जलमार्ग निगम और अंतर्देशीय जलमार्ग निदेशालय वाणिज्यिक आधार पर जल परिवहन सेवाएं संचालित करता है। इन सेवाओं का उपयोग यात्रियों और वस्तुओं के परिवहन में किया जाता है। यहां से कोयला, उर्वरक, बनोत्पाद, कृषि उत्पादों और मशीनरी आदि की आवाजाही होती है। यहां से चटगांव बंदरगाह (बांगलादेश) तथा कोलकाता और हल्दिया बंदरगाह के मध्य भी सीधा संपर्क है।

इन इलाकों में आपदाएं आती रहती हैं। भूखलन और अन्य आपदाओं के साथ बाढ़ आदि के दौरान खासतौर पर मानसून में काफी

सिक्किम में रेल संपर्क

हाल के वर्षों में पूर्वोत्तर में कई रेल परियोजनाओं को गति प्रदान की गई है। उत्तर पूर्वी क्षेत्र विकास मंत्रालय बन जाने के बाद परिवहन-तंत्र और खासतौर पर रेलों के विकास पर खास ध्यान दिया जा रहा है। केंद्रीय मंत्रालयों तथा विभागों से पूर्वोत्तर और सिक्किम के लाभार्थ योजनाओं व परियोजनाओं पर अपने बजट का कम-से-कम 10 प्रतिशत खर्च करना अपेक्षित है। प्रधानमंत्री की पहल के तहत वर्ष 1996 में पूर्वोत्तर क्षेत्र के समग्र विकास को नयी दिशा प्रदान की गई थी। 13 जुलाई, 1996 को पूर्वोत्तर के सांसदों के साथ हुई बैठक के बाद रेल योजनाओं को बजट में शामिल किया गया। इस समय घाटे का सौदा होने के बावजूद पूर्वोत्तर में 7 नयी लाईन तथा आमान परिवर्तन परियोजनाएं चालू हैं। सिक्किम में पहले रेल संपर्क की आधारशिला भी हाल में उपराष्ट्रपति ने रख दी है।

देश के पूर्वोत्तर राज्यों को रेल सेवाएं प्रदान करने का काम पूर्वोत्तर सीमा रेलवे करती है। पश्चिम बंगाल तथा बिहार के कुछ हिस्सों के साथ ही पूर्वोत्तर सीमा रेलवे सिक्किम को भी सेवा प्रदान करती है। इतना ही नहीं तीन पड़ोसी देशों को जोड़ने में भी यह रेलवे ज्ञान सूत्र बनता है। इस रेलवे की कई खुबियां हैं, मसलन इसी क्षेत्र में दुनिया में सबसे ऊंचाई पर बना रेल आरक्षण केंद्र थेगू जाएगी।

(सिक्किम) है। फिर भी सिक्किम के लोगों को इस बात का दर्द सताता रहा था कि उस राज्य को अभी भी रेल से जुड़ना शेष है। लेकिन अब सिक्किम भी रेल विकास की मुख्यधारा में शामिल हो गया है।

हाल में उपराष्ट्रपति हामिद अंसारी ने सिक्किम में रेंगपो और पश्चिम बंगाल की सीमा पर स्थित सिवोक के मध्य नयी बड़ी लाईन की आधारशिला रखी। इस अवसर पर रेलमंत्री ममता बनर्जी भी उपस्थित थीं। क्रीब 52.7 किलोमीटर लंबी इस रेल लाईन पर 1,339.48 करोड़ रुपये खर्च होना है। इस परियोजना को राष्ट्रीय परियोजना घोषित किया गया है। इसके लिए 75 प्रतिशत राशि रेल मंत्रालय तथा 25 प्रतिशत राशि भारत सरकार के वित्त मंत्रालय द्वारा मुहैया कराई जाएगी। योजना आयोग द्वारा पूर्व में ही सिवोक-रेंगपो रेल लाईन के निर्माण पर सिद्धांत रूप में सहमति मिल गई थी। इसके साथ ही रेंगपो से गंगटोक के बीच 69 किलोमीटर लंबी लाईन के विस्तार के लिए भी सर्वेक्षण कार्य पूरा कर लिया गया है और सर्वे रिपोर्ट रेल मंत्रालय के विचाराधीन है। अगर इस पर कार्य शुरू होगा तो वह दूर नहीं जब यहां की राजधानी भी रेल से सीधे जुड़ जाएगी। □

दिक्कतें आती हैं, ऐसे में जल परिवहन ही एकमात्र रास्ता बचता है। देश के अन्य हिस्सों से माल परिवहन का एकमात्र साधन नदियां ही होती हैं। यहाँ से अनिवार्य वस्तुओं की आपूर्ति की जाती है। इसके साथ ही ईंधन की कम खपत, पर्यावरण अनुकूलता तथा प्रभावी लागत आदि कारणों से रेल और सड़क परिवहन के मुकाबले यह क्षेत्र काफी उपयोगी बन सकता है। इस दिशा में जागरूकता भी अपेक्षित है। असम में भी कई दुर्गम इलाकों में परिवहन का सबसे उपयुक्त साधन जल यातायात ही है। असम सरकार के अंतर्देशीय जल परिवहन निदेशालय की ओर से ब्रह्मपुत्र में 50 तथा बराक नदी पर 24 फेरी सेवाएं चलाई जाती हैं। इससे बड़ी संख्या में यात्रियों और माल की छुलाई की जाती है। इस समय इसके द्वारा क्रीरीब 10 हजार मीट्रिक टन माल छुलाई की जा रही है। बराक नदी के तट पर करीमगंज, बद्रपुर और सिलचर जैसे प्रसिद्ध घाट अवस्थित हैं और ये आवागमन के बड़े केंद्र बने हुए हैं। बराक नदी के करीमगंज-लखीपुर खंड के विकास के लिए तकनीकी अर्थिक व्यवहार्यता अध्ययन किया गया है। यह नदी बांग्लादेश के जलमार्गों के जरिये हल्दिया पत्तन के साथ जुड़ी हुई है।

पूरे भारत में 14,500 किमी लंबे नौकाचालन योग्य जलमार्ग हैं। इनमें सर्वाधिक पूर्वोत्तर में हैं। इनमें से राष्ट्रीय जलमार्ग 1 और 2 को जोड़ने वाली बांग्लादेश की नदियों में भारत-बांग्लादेश प्रोटोकॉल व्यवस्था के तहत नौवहन संभव है। राष्ट्रीय जलमार्ग-2 (सादिया से धुबरी तक) काफी महत्वपूर्ण माना जाता है। इसमें धुबरी-डिब्रूगढ़ के मध्य 2 मीटर तथा डिब्रूगढ़-सादिया के बीच 1.5 मीटर न्यूनतम गहराई वाला नौकाचालन योग्य जलमार्ग है। साल में 330 दिन यहाँ काम जारी रहता है। इसके तहत पांडु में कंटेनर वहन सुविधायुक्त स्थायी टर्मिनल की व्यवस्था है, जबकि जोगीघोपा, तेजपुर, सिलघाट, सैखोवा और सादिया में स्थायी टर्मिनल हैं। वहाँ धुबरी, नियामाती, जामूगुड़ी तथा डिब्रूगढ़ में फ्लोटिंग टर्मिनल हैं।

पूरे जलमार्ग में दिन में नौकाचालन सुविधा के साथ धुबरी-सिलघाट के मध्य 24 घंटे नौकाचालन की सुविधा है। इस खंड पर 30 जोड़ी से अधिक फेरी घाट भी हैं जहाँ से लोगों के आवागमन के साथ सामानों की छुलाई की जाती है। इस खंड के विकास के लिए केंद्र

सरकार की कार्ययोजना भी जल्दी ही साकार हाने जा रही है। इस जलमार्ग पर सालाना कारों संभाव्यता 1.2 लाख टन आंकी गई है। इसमें सीमेंट, कोयला, डीएपी, डोलोमाइट, जूट, संगमरमर, मेघालय कोयला, चाय और नमक आदि का परिवहन शामिल है।

दुनिया की सबसे बड़ी नदियों में गिनी जाने वाली ब्रह्मपुत्र चीन से चल कर अरुणाचल प्रदेश से भारत में प्रवेश करती है। भारत में 918 किलोमीटर का सफर करती हुई यह नदी बांग्लादेश में प्रवेश करती है। भारत में सुबनसिरी, मानस, धनसिरी, कोपिली, तिस्ता, जलढाका और तोरसा समेत 39 नदियां इसमें मिलती हैं। यह बाढ़ का प्रकोप भी फैलाती है। पांच साल में एक बार तो इसका प्रकोप विकराल होता रहा है। फिर भी यह नदी जल परिवहन का मुख्य साधन है और बुरे दिनों में भी आवश्यक वस्तुओं की आपूर्ति में यही सबसे अधिक मददगार होती है।

भारत सरकार द्वारा राष्ट्रीय जलमार्ग-2 के विकास के लिए काफी योजनाबद्ध प्रयास किया जा रहा है और धीरे-धीरे इसका असर भी दिखने लगा है। खासतौर पर लंबी दूरी के माल परिवहन को लेकर काफी उत्साहजनक संभावनाएं दिखने लगी हैं। इस क्षेत्र में भारत सरकार ने गंभीर पहल की है और ऐसा माना जा रहा है कि आगामी 8-10 सालों में राष्ट्रीय जलमार्ग-2 का कायापलट हो सकता है। ऐसी परिकल्पना की जा रही है कि इसके द्वारा वर्ष 2020 तक क्रीरीब 6 लाख टन सालाना माल ढोया जा सकेगा और बड़ी संख्या में रोजगार तथा पर्यटन की संभावनाएं भी पैदा होंगी। कोलकाता-पांडु के बीच में कोयला, लोहा और इस्पात, पांडु से कोलकाता के बीच जिप्पम, चाय और कोयला, जोगीघोपा-कोलकाता के बीच मेघालय कोयला, तेजपुर तथा डिब्रूगढ़ से कोलकाता के बीच चाय, सिलघाट से पेट्रोलियम पदार्थ तथा नामरू से यूरिया आदि का परिवहन बड़ी मात्रा में किया जा रहा है। यही नहीं, राष्ट्रीय जलमार्ग 2 पर कई जगहों पर फेरी सेवाएं भी काफी लोकप्रिय हो चुकी हैं। ऐसे क्रीरीब 15 खंडों पर तो काफी व्यवस्थित तंत्र विकसित हो चुका है।

केंद्र सरकार की ओर से इस क्षेत्र के लिए काफी समर्थन प्रदान किया जा रहा है। पर संबंधित राज्यों को अन्य जलमार्गों के विकास की दिशा में भी ठोस पहल करनी होगी। इसके तहत अंतर्देशीय जल परिवहन को बढ़ावा देने

के लिए केंद्र प्रायोजित योजना भी चल रही है जिसमें पूर्वोत्तर राज्यों के लिए शत-प्रतिशत सहायता अनुदान की व्यवस्था है। योजना आयोग ने यह योजना वर्ष 2007-08 से पूर्वोत्तर को छोड़कर अन्य राज्यों के लिए बंद कर दी है।

फिर भी इस क्षेत्र में अभी कई तरह की बाधाएं हैं। इनमें तकनीकी के साथ संस्थागत समर्थन का तत्व भी अहम है। इस क्षेत्र में अंतर्देशीय जल परिवहन के प्राधिकार वाली कई एक संस्था काम नहीं कर रही है। जहाँ राष्ट्रीय जलमार्ग से संबंधित दायित्व केंद्र सरकार की संख्या भारतीय अंतर्देशीय जलमार्ग प्राधिकरण का है, वहाँ सहायक नदियों के प्रबंधन का दायित्व असम तथा पूर्वोत्तर की अन्य राज्य सरकारों का है। निजी क्षेत्र की ओर से जो उत्साह दिखाया जाना चाहिए था, इस क्षेत्र में दिखाया नहीं जा रहा है। इस दिशा में भी खास ध्यान देना ज़रूरी है। इस क्षेत्र पर अभी और गंभीर अध्ययन अपेक्षित है और परिवहन में अहम योगदान करने वाली छोटी नावों के आधारभूत आंकड़ों को जुटाना भी ज़रूरी है। इसी तरह बहुत से जीर्णोद्धार के कार्य भी करने हैं और रात्रि नौवहन की व्यवस्थाओं को भी गति देनी है। साथ ही सुरक्षा तंत्र भी एक अहम सवाल है, क्योंकि पूर्वोत्तर में उग्रवाद भी एक समस्या है। हालांकि जल परिवहन क्षेत्र अभी इस समस्या से बचा हुआ है पर मौन साधे बैठे रहना उचित नहीं होगा। पूर्वोत्तर के राज्यों से वाया सुंदरबन और बांग्लादेश काफी सामानों की छुलाई की जा सकती है। इस बाबत भारत सरकार और बांग्लादेश के बीच जल परिवहन और व्यापार के बारे में संधि भी हुई है। इसके तहत एक देश के जहाज निर्धारित जलमार्गों से दूसरे देश जा सकते हैं। संधि के तहत कोलकाता-पांडु-कोलकाता, कोलकाता-करीमगंज-कोलकाता, राजशाही-धुलियान-राज शाही, पांडु-करीमगंज-पांडु खंड पर संधि मार्ग शामिल हैं। अंतर्देशीय व्यापार के लिए दोनों देशों में से प्रत्येक में चार बंदरगाह निर्धारित किए गए हैं। भारत के बंदरगाह हैं— हल्दिया, कोलकाता, पांडु और करीमगंज। लेकिन इस व्यवस्था के तहत अभी काफी कुछ विकास कार्य किया जाना है। खासतौर पर बांग्लादेश की ओर से इस मामले में सक्रिय पहल अपेक्षित है। □

(लेखक भारतीय रेल परामर्शदाता में हैं और परिवहन एवं संचार संबंधी मामलों के जानकार हैं।
ई-मेल : arvindksingh@gmail.com)



मणिपुर में आर्थिक नीति की चुनौतियां जरूरत विकास नीति के मॉडल में परिवर्तन की

● मैसनम बोबो सिंह

भारत विभिन्न राज्यों और केंद्रशासित प्रदेशों में विभाजित एक संघराज्य है। देश के राजनीतिक स्थायित्व, आर्थिक व्यवहार्यता और विकास के लिए सभी राज्यों एवं केंद्रशासित प्रदेशों का संतुलित विकास आवश्यक है। हालांकि इसमें अत्यधिक विविधतापूर्ण क्षेत्र सम्मिलित हैं। यह विविधता आकार, प्राकृतिक संसाधनों, जनसंख्या-घनत्व, सामाजिक परंपराओं, विकास के प्रारंभिक स्तरों, आर्थिक संगठन, ढांचागत सुविधाओं, औद्योगिक एवं व्यावसायिक ढांचे और संस्थागत वित्त की उपलब्धता, विकास दरों, निर्धनता स्तरों और सामाजिक विकास के सूचकांकों से संबंधित है। जैसाकि सभी जानते हैं, राष्ट्रीय योजनागत विकास की संपूर्ण अवधि के दौरान व्यापक पैमाने पर क्षेत्रीय असमानताएं और अंतरराज्यीय अथवा राज्यों के आंतरिक अंचलों में भी असंतुलन की स्थिति लगातार दिखाई देती रही है। विकास सूचकांकों के अनुसार पूर्वोत्तर क्षेत्र देश का सर्वाधिक पिछड़ा क्षेत्र है। एस.पी. शुक्ल आयोग ने ठीक ही कहा था कि पूर्वोत्तर क्षेत्र चार अभावों का सामना कर रहा है : बुनियादी आवश्यकताओं की कमी,

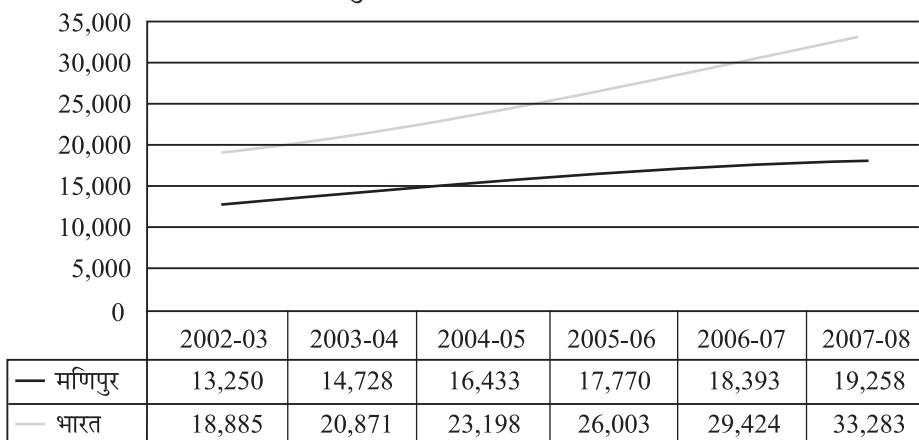
ढांचागत अभाव, संसाधनों की न्यूनता और शेष भारत के साथ मेल-मिलाप की द्विपक्षीय कमी, जोकि सर्वाधिक महत्वपूर्ण है और अन्य अभाव मिलकर उन्हें और बढ़ा देते हैं। इस क्षेत्र में ये अभाव बहुत लंबे समय से रहे हैं। यदि इन्हें और अधिक समय तक अस्तित्व में रहने दिया जाता है, तो संपूर्ण देश की राजनीतिक और सामाजिक स्थिरता काल्पनिक ही रहेगी।

वस्तुतः चिंता का विषय यह है कि यद्यपि विकास की नव-उदारवादी नीति के वर्तमान स्वरूप के अंतर्गत आय वृद्धि में महत्वपूर्ण प्रगति हुई है, लेकिन इस क्षेत्र को विकास प्रक्रिया का लाभ अभी नहीं मिल पाया है। इस प्रकार, विकास-नीति तुलनात्मक रूप से उच्च विकास उपलब्ध करा रही है। लेकिन पूर्वोत्तर क्षेत्र की अर्थव्यवस्था की विकास दर, राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था की विकास दर से नीचे है। राज्य के प्रतिव्यक्ति शुद्ध घरेलू उत्पाद के आकलन के अनुसार पूर्वोत्तर क्षेत्र के लोगों का जीवन-स्तर अखिल भारतीय स्तर की तुलना में नीचे है। वर्तमान मूल्यों के आधार पर वर्ष 2007-08 में यह 25,585 रुपये था जोकि 33,283 रुपये के

सभी राज्यों के औसत से 23 प्रतिशत कम है (आर्थिक सर्वेक्षण, 2008-09)। इस बात पर अधिक बल दिए जाने की आवश्यकता है कि विकास की वर्तमान प्रणाली से न केवल आय के बारे में, बल्कि विकास के अन्य सूचकांकों में भी असमानताएं बढ़ी हैं। देश के मुख्य भू-भाग में स्थित विकसित राज्यों और पूर्वोत्तर क्षेत्र के पिछड़े राज्यों के बीच, कल्याण पर आधारित ज्यादातर सूचकांकों के अनुसार व्यापक अंतर है। जैसाकि भलीभांति विदित है, आय अथवा उपभोग पर आधारित निर्धनता को लोगों के आर्थिक कल्याण के लिए प्रायः छोटे रूप में प्रयोग किया जाता है। हालांकि यह बेहद ज़रूरी है कि भूख और कुपोषण से आगे बढ़ा जाए और गरीबी की अवधारणा में कई अन्य विशिष्टताएं सम्मिलित की जाएं, जैसकि वस्त्र, आवास,

तालिका-1

**वर्तमान मूल्यों पर प्रतिव्यक्ति आय
मणिपुर और भारत (रुपये में)**



स्रोत : आर्थिक सर्वेक्षण, 2008-09

प्राथमिक स्वास्थ्य देखभाल सहित बुनियादी सामाजिक सेवाएं, स्वच्छता, शिक्षा इत्यादि; राजनीतिक मज़बूरी और अन्य बातों के अलावा सामाजिक-सांस्कृतिक हाशिये पर होने एवं अपवर्जन अर्थात् अलग करने की स्थिति। तथाकथित सहस्राब्दि विकास लक्ष्यों के निर्धारण सहित वर्तमान चर्चा में सामान्य रूप से इस्तेमाल किए गए सूचकों के बारे में इस क्षेत्र के विकासात्मक अभावों का स्तर समय के साथ-साथ ख़राब होता रहा है।

जब हम मणिपुर के परिवृश्य पर ऐतिहासिक रूप से, आजादी मिलने के बाद और योजनाओं के युग की शुरुआत से नज़र डालते हैं, तो पता चलता है कि यह राज्य अपनी विषम भौगोलिक स्थिति या 'ग' श्रेणी के राज्यों वाले प्रशासनिक ढांचे के कारण सामाजिक-आर्थिक विकास के मोर्चे पर गंभीर उपेक्षा का शिकार रहा है। यह पता चला है कि मणिपुर में राज्य की प्रतिव्यक्ति शुद्ध सकल उत्पाद की दर न केवल प्रतिव्यक्ति राष्ट्रीय सकल उत्पाद की दर से नीचे है, बल्कि पहले और दूसरे दशक में उदारवाद के बाद की अवधि के दौरान राज्य की प्रतिव्यक्ति आय और राष्ट्रीय स्तर पर प्रतिव्यक्ति आय के बीच दूरी क्रमशः बढ़ी है। सुधारों के दूसरे दशक में इन दोनों के बीच अंतर लगातार बढ़ रहा है। इस प्रवृत्ति को तालिका-I में देखा जा सकता है।

तालिका से स्पष्ट है कि उच्च विकास की प्रणाली व्यापक अंतर की प्रवृत्ति को सुधारने में

विफल रही है। यह भी ध्यान दिए जाने योग्य है कि कल्याण के अधिकतर सूचकों के अनुसार देश के विकसित राज्यों और मणिपुर जैसे पिछड़े राज्यों के बीच भी बहुत बड़ा अंतर है। उदाहरण के लिए वर्ष 2005-06 के बारे में एनएफएचएस-3 द्वारा प्राप्त किए गए अद्यतन आंकड़ों से स्पष्ट है कि उच्च शहरीकृत राज्य दिल्ली में पक्के मकानों में रहने वाले परिवारों का अनुपात सर्वाधिक 95 प्रतिशत है, जबकि दूसरी ओर मणिपुर में यह अनुपात मात्र 11 प्रतिशत ही है। जहां तक धन संबंधी संकेतकों में असमानता की बात है, मणिपुर की केवल 16.7 प्रतिशत जनसंख्या ही धन से संबंधित सर्वाधिक अंतराल वर्ग में सम्मिलित है। सभी धन-अंतराल वर्गों में जनसंख्या का वितरण समस्त परिवारों में बड़े पैमाने पर अंतर प्रदर्शित करता है। धन-स्तरों में वृद्धि तो हुई है, लेकिन नवउदारीकरण सुधार की अवधि के दौरान राज्य में व्यक्तियों के बीच परस्पर धन संबंधी असमानताएं सामने आई हैं। प्रतिव्यक्ति संपत्ति और प्रतिव्यक्ति शुद्ध मूल्य के अनुसार ग्रामीण और शहरी क्षेत्रों के मध्य अंतर बढ़ रहा है। उदारीकरण की अवधि के दौरान आय-वृद्धि और धन संबंधी असमानता महत्वपूर्ण तरीके से एक-दूसरे से जुड़ गई हैं। वर्तमान मूल्यों पर वर्ष 2004-05 में शहरी क्षेत्रों में प्रतिव्यक्ति मासिक उपभोक्ता व्यय 18 प्रतिशत अधिक था।

पिछड़ेपन और योजना प्रक्रिया में इस क्षेत्र की एक दशक तक हुई उपेक्षा को देखते हुए

विकास का एक अलग तरह का मॉडल अपनाने की आवश्यकता है जो और अधिक समन्वित स्वरूप का होने के साथ-साथ अधिक प्रभावशाली परिणाम सामने ला सके।

लोगों द्वारा अलग-थलग महसूस करने की प्रवृत्ति और उनके मुख्यधारा से दूर होने की प्रवृत्ति पर रोक लगाने के लिए विशेष प्रयास किए जाने की आवश्यकता है। यह स्थिति देश की विकासपरक योजना में आमूल परिवर्तन लाए जाने पर बल देती है। योजना आयोग ने वर्ष 2006 में अपने '11वीं पंचवर्षीय योजना के दृष्टिकोण पत्र' में कहा था कि 11वीं योजनावधि के दौरान विकास का एक नया मॉडल अपनाया जाएगा। 11वीं योजना

तीव्र और अधिक समन्वित विकास के उद्देश्य पर केंद्रित है। इस बारे में अनुशंसा यह है कि अभी तक एक बड़ा वर्ग विकास प्रक्रिया के लाभों से वर्चित रहा है लेकिन अब इसमें अधिक-से-अधिक बातों का समावेश करते हुए इसे अधिक समन्वित स्वरूप दिए जाने की आवश्यकता है। पहली बात यह है कि विकास की ऊंची दर केवल आय और जीवनस्तर में सुधार के लिए ही नहीं, बल्कि रोजगार के अधिक और अतिरिक्त अवसर उत्पन्न करने के लिए भी आवश्यक है। दूसरी महत्वपूर्ण बात समन्वित विकास के बारे में है। इसमें विकास की गति बढ़ाने और सामाजिक न्याय के उपाय सुझाए गए हैं। हालांकि इस बात पर ध्यान दिए जाने की आवश्यकता है कि योजना प्रणाली किसी ऐसी अर्थव्यवस्था के लिए ही सार्थक है, जिसमें सार्वजनिक निवेश की प्रमुख भूमिका हो। बावजूद इसके, वर्तमान समय में भारत में सार्वजनिक निवेश, कुल निवेश के एक मामूली हिस्से तक ही सीमित है और यहां तक कि उन क्षेत्रों में भी, जहां परंपरागत रूप से सार्वजनिक निवेश की प्रमुख भूमिका मानी जाती रही है, अब सार्वजनिक-निजी भागीदारियों पर जोर दिया जा रहा है। जैसाकि सभी को मालूम है, राज्य सरकारें अधिक-से-अधिक केंद्रीय सहायता पर निर्भर हैं और यही कारण है कि आर्थिक और भौतिक बुनियादी ढांचे के विकास के लिए स्वयं राज्यों द्वारा किए जा रहे प्रयास अपर्याप्त हैं।

स्वतंत्रता के बाद निजी संसाधनों की अपर्याप्तता, केंद्रीय सहायता के पर्याप्त न होने

और प्रति इकाई विकास की उच्च लागत जैसे महत्वपूर्ण कारण इस राज्य के पिछड़ेपन के लिए प्रमुख रूप से जिम्मेदार हैं। मणिपुर में निवेश को आकृष्ट करने के लिए सड़कों, रेलमार्गों और हवाई संपर्क का आधारभूत ढांचा विकसित करने के लिए बड़े पैमाने पर सार्वजनिक निवेश की ज़रूरत होगी। यह राज्य अल्प संसाधनों के कारण इन सभी कार्यों के लिए केंद्रीय सहायता पर निर्भर है।

नवउदारीकरण के मॉडल के अंतर्गत आधारभूत ढांचे और औद्योगिक क्षेत्र में निवेश व्यापक रूप से बाजार द्वारा नियंत्रित हो रहा है। इसे देखते हुए घरेलू और विदेशी दोनों ही मोर्चों पर निजी निवेश आकृष्ट करने के लिए राज्य को प्रतिस्पद्धा का सामना करना पड़ सकता है। मणिपुर में निवेश-प्रक्रिया को आसान बनाने के लिए वाणिज्य एवं उद्योग निदेशालय में एक विशेष प्रकोष्ठ स्थापित किया गया है। मणिपुर के मुख्यमंत्री का कार्यालय निवेश के प्रवाह की निगरानी कर रहा है। प्रत्यक्ष विदेशी निवेश को आकर्षित करने के लिए अभी तक फल-प्रसंस्करण, बांस और बांस-उत्पादों, पर्यटन से जुड़े उद्योगों, जैव-प्रौद्योगिकी, इलेक्ट्रॉनिक और संचार जैसे प्रमुख क्षेत्रों को चिह्नित किया गया है। हालांकि राज्य में आधारभूत ढांचे के विकास के लिए अभी निजी निवेश को आकृष्ट किया जाना बाकी है। विदेशी और घरेलू, दोनों ही निवेशक बेहतर बुनियादी ढांचे से युक्त और तुलनात्मक रूप से विकसित राज्यों में निवेश को प्राथमिकता देते हैं। चालू वर्ष में भारत में पूँजी का प्रवाह 42 अरब डॉलर से अधिक रहा है, जो पिछले वित्त वर्ष की संपूर्ण अवधि के दौरान 9.1 अरब डॉलर के शुद्ध पूँजी-निवेश के चार गुने से भी अधिक है (पीएमईएसी, 2009) बावजूद इसके राज्यों में अभी तक प्रत्यक्ष विदेशी निवेश बिल्कुल नहीं आ रहा है। यदि हम औद्योगिक निवेश प्रस्तावों के राज्यवार वितरण से संबंधित आंकड़ों पर नजर डालें, तो 1991 से 2006 की अवधि के दौरान 24,87,303 करोड़ रुपये के देश के कुल प्रस्ताव में मणिपुर का हिस्सा केवल 10 करोड़ रुपये तक ही सीमित है। प्राथमिक वस्तु उत्पादक कृषि क्षेत्र भी लंबे समय से उत्पादकता के निचले स्तर का सामना कर रहा है। विषम भूभागीय स्थिति और सिंचाई के लिए जल की व्यवस्था की ऊंची लागत के कारण बड़े पैमाने पर राज्य की

भूमि को खेती के लिए वर्षा पर निर्भर रहना पड़ता है। यहां भौतिक आधारभूत ढांचे के निर्माण की प्रति इकाई लागत मैदानी क्षेत्रों की तुलना में बहुत अधिक है। इस पर्वतीय क्षेत्र में भूमि को पट्टे पर देने की पुरानी प्रणाली भी उपयोगी नहीं रह गई है। घरेलू बाजार के विस्तार और उसे ढूढ़ बनाने के लिए कृषि और सिंचाई पर ध्यान दिए जाने की आवश्यकता है। भूमि की उत्पादन क्षमता के दोहन के लिए इस पर्वतीय क्षेत्र में विकास को सर्वोच्च प्राथमिकताओं में सम्मिलित करना होगा।

उचित संपर्क सहित आधारभूत ढांचे के अभाव के कारण राज्य के क्लीमती प्राकृतिक और मानवीय संसाधनों का उपयोग राज्य के विकास के लिए नहीं किया जा सका है। परिणामस्वरूप, जनसंख्या का अधिकांश भाग अब भी गरीबी रेखा से नीचे है। राज्य में बड़ी संख्या में योग्य युवक बेरोजगार हैं। राज्य के रोजगार कार्यालय के अनुसार, शिक्षित बेरोजगार युवाओं की संख्या रिकॉर्ड 6.5 लाख तक पहुंच गई है। उनकी क्षमताओं का उचित इस्तेमाल नहीं हो पा रहा है। परिणामस्वरूप कई समाज विरोधी और विध्वंसक तत्व लगातार अपनी जड़ें मजबूत करने और जघन्य गतिविधियां चलाने में समर्थ हुए हैं।

भारत जैसे बहुलतावादी देश में राजनीतिक स्थिरता, आर्थिक व्यवहार्यता और विकास के लिए सभी राज्यों और केंद्रशासित क्षेत्रों का संतुलित विकास ज़रूरी है। मणिपुर विशेष श्रेणी के राज्यों द्वारा झेली जा रही सभी कठिनाइयों और अभावों का सामना कर रहा है। जीवन-निवाह की लागत ऊंची है, निजी निवेश को आकृष्ट करने की संभावनाएं बहुत सीमित हैं और आधारभूत ढांचा अब भी दयनीय स्थिति में है। देश के नीति-निर्धारकों को इस राज्य की आर्थिक ज़रूरतों का आकलन करते समय उसके दूरवर्ती क्षेत्र में होने, सीमित कर-आधार और ऊंची लागत से संबंधित मानदंडों को ध्यान में रखना चाहिए। मणिपुर पहले से ही गंभीर ऋण जाल में फँसा हुआ है और बड़ी मात्रा में ब्याज के भुगतान के कारण आसन वित्तीय दबाव में है। अतः केंद्र सरकार को मणिपुर के संसाधनों के हस्तांतरण के लिए मॉडल में परिवर्तित करना चाहिए ताकि विकास



से संबंधित अपनी आवश्यकताएं पूरी करने के लिए वह बड़े पैमाने पर ऋण प्राप्त करने के अपने पुराने 'बिजनेस ऐज्ज युजुअल' के मॉडल पर कायम रह सके।

समन्वित विकास के तंत्र को आसान बनाने वाली प्रभावी कार्यसूची का स्वरूप निर्धारित करने और उसे अस्तित्व में लाने की एक बहुत बड़ी चुनौती मणिपुर के सामने मौजूद है। मणिपुर और पूर्वोत्तर क्षेत्र के बास्ते विकास नीति में मॉडल संबंधी महत्वपूर्ण परिवर्तन के लिए प्रभावपूर्ण बाजार की अपेक्षा प्रभावपूर्ण नियोजन को नया आधार बनाया जाना चाहिए। यह आमूल परिवर्तन भारत जैसे देश के लिए नितांत आवश्यक है, जिसे वर्ष 2020 तक विश्व की एक महाशक्ति के रूप में देखने की उम्मीद की जा रही है। यदि हम पहले से कमज़ोर राज्य सरकारों की आर्थिक शक्ति मजबूत करने में सफल हो जाते हैं, तो यह स्वप्न हकीकत में बदल सकता है। पूर्वोत्तर क्षेत्र के राज्यों में उपलब्ध संसाधनों के दोहन को सर्वोच्च प्राथमिकता दी जानी चाहिए। □

(लेखक मणिपुर विश्वविद्यालय, इंफाल के अर्थशास्त्र विभाग में सहायक प्रोफेसर हैं।
ई-मेल : mchingler@gmail.com)

मणिपुर के जैव संसाधनों का वैज्ञानिक प्रबंधन

● एन. सी. तालुकदार

जैव संसाधन, पृथ्वी की जैव विविधता के अवयव हैं जिनका उपयोग मानव समाज सनातन काल से भोजन, औषधि, वस्त्र और आवास के रूप में करता आ रहा है। मानव समाज के विकास और प्रगति में जैव संसाधनों की भूमिका अनिवार्य है। इस बात की पहचान के लिए कि कौन-से पौधे, पशु और सूक्ष्म जीव जैव संसाधनों की विभिन्न आवश्यकताओं पर खरे उतरते हैं, औपचारिक तथा अनौपचारिक रूप से जैव विविधता पर अनेक प्रकार के प्रयोग मानव बस्तियों के आस पास के बांधिदों पर किए जाते रहे हैं और उनके निष्कर्ष जनजातीय और पारंपरिक समाज को पीढ़ी-दर-पीढ़ी बताए जाते रहे हैं। अति विकसित समाजों में वैज्ञानिक अनुसंधानों ने न केवल जैव संसाधनों की उपयोगिता को मूल्य संवर्धित किया है बल्कि वैज्ञानिक प्रगति की त्वरित गति ने पृथ्वी की

जैव विविधता पर दबाव भी जबरदस्त रूप से बढ़ा दिया है। यह जैव विविधता ही मानव सहित सभी प्रकार के जीवों के सामंजस्य पूर्ण अस्तित्व की जीवनरेखा है।

जैव विविधता का संरक्षण और वैश्विक जैव विविधता से जैव संसाधनों का प्रबंधन दो ऐसे महत्वपूर्ण मुद्दे हैं जिनका समाधान स्थानीय, क्षेत्रीय, राष्ट्रीय और अंतरराष्ट्रीय स्तरों पर खोजा जाना चाहिए। इन दिशाओं में वैज्ञानिक प्रयासों को जैव विविधता की दृष्टि से विश्व के समृद्ध क्षेत्रों का जैव विविधता के हॉट स्पॉट अर्थात् संपन्न क्षेत्र के रूप में वर्गीकरण से काफी मदद मिली है। समृद्ध

जैव विविधता वाले क्षेत्रों के मानचित्र पर एक नज़र डालने से पता चलता है कि इन क्षेत्रों में जो लोग रहते हैं वे आर्थिक रूप से अत्यंत निर्धन हैं। इनमें वे जनजातीय लोग भी शामिल हैं, जो अपने आस पास के जीव रूपों से अपनी शैली में प्राप्त अनुभवों के कारण पारंपरिक ज्ञान का ख़जाना लिए घूम रहे हैं कि कौन-सा जैव संसाधन पौष्टिक आहार के रूप में उपयुक्त है तो कौन-सा स्वास्थ्य के लिए उपयोगी औषधि के रूप में। संयुक्त राष्ट्र अंतरराष्ट्रीय संरक्षण के वर्गीकरण के अनुसार वर्तमान में 34 जैव विविधता वाले हॉट स्पॉट हैं। इन समृद्ध जैव विविधता वाले क्षेत्रों में से तीन भारत में स्थित हैं। इनमें से दो क्षेत्र—इंडो बर्मा बॉर्डो डायवर्सिटी हॉट स्पॉट और ईस्टर्न हिमालयन बायो डायवर्सिटी हॉट स्पॉट भारत के पूर्वोत्तर क्षेत्र में और एशिया के दक्षिण पूर्वी क्षेत्र में फैले हुए हैं।

भारत का समूचा पूर्वोत्तर क्षेत्र जैव विविधता और जैव संसाधनों की दृष्टि से अति संपन्न हैं परंतु इस संपदा का क्षेत्र के आर्थिक विकास और शांति के लिए उपयोग करने हेतु विकास और अनुसंधान की गतिविधियां अपेक्षित स्तर पर नहीं हो पा रही हैं। क्षेत्र के जैव संसाधनों को पूर्वोत्तर क्षेत्र की समृद्धि की संभावना से जोड़ने की आवश्यकता हमेशा से रही है। यह तभी संभव है जब इन जैव संसाधनों को समाज के लिए मूल्यवान बनाने की प्रक्रिया को मूर्तरूप देने के लिए उच्च गुणवत्ता वाले वैज्ञानिक संस्थान खड़े किए जाएं। इन संस्थानों को अत्याधुनिक जैव प्रौद्योगिकी संबंधी अनुसंधान सुविधाएं जुटा कर इन बेजोड़ जैव विविधताओं और जैव संसाधनों का वैज्ञानिक दस्तावेज़ तैयार करना होगा। भारत और पूर्व के देशों के भू-भागों के जैव-भौगोलिक जंक्शन के दस्तावेज़ तैयार कर स्थायी विकास और जैव संसाधनों के आयोग के लिए जैव प्रौद्योगिकीय हस्तक्षेप,

रोजगार सृजन और क्षेत्र की आर्थिक प्रगति के लिए प्रौद्योगिकीय पैकेजों का विकास, जैव संसाधन संरक्षण विकास और उपयोगिता में क्षमता विकास (मानव संसाधन विकास), जैव संसाधनों के क्षेत्र में अनुसंधान कार्यों को आगे बढ़ाने में अन्य राष्ट्रीय/अंतरराष्ट्रीय संस्थाओं/संगठनों/विश्वविद्यालयों के साथ सहयोग और समन्वय के जरिये इन जैव संसाधनों का उपयोग क्षेत्रीय समृद्धि और प्रगति के साधन के रूप में किया जा सकता है। इस दिशा में भारत सरकार ने वर्ष 2000 में इंफाल में जैव संसाधन और धारणीय विकास संस्थान (आईबीएसडी) की स्थापना की, जिसका उद्देश्य इंडो-बर्मा बायो डायवर्सिटी हॉट स्पॉट के भारतीय क्षेत्र के पौधों, पशुओं और सूक्ष्मजीवी जैव संसाधनों का वैज्ञानिक ढंग से प्रबंधन करना था।

इंडो-बर्मा हॉट स्पॉट में 13,500 प्रकार के पौधों की प्रजातियां (समूचे विश्व की 2.3 प्रतिशत) और कशेरुकी जीवों की 2,185 प्रजातियां (कुल प्रजातियों का 1.9 प्रतिशत) पाई जाती हैं जिनमें से क्रमशः 7,000 और 528 प्रजातियां केवल इसी इलाके में पाई जाती हैं। इस हॉट स्पॉट में 1,170 उड़ने वाली और 329 स्तनधारी प्रजातियां भी पाई जाती हैं। सरिसृप की अनेक प्रजातियां भी इस हॉट स्पॉट में बसरा करती हैं। मणिपुर हालांकि एक छोटा भौगोलिक प्रदेश है, इसे कई तरह की जलवायु के प्रतिनिधित्व का श्रेय प्राप्त है। पहाड़ों के शीतोष्ण (न अधिक गर्म न अधिक ठंडा) से लेकर अत्यंत गर्म जलवायु वाले इस प्रदेश में अनेक प्रकार के वन और जैव विविधताएं मौजूद हैं। मणिपुर में सात जैव विविधताओं में 4,000 ऐंजियोस्प्रिमिक पौधों की प्रजातियां, 430 औषधीय पौधों की प्रजातियां, 34 खाद्य फ़ूल विकासीय प्रजातियां, 500 आर्किड प्रजातियां, बांस की 55 प्रजातियां, 40 धान की देसी प्रजातियां,

मछलियों की 160 प्रजातियां और प्रवासी जलीय पक्षियों की 21 प्रजातियां शामिल हैं। ऊंची और कम उच्चाई पर उड़ने वाली अनेक प्रकार की तितलियां भी यहां उपलब्ध हैं, परंतु उनके बारे में कोई अधिकृत व्यौरा उपलब्ध नहीं है।

आर्थिक एवं वाणिज्यिक दृष्टि से महत्वपूर्ण कुछ पौधों पर आईबीएसडी में प्राथमिकता के आधार पर अनुसंधान हो रहा है। इनमें अदरक प्रजाति, नींबू प्रजाति और ऑर्किड प्रजातियां शामिल हैं। पूर्वोत्तर भारत में उपलब्ध 19 आम की और 88 अदरक की प्रजातियों में अकेले मणिपुर से ही प्राप्त 42 प्रजातियों का संधारण आईबीएसडी ने किया है। अदरक प्रजाति के रेशे और तैलीय अंश और हल्दी प्रजाति के कुरक्यूमिन और तैलीय अंश में काफी विविधता पाई जाती है। स्थानीय रूप से उपलब्ध कम रेशे और अधिक तेल वाली अदरक प्रजातियां किसानों के लिए अधिक लाभ कमाने वाली प्रजातियां हो सकती हैं क्योंकि कम रेशा होने के कारण इनमें से तेल निकालना सरल होता है। कुछ अदरक प्रजातियां ऐसी भी हैं जिनका स्थानीय लोग औषधि के रूप में उपयोग करते हैं। स्थानीय वैद्यों का दावा है कि ये प्रजातियां मधुमेह के उपचार में लाभदायक हैं। ये पौधे खांसी, पेट दर्द, कान दर्द और अतिसार के इलाज में भी काम आते हैं। जंगली और उगाए गए दोनों प्रकार के ज़िज़ीबर ज़ेरमबेट के पौधों के तेल में 88.5 प्रतिशत तक ज़ेरमबोन होता है, जिसके बारे में कहा जाता है कि इसमें कैंसर और बायरल और सूजन से लड़ने वाले तत्व पाए जाते हैं। वैज्ञानिक अनुसंधान से इन दावों की सच्चाई का पता चल सकता है। यदि ये दावे सही सिद्ध होते हैं तो स्वास्थ्य के क्षेत्र में जैव सक्रिय सिद्धांतों की नयी खोज हो सकती है। इनका योगदान अमूल्य हो सकता है।

भारत का पूर्वोत्तर क्षेत्र के नींबू प्रजाति के आनुवंशिक विविधता के लिए जाना जाता है। इस क्षेत्र में नींबू वर्ग की 17 प्रजातियां पाई जाती हैं। मणिपुर में भी साइट्रस की अनेक प्रजातियां उपलब्ध हैं और साइट्रस मैक्सिमा जैसी कुछ प्रजातियां बहुतायत से उगती हैं। इनका उत्पादन तो बहुत होता है परंतु वाणिज्यिक दृष्टि से ये अधिक लाभप्रद नहीं होती। परंतु वैज्ञानिक हस्तक्षेप से इसका रस निकालते समय जो कड़वापन इसमें आ जाता है उसे समाप्त किया जा सकता है। यदि ऐसा हो जाए तो यह एक अत्यंत लाभप्रद सामग्री प्रमाणित हो सकती

है। साइट्रस फलों के छिलके के तेल का उपयोग बेकरी और शीतल पेयों उत्पादों में सुगंध और स्वाद के लिए किया जाता है। साइट्रस जूस और छिलके के तेल का उपयोग इत्र, साबुन, सौंदर्य प्रसाधन, लोशन और मोमबत्तियों जैसे गैर-खाद्य सामग्रियों में भी किया जाता है। स्थानीय रूप से उपलब्ध साइट्रस संसाधनों के तैलीय तत्वों का तुलनात्मक वैज्ञानिक अध्ययन खाद्य और प्रसाधन सामग्री उद्योगों को सुगंध के लिए बेहतर विकल्प उपलब्ध करा सकता है।

ऑर्किड को विश्व का सबसे आकर्षक और मोहक फूल कहा जाता है। यूरोप, अमरीका और जापान जैसे देशों में करोड़ों डॉलर के सजावटी फूल उद्योग में ऑर्किड के फूलों की महत्वपूर्ण भूमिका है। इनका सजावटी मूल्य बेजोड़ है। मणिपुर के ऑर्किड की 472 चिह्नित प्रजातियां राज्य की जैव संसाधन संपदा की प्रचुर स्रोत हैं। मणिपुर की संकटग्रस्त 13 प्रजातियों सहित 22 बहुमूल्य ऑर्किड प्रजातियों को आईबीएसडी की ऑर्किड पौधशाला में सही हालत में रखा जा रहा है। समय की मांग है कि ऑर्किड के बारे में और जागरूकता लाई जाए। उसे लोकप्रिय बनाया जाए, संरक्षित किया जाए और उसका वाणिज्यिक उपयोग बढ़ाया जाए ताकि ऑर्किड संपदा को लाभदायक संसाधन में परिवर्तित किया जा सके। व्यापारिक उद्देश्य के लिए जंगलों से ऑर्किड के संग्रह को कम करने के लिए चुनिंदा और अत्यधिक संकटग्रस्त प्रजातियों के प्रचार के लिए प्रयोगशाला में उपचार की विधि विकसित की गई है। कुछ वैशेष प्रकार की ऑर्किड प्रजातियों के उत्पादन को बायरस से मुक्त करने, कुछ अन्य का उत्पादन बढ़ाने तथा कुछ दूसरी प्रजातियों के खिलने के लिए वैज्ञानिक उपचार की विधि संस्थान ने विकसित की है। इसके साथ ही साइट्रस के पौधों को मुरझाने से बचाने के लिए उनकी कलमें लगाने का काम शुरू किया गया है।

आईबीएसडी ने अनेक प्रकार के महत्वपूर्ण तात्त्विक तेल पैदा करने वाले औषधीय और सुगंधित पौधों की पहचान की है। तेजपत्ता की चुनिंदा प्रजातियों में 1.3-2.1 प्रतिशत तेल पाया गया है जिसमें यूजिनॉल तत्व 82 प्रतिशत तक हो सकता है। यूजिनॉल का उपयोग दर्द निवारक और एंटीसेटिक एजेंट के रूप में होता है। क्षेत्र में पाई जाने वाली कुछ बनस्पतियों में 1.8 सिनेओल पाया जाता है। यह अति सूक्ष्म रोगाणुओं को नष्ट करने में सक्षम तत्व है। शिलांग के पर्वतीय क्षेत्र में पाई जाने वाली एक

विशेष प्रकार की बनस्पति में 99.8 प्रतिशत तक मिथाइल सैलिसिलेट जैसा तात्त्विक तेल पाया जाता है। इसका उपयोग सरदार, मांस पेशियों के दर्द और साधारण सर्दी-जुकाम से राहत पाने के लिए किया जाता है। भारत में मिथाइल सैलिसिलेट की आपूर्ति आयात द्वारा की जाती है। पूर्वोत्तर क्षेत्र में उसका विकल्प बनाने की संभावना है।

मणिपुर की जलवायु 'पैशन' फल के उत्पादन के लिए बहुत उपयुक्त है। इस फल के रस में नींद लाने का तत्व पाया जाता है। यह फल पानव शक्ति को भी बढ़ाने वाला माना जाता है। पैशन फल में 7.45 प्रतिशत बीज होते हैं। इन बीजों में लिनोलिक और ओलेइक अम्ल क्रमशः 69.3 प्रतिशत और 14.4 प्रतिशत होता है। इन फलों के औषधीय तत्व हृदय रोग के उपचार में उपयोगी प्रमाणित हुए हैं।

इन प्राथमिकता वाली फ़सलों पर अनुसंधान जारी है। इनके अलावा औषधीय पौधों की क्रीब 430 प्रजातियां ऐसी हैं जिनका संग्रह स्थानीय लोग मणिपुर की लोकतक झील और खेतों से करते हैं और उनका इस्तेमाल स्थानीय पारंपरिक औषधि (जड़ी-बूटी) के रूप में किया जाता है। अनेक औषधीय पौधों को यहां के लोग सज्जियां और फलों के रूप में उपयोग करते हैं। इन पौधों पर वैज्ञानिक अनुसंधान की आवश्यकता है ताकि उनके जैव सक्रिय सिद्धांतों का निर्धारण किया जा सके। इसके साथ ही उनका प्रचार करने और स्थानीय उपयोग के लिए उपयुक्त बनाकर खेती करने की ज़रूरत है ताकि उनके प्राकृतिक उत्पत्ति स्थलों पर दबाव कम हो सके। इन पौधों के वैज्ञानिक आंकड़े उपलब्ध नहीं हैं। इसलिए इनका वाणिज्यिक उपयोग बढ़ाने में बाधा आ रही है। परंतु मणिपुर के कुछ औषधीय पौधों के बारे में उपलब्ध सूचना से पता चलता है कि दालचीनी, लौंग, काली मिर्च और स्माइलेक्स का प्रतिवर्ष क्रमशः 83,598; 43,940 और 69,600 किलोग्राम संग्रहण होता है। इन पौधों के प्रसार और उत्पादन तकनीक को बढ़ावा देने की तकाल ज़रूरत है ताकि उनके नैसर्जिक उत्पादन क्षेत्रों पर दबाव कम किया जा सके और उनकी पैदावार पर पड़ रहे ख़तरे को दूर किया जा सके।

बांस उच्च वाणिज्यिक संभावनाओं वाला मणिपुर का एक और औषधीय जैव संसाधन है। ताजे भोज्य बांस के अंकुर में 88 प्रतिशत जल, 3.9 प्रतिशत प्रोटीन, 0.5 प्रतिशत वसा,

5.7 प्रतिशत कार्बोहाइड्रेट और 1.1 प्रतिशत खनिज होता है। इस लोकप्रिय सब्जी में 17 प्रतिशत अमीनो अम्ल भी होते हैं। इसमें प्रोटीन के पाचक गुणों सहित अनेक औषधीय गुण पाए जाते हैं। राज्य में बांस के अंकुर वनों से महत्वपूर्ण जैव संसाधन प्राप्त हो सकते हैं परंतु इस बात का पता लगाने का कोई वैज्ञानिक आंकड़ा नहीं है कि यह बांस के नैसर्गिक उत्पादन स्थलों पर कितना दबाव पैदा कर रहा है। इस महत्वपूर्ण जैव संसाधन से और अधिक आर्थिक लाभ प्राप्त करने के लिए विभिन्न प्रकार के बांस के अंकुरों के पौष्टिक प्राचलों में परिवर्तन पर अध्ययन, पूरे वर्ष उनकी उपलब्धता को सुनिश्चित करने के लिए बेहतर संरक्षण तकनीक का विकास और उनकी पैदावार बढ़ाने के लिए वैज्ञानिक हस्तक्षेप और बेहतर प्रबंधन अनिवार्य है।

पूर्वोत्तर क्षेत्र और विशेषकर मणिपुर में मछली के रूप में एक महत्वपूर्ण जैव संसाधन उपलब्ध है। दलदली पर्यावरण में अनेक प्रकार की ऐसी मछलियों की प्रजातियां पाई जाती हैं जो इसी क्षेत्र की विशेषता है। लोकतक और अन्य ज़ीलों में पाई जाने वाली मछलियों के अभिलेख तैयार किए जा चुके हैं। चिंदविन-इश्वरदी और बराक नदी प्रणालियों में पाई जाने वाली कई प्रवासी मछलियों को भी सूचीबद्ध किया जा चुका है। कुल मिलाकर अकेले मणिपुर में ही 140 मत्स्य प्रजातियों का पता चला है। इनमें पहाड़ी जलधाराओं में पाई जाने वाली अनेक सजावटी छोटी मछलियां भी शामिल हैं। इसके अलावा अनेक भोज्य घोंघे और सीपी भी इस क्षेत्र में पाए जाते हैं। ताजे पानी में पाई जाने वाली सीपियों और झींगा के वैज्ञानिक विकास की अपार संभावनाएं हैं। पर्वतीय जलधाराओं में पाई जाने वाली मछलियों की बड़ी कीमत है। स्थानीय बाजारों में उपलब्ध अधिकांश मछलियां निर्जन स्थानों से प्राप्त होती हैं और यह एक बड़ा कारण है देसी मछलियों की सूची से स्वादिष्ट स्थानीय मछलियों को हटाने का या फिर उनका अस्तित्व ही समाप्त करने का। मत्स्यपालन और मत्स्योत्पादन की उत्प्रेरित तकनीक और उपचार तकनीक से परिदृश्य में पर्याप्त सुधार हो सकता है। आईबीएसडी में दो देसी मछलियों के प्रजनन की उत्प्रेरित तकनीक हाथ में ली गई और वह काफी सफल रही है। मत्स्य बीजों और छोटी-छोटी मछलियों को मत्स्य उत्पादकों और मत्स्यपालकों को वितरण

से इन उन्मुक्त प्रजातियों के उत्पादन में बड़े पैमाने पर वृद्धि होने की आशा है। इससे मछली संरक्षण को भी काफी बढ़ावा मिलेगा।

कीट जैव संसाधनों के स्थायी रूप से वैज्ञानिक दोहन के लिए संस्थान में अनुसंधान की एक विशेष पहल की गई है। कीट जैव संसाधनों का बड़ा औद्योगिक महत्व है। उदाहरणार्थ, रेशम, शहद और लाख सभी कीटजनित उत्पाद हैं। इनके उत्पादन के लिए क्रमशः रेशम कीट पालन, मधुमक्खी पालन और लाख कीट पालन किया जाता है। कपड़ों की रानी (रेशम) का उत्पादन रेशम के कीड़ों द्वारा होता है। भारत के रेशम उत्पादक राज्यों में मणिपुर का छठा स्थान है और राज्य में शहतूत, टसर और ऐरी से कुल मिलाकर 286 मीट्रिक टन रेशम का उत्पादन होता है। लाख के कीड़े अनेक प्रकार के जंगली पेड़ों पर रहते हैं और रंग, लाख, राल आदि जैसे वैज्ञानिक रूप से उपयोगी बनोपज के लिए उनका दोहन किया जाता है। कीड़ों से प्राप्त किरणीदाने के चूर्ण जैसे रंगों का इस्तेमाल खाने के काम भी आता है।

पीढ़ियों से ज्ञात इन कीट जैव संसाधनों के अलावा, सर्वेक्षणों में यह तथ्य लिपिबद्ध किया जा चुका है कि ऐसे अनेक कीट पाए जाते हैं जिनका मणिपुर के पारंपरिक चिकित्सक (वैद्य) विभिन्न बीमारियों के इलाज के लिए करते आ रहे हैं। उदाहरण के लिए 'लेथोसेरस इंडिकस' का उपयोग कैंसर और बवासीर के उपचार के लिए किया जाता है। 'सायाविस्टर कंफ्यूसस' नाम के कीड़े का इस्तेमाल मूत्र विकारों और अतिसार रोगों के इलाज के लिए होता है। सर्वेक्षण के परिणामों ने दर्शाया है कि अनेक जनजातीय समूह कीड़ों के खाद्य सामग्री के रूप में उपयोग की वकालत करते हैं। उनका विश्वास है कि वे पशु प्रोटीन के सरलता से उपलब्ध रास्ते और पौष्टिक स्रोत हैं। वर्ष के कुछ महीनों में इंफाल के बाजार में बड़े पैमाने पर भोज्य कीड़ों को बिकते हुए देखा जा सकता है। इन कीड़ों को जंगलों से इकट्ठा किया जाता है परंतु पर्यावरण संतुलन पर पड़ने वाले इसके प्रभाव के बारे में कोई जानकारी नहीं है। यदि वे कीड़े जीवभक्षी की भूमिका निभाते हुए अन्य पतंगों आदि का भक्षण करते हैं तो यह पारंपरिक पद्धति वांछित नहीं कही जा सकती। इन सब वैज्ञानिक मुद्दों पर वर्तमान में अनुसंधान जारी हैं। पारंपरिक ज्ञान के आधार पर कीड़ों के पौष्टिक और औषधीय मूल्यों का विश्लेषण और उनके विषये तथा औषधीय

मूल्यांकन में इन भोज्य और औषधीय महत्व के कीड़ों के वैज्ञानिक दोहन की संभावना छिपी हुई है।

प्रकट रूप से दृष्टिगोचर इन जैव संसाधनों के अतिरिक्त अनेक सूक्ष्मदर्शी जीव राज्य के विभिन्न क्षेत्रों में बहुतायत से पाए जाते हैं। पृथकी की जैव विविधता में इनका बड़ा भारी योगदान है। आधुनिक सभ्यता के समग्र विकास तथा कृषि उद्योग और स्वास्थ्य क्षेत्रों को सूक्ष्म जीवों के योगदान से सभी परिचित है। मणिपुर के सूक्ष्मजीवी भंडारों के बारे में बहुत कम वैज्ञानिक आंकड़े उपलब्ध हैं (34 की जानकारी है)। इनकी भोज्य प्रजातियां प्रोटीन, खाद, सुगंध और पौष्टिक मूल्यों के साथ-साथ अपने वैज्ञानिक महत्व के लिए जानी जाती हैं। लाल रंग की भोज्य शैवाल (ऐलगी) 'लमनिया ऑस्ट्रेलिस' को स्थानीय तौर पर 'नुगसम' कहा जाता है और इसको मणिपुर के नैसर्गिक जलीय निवास स्थलों से प्राप्त कर बाजार में बेचा जाता है। इस शैवाल की विशेषता है कि यह 30-50 सेंटीमीटर की उथली गहराई में खूब फैलती है। इस अनूठे जैव संसाधन का वैज्ञानिक ढंग से प्रबंधन करने के लिए इस पर तुरंत ध्यान देने की आवश्यकता है।

मणिपुर समेत पूरे पूर्वोत्तर क्षेत्र की विभिन्न पर्यावरण प्रणालियां विविध सूक्ष्म जीवों से परिपूर्ण हैं और उनका अभी भलीभांति दोहन (वैज्ञानिक उपयोग) नहीं हुआ है। क्षेत्र में कृषि की पारंपरिक पद्धति और कृषि रसायनों के कम उपयोग के कारण इन पर्यावरणों की सूक्ष्म वनस्पतियों में अनूठी प्रजातियों को आश्रय मिला हुआ है। नये-नये प्रकार की एंटीबायोटिक, जैव उर्वरकों और जैव कीटनाशकों की खोज के लिए इन जीवों की संभावनाओं का पता लगाने के लिए वैज्ञानिक अनुसंधान आवश्यक हैं। कृषि रसायनों के सघन उपयोग वाले कृषि और उद्यानिकी क्षेत्रों से मिले अनुभव से ज्ञात हुआ है कि राज्य की कृषि फ़सलों में पौष्टिक तत्वों और रोगों के प्रबंधन के लिए जैव उर्वरकों के विकास के बास्ते अनुसंधान में तेजी लाने की आवश्यकता है। मणिपुर घाटी में एक लाख हेक्टेयर की खेती योग्य भूमि को अकेले जैविक खादों से ही उर्वर बनाया जा सकता है। जैविक कचरे (बायोमास) की प्रचुरता के कारण जैविक खादों के उत्पादन की संभावनाएं भी काफी अच्छी हैं। जलीय निकायों पर बड़ी मात्रा में वानस्पतिक जैव कचरे का उत्पादन होता है।

लोकतक झील को छोड़कर अन्य जलीय निकायों के कुल 52,956 हेक्टेयर में बानस्पतिक कचरा पैदा होता है। एक अनुमान के अनुसार लोकतक झील में 5 करोड़ टन जलीय जैव कचरा तैरते हुए मंच के रूप में पाया जाता है। इंफाल नगर की नगरपालिका जो कूड़ा-कचरा उठाती है उससे प्रतिदिन 24.2 मीट्रिक टन जैव कचरा पैदा होता है। इसके अलावा फसलों के अवशेष और पशुओं का कचरा (गोबर आदि) भी बड़ी मात्रा में उपलब्ध है। वैज्ञानिक पद्धति और नियोजन से इन जैविक पदार्थों का उपयोग उच्च गुणवत्ता वाली खाद के उत्पादन के लिए किया जा सकता है।

साइट्स पौधों की मुरझाने की बीमारी इस क्षेत्र के मैंडरिन संतरे की लाभप्रद खेती में एक प्रमुख बाधा बनी हुई है। सूक्ष्मस्तरीय प्रचार के जरिये अंकुर की कलम लगाने और जीवाणु मुक्त पौधे लगाने की सामग्री के उत्पादन के प्रयासों के साथ-साथ, बारहमासी बागानों के पोषण में पिछड़े होने की समस्या का समाधान पौधों के विकास में वैज्ञानिक पद्धति के इस्तेमाल से किए जाने का प्रयास किया गया है। अनेक प्रकार के आकाशीय और जलीय पर्यावरणों को जैव उर्वरकों, एकल कोशिका प्रोटीन, प्राकृतिक रंजक और औषधीय उत्पादों के स्रोत के रूप में उपयोग करने के लिए अलग से चिह्नित किया गया है।

पारंपरिक रूप से मृदा कीटाणु जैसे सूक्ष्म जीव विभिन्न रोगों के उपचार में एटीबीयोटिक्स के स्रोत के रूप में इस्तेमाल होते रहे हैं। नयी वैज्ञानिक खोजों ने जैव सक्रिय अणु के स्रोत के तौर पर विभिन्न स्वास्थ्य समस्याओं से राहत पाने के लिए इन कीटाणुओं की प्रबल संभावनाओं का पता लगाने का काम शुरू किया है। पारंपरिक उपचार तकनीक से वास में मैजूद कुल कीटाणु के केवल 10 प्रतिशत का आकलन किया जा सकता है। परिणामस्वरूप इन कीटाणुओं की संभावनाओं के बारे में बहुत-सी जानकारियों का पता ही नहीं लगाया जा सकता। परंतु आधुनिक आण्विक तकनीकों कीटाणुओं की संभावनाओं का आकलन करने में उपयोगी साबित हुई हैं। निकोलस पीरामल को औद्योगिक भागीदार और आइबीएसडी सहित देश की नौ अन्य शोध एवं विकास संस्थाओं के साथ सार्वजनिक और निजी क्षेत्र की भागीदारी में शुरू की गई बहु-संस्थानी परियोजना के तहत पूर्वोत्तर भारत की 13,900 कीटाणुओं की जांच से पता चला है कि

319, 51, 16 और 74 कीटाणुओं में क्रमशः संक्रमण-रोधी, सूजन-रोधी, कैंसर-रोधी और मधुमेह-रोधी गुण पाए गए हैं।

खमीरीकरण खाद्य संरक्षण और उत्पादन की प्राचीनतम और सबसे क्रियायती विधियों में से एक है। खमीरीकृत भोजन संरक्षण के अलावा स्वाद, पाचन, पौष्टिकता और औषधीय गुणों को बढ़ाने के अतिरिक्त गुणों से भरे होते हैं। प्रत्येक खमीरीकृत भोजन में सूक्ष्म वनस्पतियों का फुंड समाया होता है जो प्रोटीन, विटामिन, तात्विक अमीनो अम्ल और फैटी एसिड का स्तर बढ़ाते हैं। इनमें कुपोषण की समस्या से निपटने प्रचुर संभावना है। भारत के पूर्वोत्तर राज्यों में खमीरीकृत भोजन और पेय पदार्थों के 50 से अधिक प्रकार पाए जाते हैं। इनमें खमीरीकृत सोयाबीन उत्पादन हवाईजार, किनेमा, बड़ी, थुरगबाई, ऐक्सोन, एखुनी, आसा, पेरोनेमिंग, यन्नी, पेरुंग, चुकचोरो, पेरुयान, बेंकंग) खमीरीकृत बांस अंकुर उत्पाद (सोईबम, सोईडॉन हिरिंग, मेसू, एकुंग, एहुंग, इयुप, लुंग-सीज), खमीरीकृत सब्जियां (जियांग दुई, गुंदुक, लाईसाग, अनिशी, गोयांक, सिंकी) खमीरीकृत मत्स्योत्पाद (एंगारी, हैंटक, तुंगतैप, लोनाइलिस), खमीरीकृत मांस उत्पाद (सा-युम, खेयुइरी, चिलू, करगयोंग), खमीरीकृत याक दुग्ध उत्पाद (चुरापी, चुरखम, चुई युपा/फुरुंग), चावल आधारित मादक पेय पदार्थ (जुथू, एथिंगबा, इन्नांग, भाती, जानर, पोना) ज्वार/बाजारा से बने मद्य पेय (एप्पो, अपांग, मकई जानर, थेमसिंग, राकशी, मिंगरी) और फलों से बनी वाइन (मद्य) कटहल, वन सेब, पैशन फल, केला, अनानास और अन्य जंगली फल) शामिल हैं। पूर्वोत्तर भारत के पारंपरिक खमीरीकृत भोजन के बारे में ज्ञान केवल बाजार में बिकने वाले अंतिम उत्पादों के बारे में उपलब्ध है। बैसिलस, लैंकिट्क एसिड बैक्टीरिया (एलएपी) और कुछ खमीरी प्रजातियां खमीरीकृत भोजन से जुड़े सूक्ष्मजीवों के प्रमुख समूह हैं। विश्वभर में मानव कल्याण के लिए जीन पूल की खोज में माइक्रोबियल जर्मप्लाज्म की पहचान, खोज और संग्रह में दिलचस्पी बढ़ रही है ताकि जैव-प्रौद्योगिकीविदों को मूल्य संवर्धित उत्पाद विकसित करने में मदद मिले। विगत वर्षों में अनुसंधानकर्ताओं द्वारा स्वच्छ और वैज्ञानिक ढंग से उत्पादन प्रौद्योगिकी अपनाने के गंभीर प्रयास नहीं किए गए। स्थानीय निर्माता अभी भी पुरातन पारंपरिक कला को ही अपनाए हुए हैं। परंतु विकसित

देशों में उनके पारंपरिक खमीरीकृत भोजन जैसे योर्गट, चीज़, सावरक्रोट, नैट्टो, टेम्पे, मिसो आदि की विशद वैज्ञानिक जांच की गई है, नयी उत्पादन प्रौद्योगिकियों का विकास किया गया है और इन उत्पादों को स्वास्थ्य के प्रति लाभदायक बताने वाले लेबल के साथ अंतरराष्ट्रीय बाजारों में उत्तराकर उसका व्यावसायिक लाभ लिया जा रहा है। उत्तम निर्माण पद्धति (जीएमपी) के अनुसार उत्पादन के बुनियादी हाईजेनिक ज्ञान के प्रति जागरूकता की आवश्यकता है। एचएसीपी प्रणाली के अनुसार बाजार में उत्तरे गए उत्पादों की सुरक्षा के बारे में जागरूकता की ज़रूरत है। इन दोनों विषयों पर तुरंत ध्यान देने की आवश्यकता है। हाल के दिनों में प्रकाशित वैज्ञानिक लेखों में मानव स्वास्थ्य और बीमारियों के विभिन्न पहलुओं पर खमीरीकृत भोजन के सकारात्मक प्रभाव का विस्तार से उल्लेख हुआ है। वैज्ञानिक ढंग से स्वास्थ्यवर्धक गुणों के अनुसार नये खमीरीकृत भोजन का विकास राज्य के लोगों के स्वास्थ्य और कल्याण पर सकारात्मक प्रभाव डाल सकता है। पूर्वोत्तर भारत के कम आय वाले लोगों को इससे विशेष लाभ मिल सकता है।

अंत में यह कहा जा सकता है कि यदि वैज्ञानिक ढंग से प्रबंधन हो तो मणिपुर के पौधीय, पशु और सूक्ष्मजीवी जैव संसाधन राज्य की अर्थव्यवस्था के उत्थान में महत्वपूर्ण योगदान कर सकते हैं। परंतु इस लक्ष्य की प्राप्ति के लिए की जाने वाली पहल को वैज्ञानिक अनुसंधान के उचित वातावरण के सहारे की आवश्यकता है। साथ ही जैव संसाधन प्रबंधन के बारे में वैज्ञानिक ज्ञान को अंतिम उपयोगकर्ता तक पहुंचाने के लिए सुदृढ़ प्रसार/विस्तार तंत्र की भी ज़रूरत है। भारत और दक्षिण-पूर्व एशिया के बीच के गलियारे में स्थित होने के कारण मणिपुर को अपने उत्पादों और जैव संसाधनों से विकसित प्रक्रियाओं के लिए दक्षिण-पूर्व एशिया के देशों में व्यापक बाजार मिलने की अच्छी संभावना है। मणिपुर की स्थिति इस संबंध में लाभप्रद है। इस संबंध में भारत सरकार की 'पूरब चलो' नीति राज्य के जैव संसाधन व्यापार की गति को तेज़ करने में उत्प्रेरक का काम कर सकती है। □

(लेखक भारत सरकार के जैव प्रौद्योगिकी विभाग के अंतर्गत इंफाल स्थित इंस्टीट्यूट ऑफ बायोरिसोर्सेज एंड स्टेनेबेल विकास के निदेशक (प्रभारी) हैं।
ई-मेल: ibsdinp@bsnl.in)

जातीय संघर्ष और हाइड्रो पर मुख्यधारा राजनीति

● ए. मार्गी सिंह

मणिपुर विविधताओं की भूमि है। प्रायः इसे देवताओं की नृत्यशाला कहकर पुकारा जाता है। भारत के पूर्वोत्तर में स्थित इस छोटे से राज्य का भौगोलिक क्षेत्र कुल 22,356 वर्ग किलोमीटर है और जनसंख्या केवल 23 लाख 88 हजार, 634। राज्य के 90 प्रतिशत क्षेत्र अर्थात् 20,126 वर्ग किलोमीटर में पहाड़ ही पहाड़ हैं। राज्य के हृदय क्षेत्र अर्थात् घाटी में मुख्यतः मीतोई और मणिपुरी मुसलमान पंगल निवास करते हैं। पर्वतीय क्षेत्र में मुख्यतः 33

मान्यता प्राप्त जनजातियों का निवास है। इन अनुसूचित जनजातियों के नाम इस प्रकार हैं— ऐमोल, अनल, अंगामी, चिरु, चोथे, गंगते, हमार, लुशाई, काबुई, कचानगा, खरम, कोईराव, कोईरंग, कोम, लम्कांग, माओ, मरम, मरिंग, मोनसंग, मोयोन, पाइते, पौमई, पुरुम, राल्ते, सहते, सेमा, सिम्ते, तंगखुल, थड़ोड़, तराव, वइफी, जाऊ और एनी कुकी जनजाति। पूर्व में मोटे तौर पर इन जनजातियों को दो श्रेणियों में विभाजित कर देखा जाता था— नगा और कुकी अथवा कुकी-चिन-मिजो लोगों का समूह। तदनुसार, ऐमोल, अनल, अंगामी, चिरु, चोथे, काबुई, कचानगा, कोईराव, कोईरंग, कोम, लम्कांग, मरिंग, मरम, माओ,

मोनसंग, मोयोन, सेमा, तंगखुल, पौमई, पुरुम, तराओं और ख़रम को नगा जनजाति माना जाता है। कुकी-चिन-मिजो समूह अथवा कुकी कहलाने वाले वर्ग में शामिल जनजातियां हैं— गंगते, हमार, लुशाई, पाइते, राल्ते, सिम्ते, सहते, थड़ाऊ, वइफी, जाऊ और एनी कुकी। इन दो श्रेणियों में जनजातियों का वर्गीकरण पूर्ण नहीं माना जाता है। जनजातियों के विभिन्न समूहों की पहचान के लिए कठिपय नामों के उपयोग की प्रवृत्ति में कुछ बदलाव आया है। कुछ घनिष्ठ रूप से जुड़ी जनजातियों की पहचान के लिए नया शब्द स्वीकार्य हो गया है, परंतु गैर-नगा जनजातियों के लिए ऐसा नहीं कहा जा सकता। उदाहरणार्थ, कुकी, कुकी-चिन, कुकी-चिन-मिजो, मिजो, जोमी आदि जैसे नामों का उपयोग समय-समय पर सभी अथवा गैर-नगा जनजातियों के कुछ समूहों के लिए किया जाता रहा है। इसके अलावा, जेलियांगरोंग जनजातियां भी हैं, जो अपने को नगा तो कहती हैं, परंतु नगा बिरादरी के बीच अपनी अलग पहचान बनाए रखने की भी आकांक्षा रखती हैं। इसके साथ ही, अपने विशिष्ट जनजातीय नाम से अपनी अलग पहचान बनाए रखने की प्रवृत्ति दशकों से प्रचलित है, जो 1990 के दशक के प्रजातीय झड़पों के बाद और भी बढ़ गई है।

जहां तक, राज्य के पर्वतीय क्षेत्रों में इनके भौगोलिक फैलाव का संबंध है, पांच पर्वतीय क्षेत्रों में किसी में भी कोई एक विशेष जनजाति

या जनजाति समूह का निवास नहीं है। चंदेल ज़िले में सब मिलकर 14 जनजातियां रहती हैं। इनमें से अनल, मेरिंग और थड़ाऊ प्रमुख जनजातियां हैं, जबकि लम्कांग, जाऊ, गंगते, मोयोन, ऐमोल, चोथे, पुरुम, मिजो, तंगखुल, कोम आदि अल्पसंख्यक जनजातियां हैं। सेनापति ज़िले में कम-से-कम 13 जनजातियां हैं। इनमें जो बहुसंख्यक जनजातियां हैं, वे हैं— माओ, मरम और थड़ाऊ जबकि काबुई, तंगखुल, मेरिंग, चिरु, कोम, कोईरंग, वैइफी, कचानगा, सेमा और कोई कोईराव अल्पसंख्यक प्रजातियां हैं। तमेंगलोंग ज़िले में काबुई प्रमुख जनजाति है और थड़ाऊ तथा गंगते अल्पसंख्यक। चूड़ाचांदपुर ज़िले में क्रीब 13 जनजातियां पाई जाती हैं। इनमें से प्रमुख जनजातियां हैं— हमार, जाऊ, मिजो, गंगते, सिम्ते, राल्ते आदि अल्पसंख्यक और अंत में उखरूल ज़िले में तंगखुल बहुसंख्या में और थड़ाऊ अल्प संख्या में हैं। कुल मिलाकर देखा जाए तो उखरूल और तमेंगलोंग में नगाओं की बहुतायत है जबकि चूड़ाचांदपुर में कुकी जनजाति की। चंदेल और सेनापति के शेष दो ज़िलों में नगा और कुकी दोनों ही कमोवेश प्रायः समान प्रभाव वाली जनजातियां हैं।

राज्य विधानसभा में जहां तक इनके प्रतिनिधित्व का प्रश्न है, राज्य के पर्वतीय क्षेत्र में 20 विधानसभा निर्वाचन क्षेत्र हैं जिनमें से 19 क्षेत्र अनुसूचित जनजातियों के लिए आरक्षित हैं और केवल एक ही सामान्य सीट है। ज़िलावार

बात करें तो, पांच ज़िले जो वहाँ हैं, उनमें चंदेल में 2, चूड़ाचंदपुर में 6, सेनापति में 6, तमेंगलोंग में 3 और उखरुल में 3 विधानसभा क्षेत्र हैं। इन विधानसभा क्षेत्रों की जनजातीय संख्या का जहाँ तक प्रश्न है, तमेंगलोंग और उखरुल ज़िलों के सभी 6 विधानसभा क्षेत्रों में नगाओं की बहुतायत है तो चूड़ाचंदपुर ज़िले की 6 सीटों में प्रमुख रूप से कुकी जनजाति का प्रभाव है। अन्य दो ज़िलों- चंदेल और सेनापति में देखें तो चंदेल के दो विधानसभा क्षेत्रों में चुनावी राजनीति पर दोनों जनजातियों का कमोवेश समान प्रभाव है। सेनापति ज़िले की 6 में से 3 सीटों यानी माओ, तदुबी और करांग में नगाओं का बाहुल्य है, जबकि सैकुल और सैतू नामक 2 विधानसभा क्षेत्रों में कुकी लोगों की बहुतायत है। शेष एक विधानसभा क्षेत्र कांग पोक्पी (पर्वतीय क्षेत्र में एक मात्र सामान्य सीट) में नगाओं और कुकियों के साथ नेपाली सुमदाय का भी व्यापक प्रभाव है। परिणामस्वरूप, पर्वतीय क्षेत्रों की 9 विधानसभा सीटों से हमेशा नगा विधायक ही जीतते रहे हैं, जबकि अन्य 8 सीटों से कुकी उम्मीदवार ही चुने जाते रहे हैं। शेष तीन विधानसभा क्षेत्रों में हमेशा ही नगा और कुकी समुदायों के बीच कड़ी प्रतिस्पर्धा होती रही है। इस सबका अर्थ यह है कि राज्य विधानसभा में नगा और कुकी समुदायों का प्रतिनिधित्व या तो 10 : 10 अथवा 11 : 9 या फिर 12 : 8 के अनुपात में रहता है, बशर्ते कि कागपोक्पी सीट पर नेपाली उम्मीदवार न जीते। वर्तमान में दोनों जनजातीय समूहों के 10-10 विधायक विधानसभा में हैं।

विभिन्न जनजातीय समूहों और जनजातियों के बीच परस्पर संबंध, विभिन्न कारणों के चलते तनावपूर्ण हैं। वैमनस्यता, अविश्वास और भय की भावनाएं तो यहाँ पर सदा ही विद्यमान रही हैं। पर्वतीय क्षेत्रों में जनजातीय संघर्ष के उत्तरदायी कारक ऐतिहासिक भी हैं और समसामयिक भी। पारंपरिक शत्रुता, गांवों के ज़मीन-जायदाद संबंध के अनसुलझे विवाद, एक समूह के लोगों को दूसरे समूह के लोगों के विरुद्ध इस्तेमाल की औपनिवेशिक नीति, विभिन्न समूहों के बीच छुटपुट और रह-रह कर होने वाली हिंसा, भूमि और संसाधनों पर नियंत्रण हेतु संघर्ष, अपने-अपने पृथक गृह प्रदेशों के बारे में परस्पर विरोधी दावे, समस्या के समाधान के लिए राजनीतिक इच्छाशक्ति का अभाव, अकुशल प्रशासन, राज्य की कानून

एवं व्यवस्था लागू करने वाली अप्रभावी एजेंसियां आदि, सभी ने इस संघर्ष में भूमिका निभाई है।

इन सबके बीच उन जनजातियों को, जिनकी नगा अथवा अन्य समूहों के साथ कोई नजदीकी पहचान नहीं है, विभिन्न समूहों में शामिल करने के लिए प्रयास लंबे समय से जारी हैं। इससे इन जनजातियों में कुछ अनिश्चिताएं पैदा होती रहती हैं और यह बात तब और भी लागू होती है जब वे अपनी पहचान अलग बनाए रखना चाहती हों। अपने दम पर अपनी अलग राष्ट्रीयता स्थापित करने की उनकी कोशिश प्रयत्न: कम जनसंख्या और विशेषकर संघर्ष के समय सुरक्षा के लिहाज़ से उनको सावधान कर देती है और शंका तथा संदेह के कारण कोई एक पक्ष लेने को विवश कर देती है।

पर्वतीय क्षेत्रों के प्रमुख समूह जिन क्षेत्रों अपनी भूमि होने का दावा करते हैं, उसको अपना गृहप्रदेश घोषित करने की अकांक्षा वे स्पष्ट कर चुके हैं। तथापि, जैसा पहले कहा जा चुका है, राज्य के पांच पर्वतीय ज़िलों में से किसी में भी अकेले किसी विशेष समूह अथवा जनजातियों के समूह का निवास नहीं है। उनके प्रस्तावित गृहप्रदेश के मानचित्रों में कई ऐसे क्षेत्र हैं जहाँ दूसरी जनजातियों अथवा जनजातीय समूह भी पर्याप्त संख्या में बसे हुए हैं। इसके कारण विभिन्न जनजातीय समूहों में संबंध प्रायः तनावपूर्ण रहते हैं।

मणिपुर में समीपस्थ गृहप्रदेश की प्रजातीय आकांक्षा और दावों के संकेत 1940 के दशक के उत्तरार्द्ध में उसी समय दिखाई देने लगे थे जब माओ जनजाति ने समीपस्थ नगा क्षेत्रों का एकीकरण कर उसको एक राजनीति इकाई का रूप देने के विचार का समर्थन किया था। 1950 के दशक का उत्तरार्द्ध आने तक असम के तत्कालीन नगा पहाड़ियों में चल रहे भूमिगत आंदोलन को मणिपुर के लोगों का समर्थन मिलने लगा। माओ जनजाति के बसीखो चमई भूमिगत नगा आंदोलन में शामिल होने वाले मणिपुर के पहले नगा थे। बाद के दशकों में नगालैंड के भूमिगत नगा आंदोलन ने मणिपुर के नगाओं के बीच अपने पांच जमाने शुरू कर दिए थे। 1980 के दशक में भूमिगत नगा आंदोलन में मुझवा का महत्व बढ़ने लगा। 1990 में एनएससीएन(आईएम) के गठन के बाद नगा और मणिपुर के नगा बहुल क्षेत्र पृथक तावादी नगा आंदोलन से और अधिक जुड़ते चले गए। इन घटनाओं के साथ-ही-साथ बृहत्तर नगालैंड,

दक्षिण अथवा दक्षिणी नगालैंड आदि की मांगें भी उभरकर सामने आई जिसके पीछे-पीछे गृहप्रदेश कर और नगालैंड छोड़ो की धमकियां मिलनी शुरू हो गईं। इन घटनाओं के फलस्वरूप मणिपुर के पर्वतीय क्षेत्रों में अंतरजनजातीय संबंधों पर प्रभाव पड़ना स्वाभाविक था। कहा जाता है कि भूमि शाश्वत है और एकमात्र ऐसी चीज जिसके लिए लड़ाई लड़ी जानी चाहिए। इन घटनाक्रमों के कारण बचाव की मुद्रा में आए गैर-नगा प्रजातियों ने उस ज़मीन (क्षेत्र) की रक्षा के तौर-तरीके इंजाद करने शुरू कर दिए जिसके बारे में उनका दावा था कि वह समान रूप से उनकी भी ज़मीन है। इससे ज़बाब में कुकीलैंड अथवा ज़लेनगम, ज़ौगाम आदि जैसे गृहप्रदेशों की मांग भी उठने लगी और एक नयी समस्या ज़ोर पकड़ने लगी। वर्तमान में एक नये देश ज़ेलिया ग्राम का दावा किया जा रहा है। इसके अलावा, जनजातियों में अपनी विशिष्ट प्रजाति के नाम से अपना प्रभाव दिखाने की एक नयी प्रवृत्ति उभर रही है। यह दावा इस आधार पर किया जा रहा है कि वे दूसरी जनजातियों अथवा प्रजातियों से सर्वथा भिन्न हैं। इन घटनाक्रमों की पृष्ठभूमि में ही 1990 के दशक में कुकियों और नगाओं के बीच जातीय संघर्ष की घटनाएं हुईं। दरअसल, 20वीं शताब्दी का अंतिम दशक एक ऐसे विनाशकारी जातीय संघर्ष के दशक के रूप में याद किया जाएगा जिसमें 2,000 लोग मारे गए, 500 गांवों पर हमला हुआ, 7,000 मकान नष्ट हुए और 1,50,000 लोग विस्थापित हुए।

जब जातीय संघर्ष की समस्या और मणिपुर के पर्वतीय क्षेत्रों पर इसके प्रभाव पर नज़र डालते हैं तो कुछ बातें स्पष्ट रूप से सामने आ जाती हैं। सर्वप्रथम, राज्य के पर्वतीय क्षेत्रों में अनेक ऐसे जनजातीय संगठन सर्वत्र फैले हुए हैं जो समीपस्थ गृहप्रदेश और उसके विपरीत (प्रति) गृहप्रदेश की मांग को लेकर आंदोलन में रहते हैं। पर्वतीय क्षेत्रों में इस समय कम-से-कम 17 जनजातीय संगठन हैं। इनके नाम हैं— एनएससीएन(आईएम), एनएससीएन(के), कुकी लिबरेशन आर्मी, कुकी नेशनल आर्मी, कुकी नेशनल फ्रंट(पी), कुकी नेशनल फ्रंट(टी.सैमुल), कुकी डिफेंस फोर्स, कुकी नेशनल फ्रंट(ज़ौगाम), ज़ोऊ डिफेंस वालटियर्स, ज़ोमी रिवोल्शनरी आर्मी, यूनाइटेड सोशलिस्ट रिवोलुशनरी एलायंस (वैईफी), ज़ेलियांग्रांग रिवोलुशनरी नेशनल फ्रंट, यूनाइटेड कोमरेम

रिवोलुशनरी आर्मी, कोमरेम पीपुल्स आर्मी इत्यादि।

इन संगठनों की मौजूदगी ने राज्य के पर्वतीय क्षेत्रों में लोकतांत्रिक निर्वाचन प्रक्रिया पर गंभीर रूप से विपरीत प्रभाव डाला है। राज्य की निर्वाचन राजनीति में उनका हस्तक्षेप विधानसभा और लोकसभा दोनों ही चुनावों के दौरान दिखाई देता है। यह हस्तक्षेप कई प्रकार से होता है, मसलन सिरे से चुनाव बहिष्कार का आहवान या दूसरों के विरुद्ध किसी विशेष उम्मीदवार का समर्थन, लोगों के मताधिकार के इस्तेमाल में बड़े पैमाने पर दखलेंदाजी, चुनाव लड़ने के इच्छुक उम्मीदवारों द्वारा चुनाव मैदान में उत्तरने से पूर्व उनकी मंजूरी लेना, मतदान केंद्रों पर बड़े पैमाने पर फ़र्जी मतदान अथवा बूथ क़ब्ज़ा करना आदि। ऐसे अनेक उदाहरण हैं जब जनजातीय संगठनों के आहवान पर पर्वतीय लोगों ने संसदीय और विधानसभा चुनावों का बहिष्कार किया। बहिष्कार का आहवान नहीं किया जाए तो भी चुनावी राजनीति के बारे में फ़ैसला करने में उनकी भूमिका निर्णयक होती है।

यह जो प्रक्रिया है उसका पर्वतीय क्षेत्रों में लोगों के अंतर्सामुदायिक संबंधों पर गंभीर प्रभाव पड़ता है। पर्वतीय क्षेत्रों में इस कारण जो तनाव बढ़ा है उससे लोगों का ध्रुवीकरण पहले ही जड़ें जमा चुका है। वर्ष 1990 के दशक के जातीय संघर्षों के बाद तो यह स्थिति और भी अधिक मज़बूत हो चुकी है। सभ्य समाज के अधिकांश नागरिक संगठन, मानवाधिकार संगठन, छात्र संगठन, चर्चों के संघ इत्यादि सभी जनजातीय आधार पर बट गए हैं। जनजातीय संगठनों ने इस विभाजन को और भी अधिक स्थायित्व प्रदान किया है। इन नागरिक संगठनों के लिए अपना स्वतंत्र अस्तित्व बनाए रखना भी एक बड़ी समस्या बनी हुई है। अक्सर उन्हें भी अपने जनजातीय संगठनों की हाँ में हाँ मिलाते हुए देखा गया है। इसलिए चुनाव प्रक्रिया में जनजातीय संगठनों के हस्तक्षेप से पर्वतीय क्षेत्रों में जनजातीय ध्रुवीकरण और भी अधिक मुखर होकर उभरा है।

उपर्युक्त सभी तथ्यों ने पर्वतीय क्षेत्रों में ज़मीनी स्तर पर लोकतांत्रिक संस्थाओं और

प्रक्रियाओं के सार्थक विकास में गंभीर बाधा पहुंचाई है। राज्य के पर्वतीय क्षेत्रों में स्थानीय शासन निकायों की प्रभावी और सार्थक प्रणाली के विकास में जो विफलता स्पष्ट दिखाई देती है उससे यह प्रवृत्ति और भी भयावह होती जा रही है। लंबे समय से अटके ज़िला परिषदों के चुनाव करा पाने में विफलता और ग्राम प्राधिकरण अधिनियम को प्रभावी बनाने में इच्छा का अभाव इसकी ओर और स्पष्ट संकेत करते हैं। एक और पर्वतीय क्षेत्रों में प्रभावी और अर्थपूर्ण स्थानीय शासन प्रणाली की गैरमौजूदगी और दूसरी ओर चुनावी राजनीति में सर्विधानेतर ताकतों के कसते हुए शिकंजे ने मुख्यधारा की राजनीति को हाशिये पर ला खड़ा किया है। देश के लोकतांत्रिक सर्विधान में जिस व्यवस्था के संवर्धन की रूपरेखा दी गई है कम-से-कम मणिपुर के पर्वतीय क्षेत्रों में उसके अनुसार काम नहीं हो रहा है। □

(लेखक मणिपुर विश्वविद्यालय, कांचीपुर, इफाल के राजनीतिविज्ञान विभाग से संबद्ध हैं।

ई-मेल: smangisingh@yahoo.co.in)

सदस्यता कूपन

नयी सदस्यता / नवीकरण / पता बदलने के लिए

(जो लागू होता हो उस पर '✓' का चिह्न लगाएं।)

मैं (पत्रिका का नाम एवं भाषा) का वार्षिक (100 रुपये) द्विवार्षिक (180 रुपये)

त्रिवार्षिक (250 रुपये) सदस्य बनने का इच्छुक हूँ। डिमांड ड्राफ्ट/भारतीय पोस्टल आर्डर/मनीआर्डर संख्या तारीख

नाम

वर्ग

विद्यार्थी

शिक्षक

संस्था

अन्य

पता :.....

पिन

नवीकरण/पता बदलने के लिए कृपया अपनी सदस्य संख्या यहाँ लिखें

डिमांड ड्राफ्ट/भारतीय पोस्टल आर्डर/मनीआर्डर 'निदेशक, प्रकाशन विभाग' के नाम से बनवाएं और कूपन के साथ इस पर भेजें :

व्यापार व्यवस्थापक (प्रसार) प्रकाशन विभाग,

पूर्वी खण्ड-IV, सातवां तल, रामकृष्णपुरम, नई दिल्ली-110066



मणिपुर पर्यटन : मानवित्र और चुनौतियाँ

● बी. बद्रीनारायण शर्मा

मणिपुर भारत के सबसे पूर्वी छोर पर स्थित है। यह एक महत्वपूर्ण पर्यटन स्थल के रूप में उभर रहा है। लगभग 22,327 वर्ग किलोमीटर क्षेत्र में फैले मणिपुर के उत्तर में नगालैंड, दक्षिण में मिज़ोरम और पश्चिम में असम राज्य हैं। विशाल भारतीय उप-महाद्वीप के सुदूर कोने में स्थित मणिपुर हमेशा ही एक महत्वपूर्ण गिलियारे के रूप में कायम रहा है।

इस राज्य में 33 जनजातियाँ पाई जाती हैं जो मुख्यतः पहाड़ियों में बसी हैं। यहाँ के प्रमुख समुदाय इंफाल घाटी और मणिपुर के अन्य घाटी ज़िलों में बसते हैं। यहाँ के लोगों की संस्कृति और परंपराएं विविधतापूर्ण, रंगीन और आकर्षक हैं। इन घाटियों के विभिन्न समुदायों की अपनी-अपनी आकर्षक परंपराएं, शिल्प और मान्यताएं हैं। इन समुदायों के सामाजिक जीवन में संगीत, नृत्य और अन्य प्रकार की जीवंत कलाएं प्रमुख भूमिका निभाती हैं। पहाड़ों में बसे लोगों की सादगी और जीवन की गरिमा एक मानक के समान है।

यहाँ के मैदानी भाग की संस्कृति, कला और नृत्य का आनंद पूरी दुनिया के लोग लेते हैं। मणिपुर नृत्य, विशेषकर रासलीला भारत का शास्त्रीय नृत्य है। रासलीला में भारतीय संस्कृति की उच्चतम परंपरा का मिश्रण होने के साथ-साथ राज्य के मंगोल लोगों की स्वदेशी संस्कृति भी है। देश में नृत्य के अन्य रूपों से भिन्न रासलीला

भक्ति के द्वारा प्रेरित है जिस पर भारतीय दर्शन और संस्कृति काफी हद तक प्रभावी है। मई के महीने में मणिपुर घाटी के लोगों द्वारा मनाया जानेवाला पूर्व-हिंदू उत्सव लाई-हरोबा पर्व निश्चित रूप से विदेशी और घरेलू पर्यटकों को आकर्षित करेगा।

यहाँ लोकप्रिय शुमांग लीला अथवा जटरावाली सहित लोकनृत्य, संगीत और नाटक भी मौजूद हैं जो समान रूप से मनोरंजक हैं। इनसे पर्यटकों का मनोरंजन होता है। रंगकर्मी रतन थियम के नाटक विश्वप्रसिद्ध हैं तथा अक्सर इनका मंचन टोक्यो, लंदन ओर न्यूयॉर्क में किया जाता है।

खेल-कूद के क्षेत्र में हमारे खिलाड़ियों ने न केवल अपने देश में बल्कि अंतरराष्ट्रीय खेल आयोजनों में भी श्रेष्ठता प्रदर्शित की है। उन्होंने इस क्षेत्र में स्वर्णपदक और ट्राफ़ियाँ लेकर नाम कमाया है। हाल में संपन्न राष्ट्रीय खेलों में गुवाहाटी और मणिपुर अन्य भागीदार राज्यों के बीच पहले नंबर पर उभरकर आए हैं। मणिपुर को गौवान्वित करने वाली एक बात यह भी है कि पोलो नामक खेल का यह उद्गम स्थल है। कुछ वर्ष पहले तक इंफाल में अंतरराष्ट्रीय पोलो उत्सव का आयोजन किया जाता था जिसमें विभिन्न देशों से पोलो के उत्साही खिलाड़ी भाग लेते थे।

सांस्कृतिक और पारंपरिक विविधताओं के

बीच मणिपुर में आकर्षक नज़ारे और प्राकृतिक संपदा तथा अद्वितीय पारिस्थितिकीय प्रणाली मौजूद हैं। यहाँ की जलवायु अच्छी है। यहाँ गर्मी में अधिकतम तापमान 33 डिग्री सेल्सियस से लेकर जाड़े में न्यूनतम 5 डिग्री सेल्सियस तक रहता है। मणिपुर को प्रकृति का वरदान प्राप्त है। यहाँ कोई तूफान, सूनामी अथवा सूखे का खतरा नहीं है।

संपर्क

इस राज्य में सड़कों का एक विकसित नेटवर्क है जो इसे भारत की मुख्य भूमि और म्यांमा के साथ जोड़ता है। राष्ट्रीय राजमार्ग संख्या 39 नगालैंड के दीमापुर से लेकर मणिपुर होते हुए म्यांमा के साथ लगती अंतरराष्ट्रीय सीमा पर मोरेह तक जाता है। राष्ट्रीय राजमार्ग संख्या 53 इंफाल को असम के कछार ज़िले में स्थित सिलचर के साथ जोड़ता है। राष्ट्रीय राजमार्ग 150 इंफाल से लेकर मणिपुर के चूड़ाचांदपुर ज़िले को पार करते हुए मिज़ोरम तक पहुंचता है। इसका निकटवर्ती रेल संपर्क नगालैंड के दीमापुर से है जो इंफाल से 215 किलोमीटर दूर उत्तर में स्थित है। इसका दूसरा प्रमुख रेल संपर्क

मणिपुर
मुक्ति

जिरीबाम से है जो इंफाल से 225 किलोमीटर दूर है। इंफाल तक रेल संपर्क कायम करने के उद्देश्य से सर्वेक्षण का काम पूरा हो गया है और आशा की जा रही है कि इसका निर्माण कार्य भी शुरू किया जाएगा। राज्य के विभिन्न भागों को राष्ट्रीय राजमार्गों के साथ जोड़ना भी जरूरी है।

हवाई संपर्क

इंफाल हवाईअड्डा पूर्वोत्तर का दूसरा सबसे बड़ा हवाईअड्डा है। इंफाल का फिलहाल कोलकाता, नयी दिल्ली, मुंबई, गुवाहाटी, आइजॉल और सिलचर के साथ इंडियन एयरलाइंस, जेटलाइट, इंडिगो और किंगफिशर एयरलाइंसों के माध्यम से हवाई संपर्क कायम है। दिल्ली और मुंबई से इंफाल के लिए सीधी विमान सेवा उपलब्ध है और कोई व्यक्ति इन स्थानों से विमान यात्रा करके उसी दिन वापस भी आ सकता है। यदि इंफाल हवाईअड्डे को अंतरराष्ट्रीय हवाईअड्डे के रूप में विकसित किया जाए तो रंगून, बैंकॉक और सिंगापुर से उड़ान भरना काफी किफ़ायती और आसान हो जाएगा। निश्चित तौर पर वह समय आएगा जब यूरोपीय संघ की तर्ज पर दक्षिण-पूर्व एशिया और दक्षिण एशिया की अर्थव्यवस्था को जोड़ने में ‘पूरब चलो’ नीति प्रमुख बन जाएगी। भारत का भविष्य और पूरा पूर्वोत्तर निकट भविष्य की इन संभावनाओं पर ध्यान लगाए हुए हैं।

पर्यटन के लिए आधारभूत सुविधाएं

हालांकि यहां विकास के काफी कार्य बाकी हैं फिर भी मणिपुर में पर्यटन लक्ष्य के लिए आधारभूत सुविधाएं मौजूद हैं। अच्छी सड़कों और राजमार्गों के अलावा इंफाल और उसके आसपास तथा अन्य प्रमुख शहरों में काफी संख्या में अच्छे होटल मौजूद हैं। राज्य का स्वामित्व वाला इंफाल होटल पूर्वोत्तर में समान स्तर के अन्य होटलों की तुलना में आरामदायक और किफ़ायती है। यहां पर्यटन के क्षेत्र में निजी उद्यमियों और सार्वजनिक क्षेत्र की ओर से निवेश की जरूरत है।

राज्य सरकार ने हाल में ही इंफाल सिटी में एक महत्वाकांक्षी पर्यावरण-पर्यटन परियोजना पर जोर दिया है।

लोकतक झील और झील से घिरे क्षेत्र मणिपुर में मील के पत्थर की तरह हैं। इंफाल से 40 किलोमीटर दूर और लोकतक झील के किनारे स्थित मोरंग एक ऐतिहासिक शहर है जहां आजाद हिंद फ़ौज ने नेताजी सुभाषचंद्र

बोस के नेतृत्व में राष्ट्रीय तिरंगा झंडा फ़हराया था। विष्णुपुर, इंफाल और उखरूल द्वितीय विश्व युद्ध के दौरान अत्यधिक जोरदार और निर्णायक युद्धों के गवाह रहे। द्वितीय विश्व युद्ध की गाथाओं में इनके नाम अंकित हैं। यह इंफाल के मैदानी भाग में स्थित है जहां लॉर्ड वेल ने जापानियों को हराने के बाद जनरल स्लीम को सम्मानित किया था। युद्ध की विरासत के रूप में मणिपुर में युद्ध करने वाले और वीरगति पाने वाले सेनानियों के बुजुर्ग और रिस्टेदर यूनाइटेड किंगडम और जापान से प्रतिवर्ष मणिपुर आते हैं। इंफाल में एक कॉमनवेल्थ वार सिमेटरी मौजूद है। विष्णुपुर जिले में माइबाम लोकपा चिंग में एक अन्य युद्ध स्मारक है जिसे जापानी सरकार ने म्यांमा के टिडिडम शहर तक जाने वाले टिडिडम मार्ग पर बनाया था। यह स्थान ऐतिहासिक होने के साथ-साथ पर्यटन की दृष्टि से भी महत्वपूर्ण है।

यहां के प्राकृतिक संसाधनों की बात करें तो लोकतक झील के आसपास कैबुल लामजाओ नेशनल पार्क में हिरण की एक दुर्लभ प्रजाति पाई जाती है जिसे संगाई कहते हैं। इस प्रकार के दुर्लभ प्राकृतिक संसाधन केवल मणिपुर के पहाड़ों, घाटियों और परिस्थितिकीय प्रणाली में ही मिल सकते हैं जो यहां की जैव-विविधताओं में शामिल हैं। अपने आप में यह पर्यटकों के लिए मणिपुर तक आने का नियंत्रण ही है।

यहां के विष्णुपुर शहर में एक अत्यंत प्राचीन मंदिर भी है। इस विष्णु मंदिर का निर्माण कियां बा महाराज के समय में 15वीं सदी में कराया गया था। ईंटों की लिखावट में चीन के प्रभाव की झलक मिलती है। भारतीय पुरातत्व सर्वेक्षण इस मंदिर की देखभाल कर रहा है।

इंफाल में एक ऐतिहासिक गोविंदाजी मंदिर है जहां गोविंदाजी के साथ राधाजी की मूर्ति की पूजा की जाती है। राजा श्री भाग्यचंद्र महाराज ने मणिपुर पर कब्जा जमा चुके बर्मा वासियों को हराने के बाद 18वीं सदी में गोविंदाजी की प्रतिमा स्थापित की थीं। यह उनका सपना पूरा होने और महान वैष्णव परंपरा के प्रति उनके रुझान का प्रतीक है। मार्च के महीने में यहां डोलजात्रा अथवा होली के उत्सव के दौरान होली के गीत गाने वालों का रंगारंग जुलूस निकलता है जिसमें ड्रम और करताल बजाए जाते हैं। वास्तव में हमारा होली का त्यौहार एक अद्वितीय त्यौहार

है और पर्यटक इसकी ओर काफी आकर्षित होते हैं। त्यौहार धार्मिक पवित्रता और रंगों से भरपूर होता है।

मणिपुर सरकार इंफाल- थौबल- चंदेल- तेंगनौपाल-मोरेह मार्गों पर टूरिस्ट सर्किट विकसित करने का इच्छुक है। इन स्थानों की भौगोलिक बनावट और म्यांमा के साथ अंतरराष्ट्रीय सीमा को ध्यान में रखते हुए यहां पर्यटन उद्योग की अच्छी संभावना है। हमें यहां सांस्कृतिक पर्यटन से लेकर खेल-कूद, साहसिक पर्यटन, प्रकृति पर्यटन और पर्यावरण के लिए सभी प्रकार की अपेक्षित विशेषताएं प्राप्त हैं। यहां की साक्षरता दर लगभग 69 प्रतिशत है और यदि मणिपुर होते हुए एशियाई राजमार्ग की शुरुआत हो जाए और साथ-साथ एक सशक्त पर्यटन नीति तैयार हो जाए तो राज्य के शिक्षित युवाओं को लाभदायक रोजगार में शामिल किया जा सकता है। इसके बाद भारत और म्यांमा की सीमा से व्यापार की सुविधा भी मिल सकती है। इससे न केवल मणिपुर बल्कि समूचे उत्तर-पूर्व की अर्थव्यवस्था में काफी सुधार संभव है। एक समय आएगा जब हमारा देश वास्तविक रूप से पूर्वोत्तर के प्रति गैरवान्वित होगा।

फिलहाल संरक्षित क्षेत्र परमिट (पीएपी) देश के इस हिस्से में पर्यटन को बढ़ावा देने में एक प्रमुख बाधा साबित हो रही है। समय बदल रहा है और यह वैश्वीकरण का तकाज़ा भी है। ऐसी स्थिति में इस प्रकार का प्रतिबंध अधिक समय के लिए नहीं होना चाहिए। हालांकि किसी खास समय में प्रतिबंध की व्यवस्था का अपना अधिकार क्षेत्र और अपनी जरूरत होती है। हम ऋग्वेद के इन पवित्र शब्दों-आ नो भद्राः क्रतवो यातु विश्वताः से प्रेरित होते हरे जिसका अर्थ है “हर दिशा से हमारी ओर अच्छे विचार आए।”

हम यह आशा करते हैं कि इस वैश्वीकृत दुनिया में लोगों के लिए बाधाओं और प्रतिबंधों में कमी आएगी और हम भाईचारा, पारस्परिक सहनशीलता और समानता के रास्ते पर चलेंगे ताकि लोगों और श्रमिकों की निर्बाध आवाजाही हो सकेगी। सभी राष्ट्रों के लोग स्वतंत्रता, लोकतंत्र, विश्व शांति, अंतरराष्ट्रीय समझदारी और पारस्परिक सहअस्तित्व के लिए काफी कुछ ग्रहण करेंगे। □

(लेखक मणिपुर के पर्यटन आयुक्त हैं।

ई-मेल : man-bbs@hub.nic.in)

मणिपुर में महिलाओं की स्थिति अतीत और वर्तमान

● च. जामिनी देवी

कि सी भी राष्ट्र की प्रगति को मापने का बैरोमीटर उस देश की महिलाओं की स्थिति होती है। परंतु समाजशास्त्रियों के अनुसार महिलाओं की स्थिति को मापना और उसे कमतर या बेहतर बताना एक कठिन कार्य है, क्योंकि इसके लिए निश्चित और पक्षपातरहित कोई कसौटी नहीं है। महिलाओं की स्थिति प्रत्येक समाज में भिन्न-भिन्न होती है, जो प्रचलित मानकों और मूल्यों पर निर्भर होती है। किसी एक देश में भी यह स्थान (शहरी/ग्रामीण), धर्म, जाति अथवा समुदाय के अनुसार भी अलग-अलग होती है। महिलाओं की शिक्षा का स्तर, व्यवसाय, आय, निर्णय प्रक्रिया में उनकी भूमिका और उन्हें उपलब्ध वित्तीय सहायता के आधार पर ही उनकी स्थिति का पता चलता है।

मणिपुर रियासत के तत्कालीन सहायक राजनीतिक एजेंट और सुपरिटेंडेंट टी.सी. हडसन ने 1908 में यह लिपिबद्ध किया था कि “मणिपुर में महिलाओं को ऊँचा और स्वतंत्र स्थान हासिल है। सभी प्रकार का घरेलू (आंदोलन) व्यापार और देश के उत्पादों के आदान-प्रदान का प्रबंध महिलाओं के ही हाथों में है।” यह वक्तव्य आज भी सच है। मणिपुर की महिलाएं सक्रिय और परिव्रत्ती हैं, रचनात्मक और कलात्मक अभियांत्रिय रखती हैं और उनमें विकास की अपार संभावनाएं हैं। यदि मणिपुर में लड़कियां खोड़ें पर सवार हाथों में स्टिक लिए पोलो खेलतीं दिखें तो इसमें आश्चर्य नहीं होना चाहिए। वे फुटबॉल, हॉकी, एथेलेटिक्स, युद्ध कला, भारोत्तोलन, साइकिलिंग, तलवारबाजी (फेसिंग) आदि जैसे गंभीर खेलों में उत्कृष्ट प्रदर्शन करती रही हैं। उनमें से अनेक राष्ट्रीय और अंतरराष्ट्रीय स्तर पर भारत का

प्रतिनिधित्व कर रही हैं और देश का गौरव बढ़ा रही हैं। आमतौर पर सरल, सौम्य, विनम्र और मेहमाननवाज़, धार्मिक प्रवृत्ति और शार्तिप्रिय स्वभाव वाली मणिपुरी महिलाएं अपने आत्मसम्मान और अधिकारों पर चोट पहुंचते देख घायल शेरनी की तरह खूंखार भी हो सकती हैं। इस तथ्य की पुष्टि 1904 और 1939 के नुपीलाल प्रकरण और मौजूदा मीरापैबी आंदोलन से भलीभांति हो जाती है। मणिपुर की महिलाओं की सामाजिक, शैक्षिक, आर्थिक और राजनीतिक स्थिति की संक्षिप्त रूपरेखा नीचे दी जा रही है।

सामाजिक स्थिति

इस तथ्य के बावजूद कि मणिपुर का समाज पितृसत्तात्मक है और पुरुषों की प्रधानता और महिलाओं की आज्ञाकारिता की विचारधारा मणिपुर के सभी समुदायों की मान्यताओं और स्वभाव में पिरोया हुआ है, यहां की महिलाओं को पर्याप्त स्वतंत्रता तथा छूट और अनेक प्रकार के अधिकार मिले हुए हैं। बाल-विवाह, बालिका-शिशु हत्या अथवा सती जैसी कुप्रथाएं मणिपुर समाज के लिए अपरिचित-सी हैं। यद्यपि आमतौर पर वैवाहिक संबंध माता-पिता ही तय करते हैं तथापि विवाह योग्य लड़की और लड़के का भागकर शादी करना सामाजिक रूप से स्वीकार्य होता है। मणिपुर में विधवा पुनर्विवाह पर कोई सामाजिक प्रतिबंध नहीं है। दहेज का भी प्रचलन नहीं है, परंतु हाल के वर्षों में ‘ऑनपोट’ अथवा स्त्रीधन में करघे और उसके कलपुर्जे जैसे पारंपरिक चीजों के साथ-साथ रेफ्रिजरेटर और टेलीविजन जैसी उपभोक्ता वस्तुओं को शामिल करने की प्रवृत्ति में वृद्धि हुई है। परंतु मणिपुरी समाज में अनेक ऐसी दक्षियानूसी रिवाज और

परंपराएं हैं जो महिलाओं की गरिमा को ठेस पहुंचाती हैं। मितर्ई समुदाय में रिवाज है कि पत्नी, अपने पति के खाना खाने के बाद ही खा सकती है। बालक के जन्म का स्वागत किया जाता है जबकि बालिका के जन्म को हेय दृष्टि से देखा जाता है। जो महिला बालक को जन्म देती है उसे शादी की बारात में ‘यात्रा फिरुक’ अपने सिर पर रखकर उसकी अगुवाई का विशेषाधिकार दिया जाता है। यह अधिकार उस महिला को नसीब नहीं होता जो बालिका को जन्म देती है। राज्य का लिंगानुपात 2001 की जनगणना के अनुसार, प्रतिहजार पुरुषों पर 978 महिलाओं का है। पहाड़ी क्षेत्रों में महिला जनसंख्या और भी कम है। राजा-महाराजाओं के जमाने से चली आ रही बहु-विवाह प्रथा अभी भी राज्य में प्रचलित है। विशेष अवसरों और त्यौहारों पर पुरुषों को आगे और प्रमुख स्थान दिया जाता है और कोई भी उपहार अथवा समारोहात्मक भेंट आदि पहले उन्हें ही दी जाती है। मणिपुर का सामाजिक शिष्टाचार है—“पहले पुरुष, महिलाएं उसके बाद”。 महिलाओं को पैतृक संपत्ति में अधिकार देने की भी परंपरा नहीं है। यह बात मितर्ई, आदिवासियों और पंगल (मणिपुरी मुसलमान), सभी समुदायों पर लागू होती है।

आधुनिक शिक्षा के विस्तार और ज्ञानोदय से मणिपुर की महिलाओं में धीरे-धीरे अनुकूल परिवर्तन हो रहा है, परंतु समाज के कमज़ोर वर्ग की महिलाओं तक इन परिवर्तनों के



पहुंचने में अभी कुछ समय लगेगा।

शैक्षिक स्थिति

शुरू के दिनों में मणिपुर में महिलाओं को औपचारिक शिक्षा उपलब्ध नहीं थी। अभिजात्य परिवारों की लड़कियों को घर पर ही प्रारंभिक शिक्षा दी जाती थी। मणिपुर में 1898 में पहली बार लड़कियों के लिए प्राथमिक विद्यालय की स्थापना हुई, परंतु केवल 12 लड़कियां ही उसमें पढ़ने आईं। बाद में, सभी बच्चों को निःशुल्क और अनिवार्य शिक्षा के संवैधानिक प्रावधान ने राज्य में महिला शिक्षा को बढ़ावा देने का काम किया। फलस्वरूप महिला साक्षरता दर में निरंतर वृद्धि होती गई। वर्ष 1901 में महिला साक्षरता दर 0-4 प्रतिशत थी, जो क्रमशः आगे बढ़ते हुए 1951 में 2.75 प्रतिशत, 1961 में 18.87 प्रतिशत, 1971 में 22.87 प्रतिशत 1981 में 47.6 प्रतिशत, 1991 में 47.6 प्रतिशत, और 2001 में 59.7 प्रतिशत हो गई। यह जानकर प्रसन्नता होती है कि 1961 के बाद से मणिपुर की महिला साक्षरता दर राष्ट्रीय स्तर से अधिक बनी हुई है। परंतु पुरुष और महिला साक्षरता दरों के बीच अंतर 24.03 प्रतिशत तक जा चुका है। महिलाएं उच्च शिक्षा के क्षेत्र में भी पिछड़ी हुई हैं। बीच में पढ़ाई छोड़ने वाली बालिकाओं की संख्या बालकों के मुकाबले कहीं अधिक है। सामाजिक पूर्वाग्रह, निर्धनता और समुचित सुविधाओं का अभाव राज्य में महिला शिक्षा की प्रगति में आड़े आ रहा है। महिलाओं की आमदनी और आर्थिक स्थिति

मणिपुर की महिलाएं बुनाई, कढ़ाई, सब्जी फ़रोशी और कृषि कार्यों जैसे अनेक पैसा कमाने वाली गतिविधियों में भाग लेती हैं। यहां की महिलाएं बुनाई में काफी कुशल हैं, परंतु उनके लिए कच्चा माल बाहर से मंगाना पड़ता है जो काफी महंगा पड़ता है। इसलिए उनके लाभ का अंश बहुत कम रह जाता है। मणिपुर में कभी समृद्ध माना जाने वाले हथकरघा और दस्तकारी उद्योग के पतन के पीछे यही एक मुख्य कारण है। महिलाएं अब कई अन्य कार्यों में लग गई हैं। वे रेत की खदानों, ईट-भट्ठों, निर्माण कार्यों आदि में छोटे-मोटे काम कर रही हैं। आमदनी का एक और साधन, महिलाओं का बाजार भी है, जहां वे घरेलू उपयोग का सामान बेचती हैं और व्यापार एवं व्यवसाय में भाग लेती हैं। चूंकि अपनी आय पर उनका कोई नियंत्रण नहीं होता और पूंजी भी नहीं होती, इसलिए वे हमेशा ही विक्रेता (फुटकर) ही बनी रहती हैं। वे साहूकार

की दया पर जीती हैं, जो दैनिक आधार पर ऊंची दर पर ब्याज वसूलते हैं। इस प्रकार मुनाफ़े का अधिकांश हिस्सा तो साहूकार की जेब में चला जाता है। सरकार और उद्यमी विकास के लिए अन्य वित्तीय एजेंसियों की तमाम योजनाएं सूचना के अभाव और अज्ञानता के कारण उन तक पहुंच ही नहीं पातीं।

सरकारी सेवाओं में महिलाओं को बहुत कम रोजगार मिला है। मणिपुर सरकार के कार्यालयों में महिला कर्मचारियों की संख्या वर्ष 2001-2002 में 14,646 थी, जोकि कुल कर्मचारियों का मात्र 2 प्रतिशत है। सरकारी सेवाओं में आदिवासी महिलाओं की संख्या तो और भी कम है। मुस्लिम महिला कर्मचारियों की संख्या नगण्य है।

महिलाएं जिन पदों पर काम करती हैं, वे प्रायः लिपिकों के होते हैं। इसके अलावा शिक्षण, नर्सिंग, चिकित्सा और कानून के पेशों से भी महिलाएं जुड़ी हुई हैं। विज्ञान और प्रौद्योगिकी तथा प्रशासनिक सेवाओं में महिलाओं की संख्या प्रायः नगण्य है।

शारीरिक श्रम के क्षेत्र में

राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था में सुधार लाने के लिए यहां की महिलाएं शारीरिक श्रम वाले रोजगार में लगी हैं। ग्रामीण क्षेत्रों में महिलाएं खेती से जुड़े कार्यों में मज़दूरी करती हैं। वर्ष 1999-2000 में गांवों में काम करने वाली महिलाओं की संख्या 25.7 प्रतिशत थी, जबकि शहरों में 22.5 प्रतिशत महिलाएं काम कर रही थीं। यद्यपि महिलाएं शारीरिक श्रम ज्यादा करती हैं, उनका पारिश्रमिक पुरुषों की तुलना में कम होता है। कार्यस्थलों पर परिस्थितियां देश के अन्य स्थानों जैसी ही असंतोषप्रद हैं। केवल 17 प्रतिशत महिलाएं ही संगठित क्षेत्र में काम करती हैं, जबकि मणिपुर में इनका प्रतिशत केवल 3.8 प्रतिशत ही है। अन्य जैसे-तैसे कोई भी छोटा-मोटा काम कर अपना पेट पालती हैं। मणिपुर में महिलाएं हथकरघा, बुनाई, कृषि तथा बागवानी के क्षेत्र में भी काम करती हैं। परंतु वर्तमान में, कुछ पैसा कमाने के लिए वे निर्माण कार्यों में मज़दूरी का काम भी कर रही हैं। इसके अलावा वे रेत की छनाई (नदी किनारों से रेत निकालने) और यहां तक कि सिनेमा के टिकटों की कालाबाजारी और देसी शराब बेचने का काम भी कर रही हैं। बाजार में सामग्रियों के विक्रय में उनकी भागीदारी पहले की तरह ही जारी है। पहले जो काम बड़ी-बूढ़ी औरतें करती थीं, वे अब युवा महिलाएं भी करने

लगी हैं और वे बाजार में सक्रिय हो गई हैं। अनेक आदिवासी और मुस्लिम लड़कियां भी बाजार में फुटकर विक्रेता के रूप में काम करने लगी हैं।

कुछ शिक्षित महिलाएं स्थानीय सड़कों में कंपनियों के उत्पादों का विक्रय करने वाली सेल्स गर्ल के रूप में काम करती दिखाई देने लगी हैं। परंतु उनकी आर्थिक स्थिति कोई अधिक अच्छी नहीं है। इसके अलावा, विक्रय से प्राप्त होने वाला लाभ उन्हें पूरा-पूरा नहीं मिलता। वे कुछ थोक विक्रेताओं के एजेंट के रूप में काम करती हैं। वे साहूकारों से भारी दैनिक ब्याज पर कर्ज लेती हैं। इस प्रकार उन्हें ही असली लाभ हो रहा है। सरकार ने महिलाओं के कल्याण के लिए जो कुछ भी योजनाएं शुरू की हैं, वे उनसे अनभिज्ञ हैं और अवसर का लाभ उठाने में असमर्थ हैं। वे बस जैसे-तैसे अपना भरण-पोषण कर रही हैं।

मणिपुर में कुछ महिला उद्यमी सामने आई हैं। वे बुनाई और कशीदाकारी जैसे काम सफलतापूर्वक कर रही हैं और अपने लिए रोजगार सुनिश्चित किया हुआ है। परंतु उन्हें भी कच्चा माल मांगने में कठिनाई होती है। सड़कों की स्थिति अच्छी नहीं है और परिवहन व्यवस्था भी दुरुस्त नहीं है। स्वयं सहायता वाली महिला उद्यमी की आय प्रतिमाह दो हजार रुपये हो सकती है। परंतु उसके उत्पाद महगे होते हैं। वे जो भी लाभ कमाती हैं वह उनमें लगाए गए समय, कौशल और ऊर्जा के अनुरूप नहीं होती।

हथकरघा उत्पादों में गिरावट आना स्वाभाविक है क्योंकि नवी पीढ़ी जींस, सलवार, मैक्सी, मिडी और साड़ी पहनना पसंद करती है। बाहर की मिलों से बनकर आए उत्पाद हथकरघा उत्पादों से सस्ते भी होते हैं। सभी महिलाएं अपने घरों की भलाई के लिए काफी शारीरिक श्रम करती हैं, परंतु उसकी कोई गिनती नहीं होती।

राजनीतिक स्थिति एवं सशक्तीकरण

प्रारंभिक दिनों से ही राज्य की महिलाएं सार्वजनिक मामलों में भाग लेती रही हैं। यह भागीदारी महिलाओं के बाजार की स्थापना की अवधारणा से विकसित हुई है और ऐतिहासिक है। बाजार में जो महिलाएं हैं वे राज्य के सार्वजनिक मामलों में खूब शामिल होती हैं। यह जाना दिलचस्प हो सकता है कि मणिपुर की महिलाओं में पहली राजनीतिक चेतना का बीजारोपण 1939 में नुपीलाल (महिलाओं के आंदोलन) ने किया था। नुपीलाल का फौरी कारण चावल की

बढ़ती क्रीमत और मिल मालिकों द्वारा बाजार में उसकी आपूर्ति में डाली जा रही रुकावट थी। इससे महिलाओं को काफी आर्थिक संकट का सामना करना पड़ा और उनमें हताशा पैदा हो गई थी। महिलाओं ने विरोध किया और चावल के निर्यात के आदेश को मानने से इंकार कर दिया। नुपीलाल आंदोलन में महिलाओं को सफलता हाथ लगी परंतु आंदोलन के नेताओं को ब्रिटिश सैनिकों के हाथों काफी चोटें आई। अनेक धायल हुए, सताए गए और जेल भेज दिए गए। फलस्वरूप, अनेक महिलाएं राजनीतिक क्षेत्र में काम करने के लिए आगे आईं। वे निखिल मणिपुर महासभा नाम के राजनीतिक संगठन में शामिल हो गईं, जो बाद में मणिपुर राज्य कांग्रेस में बदल गया।

भारत की राष्ट्रीय शासन प्रणाली का अभिन्न अंग बनने के बाद मणिपुर की महिलाओं की राजनीतिक स्थिति में आमूल परिवर्तन आया है। महिलाओं की शिक्षा और आर्थिक सशक्तीकरण के मामले में उल्लेखनीय प्रगति हुई है। परंतु देश के अन्य भागों की महिलाओं जैसी राजनीतिक स्थिति प्राप्त करने के लिए मणिपुर की महिलाओं को अभी लंबा रास्ता तय करना होगा। राज्य के 60 सदस्यीय विधानसभा में केवल एक महिला सदस्य है। राजनीतिक क्षेत्र और निर्णायक भूमिका निभाने वाले संगठनों में समान स्थिति हासिल करने के लिए मणिपुर की महिलाओं को अभी और इंजार करना होगा।

महिलाओं के सशक्तीकरण के लिए सरकार ने अनेक कदम उठाए हैं, परंतु 1998-99 के राष्ट्रीय सर्वेक्षण ने स्पष्ट किया है कि मात्र 3.3 प्रतिशत महिलाएं ही निर्णय-प्रक्रिया में भाग लेती हैं। जहां तक विभिन्न महिला प्रतिनिधियों के शामिल होने का प्रश्न है, वह केवल रसोई का मैनू तैयार करने तक ही सीमित है, जोकि 87.4 प्रतिशत है। स्वास्थ्य और व्यक्तिगत स्वच्छता के मामले में 43.3 प्रतिशत, सजने-संवरने और परिष्करण में 66.3 प्रतिशत, माता-पिता और बच्चों की देखभाल में 63.2 प्रतिशत, बाजार के मामले में 28.3 प्रतिशत और मित्रों एवं संबंधियों के स्वागत-स्तकार में 28.3 प्रतिशत मामलों में महिलाओं की राय ली जाती है। बताया जाता है कि 25-49 वर्ष की आयु समूह की महिलाएं ही निर्णय लेती हैं। परीक्षाओं के प्रमुख (चांसलर) और रजिस्ट्रार जैसी उच्चस्तरीय निर्णय प्रक्रिया में 1997-1999 के दौरान महिलाओं की कोई भागीदारी नहीं देखी गई।

महिला निर्वाचकों की संख्या में वृद्धि हुई है, परंतु 8वें विधानसभा चुनाव में केवल एक महिला सदस्य चुनी गई। नौ विधानसभा चुनावों में 12 महिला उम्मीदवार थीं, परंतु एक भी नहीं चुनी गई। ग्राम पंचायतों में महिलाओं की संख्या 36 प्रतिशत हैं, जिला परिषदों में भी 36 प्रतिशत महिला सदस्य हैं।

स्वास्थ्य की स्थिति

मणिपुर की अधिकतर महिलाओं के स्वास्थ्य की स्थिति निराशाजनक है। वे पुरुषों की अपेक्षा अधिक समय तक काम करती हैं। घर में महिलाएं प्रतिदिन 10 से 12 घंटे काम करती हैं। यह अत्यधिक श्रम ही संभवतः मणिपुर की महिलाओं के खराब स्वास्थ्य का कारण है। परंतु हाल के वर्षों में महिलाओं के जीवन में एक नया परिवर्तन आया दिखता है। उनमें अच्छे स्वास्थ्य के बारे में जागरूकता आई है। शिक्षित महिलाएं बच्चों की संख्या सीमित रखना पसंद करने लगी हैं। वे परिवार नियोजन की उपयोगिता के बारे में यकीन करने लगी हैं। वर्तमान में, अधिकतर गर्भवती महिलाएं स्वास्थ्य की देखभाल के लिए अस्पताल जाती हैं और अपने बच्चों को जन्म भी अस्पताल में देना पसंद करती हैं। उपलब्ध आंकड़ों के अनुसार 17.3 प्रतिशत महिलाओं ने अस्पताल में बच्चे को जन्म दिया है जबकि 23.6 प्रतिशत ने स्थानीय दाई और नर्स (मिडवाइफ) की सहायता से। राज्य के अंदरूनी क्षेत्रों में सड़कों और संचार सुविधाओं की स्थिति अच्छी नहीं होने के कारण अनेक गर्भवती महिलाएं अस्पताल पहुंचने से पहले ही मर जाती हैं। स्थानीय स्तर पर इलाज की कोई सुविधा उपलब्ध नहीं होती।

पौष्टिक आहार की कमी के कारण कई महिलाएं कूपोषण की शिकार हैं। एड्स, हेपाटाइटिस और एनीमिया जैसी धातक बीमारियों की शिकार महिलाओं की संख्या में वृद्धि हुई है। मणिपुर में महिलाओं की जननदर 3.04 है जबकि अपेक्षित दर 2.5 है। एचआईवी पॉजिटिव महिलाओं की संख्या में वृद्धि हुई है। पहले ऐसा नहीं था। वर्ष 2000 में एचआईवी पॉजिटिव व्यक्तियों की संख्या मात्र 401 थी। पर्वतीय और दूरदराज के क्षेत्रों में सड़क और संपर्क तथा चिकित्सा सुविधाओं के अभाव के कारण महिलाओं को अपने जीवन में अनेक चुनौतियों का सामना करना पड़ता है। प्रसव के समय महिलाओं की मृत्युदर काफी ऊंची है। महिलाओं की संख्या में आ रही कमी के पीछे यह भी एक कारण है। 1991 के

जनगणना के अनुसार मणिपुर में प्रतिहजार पुरुषों पर महिलाओं की संख्या 955 थी, जो 2001 की जनगणना में 982 दर्ज की गई। जन्म के बाद 1,000 बच्चों में से 71 पहली वर्षगांठ से पहले ही मर जाते हैं। मणिपुर में महिलाओं की औसत आयु 62 वर्ष है। खराब स्वास्थ्य सेवा, स्वच्छता का अभाव, स्वास्थ्य सुविधाओं की दयनीय स्थिति, सुरक्षित पेयजल का अभाव, स्वास्थ्य देखभाल के लिए वित्तीय संसाधनों का अभाव आदि ऐसे कुछ कारक हैं जिनके कारण महिलाएं अपने स्वास्थ्य की उचित देखभाल नहीं कर पातीं। चिकित्सा सुविधा का अभाव महिलाओं की बीमारी और शिशु जन्म के समय उनकी मृत्यु का प्रमुख कारण है।

बदलते समय में महिलाओं के जीवन में यद्यपि कुछ बदलाव अवश्यम्भावी हो गए हैं, तो भी इस बारे में कई बार सोचना पड़ता है कि यह बदलाव कितना जरूरी है। दकियानूसी रिवाजों के कारण महिलाओं को पुरुषों की दासी बनाने वाली प्रवृत्ति और महिलाओं के लिए वर्जित करितपय कार्यों के साथ-साथ बुविवाह प्रथा अभी भी विद्यमान है। गांवों की नौ से दस वर्ष आयु की लड़कियों को घरों में झाड़-पोछा और बर्तन मांजने आदि जैसे घरेलू कार्यों में लगाया जाता है। यहां तक कि छोटे बच्चों की देखभाल का काम भी उनसे लिया जाता है। यहां यह कहना निर्धक नहीं होगा कि ये सब कार्य बच्चों के शोषण कानून के विरुद्ध हैं। कानून में प्रावधान के बावजूद महिलाओं को माता-पिता की संपत्ति में कोई अधिकार नहीं दिया जाता।

इस बात की आशंका व्यक्त की जाती है कि बदलाव की जो ऊंची-ऊंची लहरें बाहरी इलाजों में उठ रही हैं, वे कहीं यहां की महिलाओं के शांत जीवन को भी अपने आगोश में न ले लें। आसपास चाहे जो भी बदलाव देखने को मिल रहे हों, बालिका का जन्म यहां अभी भी अभिशाप माना जाता है।

मणिपुर में महिलाओं के विरुद्ध अपराध बढ़ रहे हैं। पिछले 20 वर्षों से समाज में उग्रवाद की समस्या बनी हुई है। सशस्त्र बाल विशेषाधिकार अधिनियम, 1958 राज्य में लागू है। कानून में दिए गए अधिकारों का दुरुपयोग करते हुए सुरक्षा बल ज़ोर-जबरदस्ती, मारपीट, हत्या आदि आपराधिक कार्यों को अंजाम देते हैं, जिनकी शिकार महिलाएं भी हो रही हैं। इन सब के बीच, महिलाओं को काफी अपमान और दुखद स्थितियों

का सामना करना पड़ता है। इसके अतिरिक्त कुछ गिरोह अवयस्क लड़कियों को फिरौती के लिए अपहरण कर उनकी जीवनलीला ही समाप्त कर देते हैं। मणिपुर के पर्वतीय और मैदानी इलाकों के हर कोने में इनकी कराह और करुण पुकार गूंजती रही है। मणिपुर की परिश्रमी महिलाएं अपनी आजीविका के लिए निर्भय होकर पर्वतों, घाटियों और झीलों में काम नहीं कर सकतीं।

महिलाओं के विरुद्ध अपराध महिलाओं के अधिकारों का गंभीर उल्लंघन है। महिलाओं के अधिकारों के हनन को रोकने के तमाम कानूनी प्रावधानों और उनकी स्थिति में सुधार हेतु महिला सशक्तीकरण की आवश्यकता के बारे में सुविचारित राय के बावजूद उनके विरुद्ध अपराधों में निरंतर बुद्धि हो रही है। यह महिलाओं की गरिमा को ठेस पहुंचाने जैसा है।

आधुनिक समाज में महिलाओं की गरिमा और सम्मान को ठेस पहुंचाने के अनेक उदाहरण देखने को मिले हैं। यह सभी के लिए चिंता का विषय है। मणिपुर प्रकृति का आवास है। मणिपुर की माटी की शांति और सौम्यता का स्पर्श पाकर लोग प्रफुल्लित हो जाते हैं। वे इस प्रदेश की धरती की संस्कृति और परंपरा के मूल्य को हमेशा याद रखते हैं। महिलाओं का सम्मान होता है और उन्हें

मां का रूप माना जाता है। यही वे कारण हैं कि महिलाएं बिना किसी भय या पाबंदी के मुक्त रूप से धूम सकती हैं। वे बनों और पहाड़ियों में लकड़ी (ईंधन) इकट्ठा करने, झीलों में मछली पकड़ने और बाजारों में चीजों की बिक्री करने जाती हैं। यही उनकी जीवनशैली है—निर्भय और चिंतामुक्त।

आज हम 21वीं शताब्दी में प्रवेश कर चुके हैं। विज्ञान और प्रौद्योगिकी का विकास हमारी ईंद्रियां अनुभव कर सकती हैं। मानव की अनेक कल्पनाएं आज हक्कीकत में बदल चुकी हैं। अंतरिक्ष में प्रक्षेपण, धरती के गर्भ में गहरे प्रवेश और समुद्र की सतह का दोहन आज यथार्थ बन चुके हैं। अनेक आविष्कार भी किए गए हैं। महिलाओं के उद्धार के लिए अनेक कानून भी बनाए गए हैं।

सभ्यता की इस लंबी श्रृंखला के बावजूद महिलाओं के अधिकारों का हनन करते हुए उनके विरुद्ध पाश्विक बल का उपयोग दिन-ब-दिन बढ़ता जा रहा है। इसका इस धरती की संपन्न संस्कृति और परंपरा पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ा है। एक समय था जब महिलाओं की वस्तुओं को चोर भी हाथ नहीं लगाते थे, परंतु अब वे दिन चले गए। महिला और पुरुष के बीच केवल उदात्त भावनाओं के साथ

प्रगाढ़ता अब अतीत की बात हो चली है और महिलाओं को अब वासना की दृष्टि से देखा जाता है। महिलाओं की गरिमा के प्रतिकूल करतूं अब आम होती जा रही हैं। पुरुषों द्वारा महिलाओं के विरुद्ध बल प्रयोग अब बढ़ गया है, जिसके कारण छेड़छाड़, प्रताड़ना, अपहरण, बलात्कार आदि की घटनाएं ज्यादा हो रही हैं। पुरुष प्रधान समाज में पुरुष श्रेष्ठता की इस स्थिति में महिलाओं की सुरक्षा और सम्मान की कई गारंटी नहीं रह गई है। विज्ञान और प्रौद्योगिकी के मौजूदा युग में यह एक सच्चाई है, वह भी इस तथ्य के बावजूद कि समाज में उनका योगदान काफी अधिक है। यही कारण है कि समाज में लड़की के जन्म को अभिशाप माना जाता है। एक दुखद बात यह है कि गर्भस्थ शिशु के लिंग परीक्षण की तकनीक का दुरुपयोग अब तेजी से बढ़ रहा है। गर्भस्थ शिशु की पहचान लड़की के रूप में होने पर निर्दयतापूर्वक धूम हत्या कर दी जाती है। कई सख्त कानूनों के बावजूद यह सिलसिला थमा नहीं है। □

(लेखिका मणिपुर राज्य महिला आयोग की अध्यक्ष है।
ई-मेल : mscw_imphal@yahoo.com)

पूर्वोत्तर में सघन सड़क मार्ग

पूर्वोत्तर राज्यों की राजधानियों व अन्य प्रमुख शहरों के बीच सड़क नेटवर्क को मज़बूत बनाने का ख़ाका तैयार किया जा रहा है। पूर्वोत्तर क्षेत्र में रेलमार्गों का नेटवर्क न होने के कारण इस क्षेत्र की आपूर्ति व आवागमन का मुख्य जरिया सड़क मार्ग ही है। पूर्वोत्तर में सुरक्षा व्यवस्था को चौकस बनाने के लिए इस क्षेत्र में सड़क नेटवर्क को अधिक मज़बूत बनाए जाने की ज़रूरत महसूस की जा रही है। क्षेत्र की सीमाएं चीन, नेपाल, बांग्लादेश, म्यांमा और भूटान से जुड़ी हैं।

सड़क मार्गों का जाल न होने से मेघालय, नगालैंड, सिक्किम, मिज़ोरम, अरुणाचल प्रदेश, त्रिपुरा, असम, मणिपुर के बीच आवागमन कुछ गिनी-चुनी सड़कों के द्वारा ही होता है। इन सड़कों के रखरखाव में कमी के कारण राज्यों के बीच और अंदरूनी हिस्सों के आपसी लिंक टूटने की समस्या बनी रहती है। इससे क्षेत्र की सुरक्षा व्यवस्था पर भी असर पड़ता है।

इस क्षेत्र में हेलिकॉप्टर सेवा के विस्तार की भी योजना है। पूर्वोत्तर में आने वाले आठ राज्यों की राजधानियों और अन्यों हिस्सों के लिए हेलिपैड हैं जिनका उपयोग मुख्य रूप से सरकारी स्तर पर ही होता है। इस क्षेत्र में बड़े स्तर पर हेलिपैड बनाने और हेलिकॉप्टरों के बेड़ों का विस्तार करने पर भी विचार किया जा रहा है। सभी राज्यों से कहा गया है कि वे हेलिपैड बनाने के लिए स्थलों का चयन करें। हेलिकॉप्टर सेवा में विस्तार के लिए निजी कंपनियों का सहयोग

लिया जाएगा। राज्यों में हेलिकॉप्टर सेवा बढ़ाने के लिए केंद्र वित्तीय सहयोग देने पर भी विचार कर रहा है।

हेलिकॉप्टर सेवा में विस्तार होने से पूर्वोत्तर में पर्यटन को भी बूस्ट मिलेगा। सड़क मार्ग से पर्यटन स्थलों पर जाने के लिए पर्यटकों का काफी समय बर्बाद हो जाता है। हेलिकॉप्टर सेवा से पर्यटक इस क्षेत्र में बड़ी संख्या में भ्रमण के लिए प्रोत्साहित होंगे। इन क्षेत्रों की विकास परियोजनाओं के ख़ाके में पर्यटन क्षेत्र के विकास पर भी खासा ध्यान दिया जा रहा है। इन क्षेत्रों के विकास का काफी बड़ा हिस्सा पर्यटन से जुड़ा है। इसलिए विकास कार्यक्रम समन्वित ढंग से चलाए जाएंगे।

केंद्रीय शहरी विकास मंत्रालय पूर्वोत्तर के लिए विशेष शहरी विकास कार्यक्रम भी तैयार कर रहा है। सूत्रों का कहना है कि पूर्वोत्तर में आधारभूत संरचना का विकास अपेक्षित गति नहीं पकड़ रहा है। राज्यों की कई केंद्र समर्थित परियोजनाएं पिछड़ रही हैं। इस स्थिति को देख मंत्रालय ने समयबद्ध विकास कार्यक्रम शुरू करने का फ़ैसला किया है। कार्यक्रम के पहले चरण में पूर्वोत्तर के छह राज्यों की राजधानियों—अगरतला, आइजोल, गांगटोक, कोहिमा और शिलांग को लिया गया है। यह कार्यक्रम एशिया विकास बैंक की मदद से शुरू हो रहा है। पहले चरण में विभिन्न परियोजनाओं पर 1,371 करोड़ रुपये ख़र्च होंगे। उसके बाद, ईटानगर, गुवाहाटी व इंफाल में विशेष विकास कार्यक्रम शुरू होंगे। □

ज़रूरत जैव कृषि की

● डब्ल्यू. राधापियारी देवी

जैव कृषि एक ऐसी उत्पादन प्रबंधन प्रणाली है जो कृषि को टिकाऊ बनाने हेतु बाह्य सामग्रियों का न्यूनतम इस्तेमाल करने और मिश्रित उर्वरकों के साथ ही कीटनाशकों के इस्तेमाल से बचने के आधारभूत सिद्धांत पर आधारित है।

कृषि का इतिहास और उसका पारंपरिक ज्ञान, विशेषकर जैव कृषि तथा पोषण और औषधीय उद्देश्यों के लिए खाद्य पदार्थों के संरक्षण और प्रसंस्करण से संबंधित जनजातीय समुदायों का ज्ञान विश्व में प्राचीनतम है। पारंपरिक व्यवहारों, ज्ञान और बुद्धि का मूल्यांकन करने और उन्हें आपस में जोड़कर सतत कृषिगत विकास के लिए उनके इस्तेमाल के लिए जोरदार प्रयास किए जा रहे हैं।

जैव कृषि के लाभ

- नाइट्रोजन और फ़ास्फोरस जैसे पोषकों की उपलब्धता बढ़ाना।
- रासायनिक उर्वरकों के इस्तेमाल में 25-30 प्रतिशत कमी।

- कृषि उत्पादकता में वृद्धि होना। सामान्यतः अनाजों के उत्पादन में 10-40 प्रतिशत वृद्धि और वानस्पतिक उत्पादन में 25-30 प्रतिशत वृद्धि।
- जैविक रूप से मिट्टी को क्रियाशील बनाकर मिट्टी की प्राकृतिक उर्वरता बढ़ाना।
- पौधे के अवशेषों में मदद करके मिट्टी के कार्बन/नाइट्रोजन अनुपात और उसकी बनावट में सुधार लाना और मिट्टी की जलधारण क्षमता बढ़ाना।
- सामान्य तौर पर पौधे की वृद्धि तेज़ करना और विशेषकर जड़ों की वृद्धि बढ़ाना, क्योंकि इनसे विभिन्न प्रकार के वृद्धिकारी हामोर्न निकलते हैं और ये बेहतर पोषक उपलब्ध कराने के साथ ही सूखा और नमी की स्थिति में पौधे की सहनशीलता बढ़ाते हैं।
- कुछ पोषक जैव पदार्थ फफूंदी और एटीबायोटिक जैसे पदार्थ छोड़ते हैं जो बीमारियों के प्रति प्रतिरोधक क्षमता बढ़ाकर

बीमारियों की रोकथाम करते हैं।
मणिपुर में जैव कृषि की प्रासंगिकता

कुछ खास विशेषताओं के कारण मणिपुर को एक ऐसी श्रेणी में रखा गया है जहां एक ओर तो विकास संबंधी बाधाएं हैं वहीं दूसरी ओर वैश्विक आर्थिक परिदृश्य में उनका इस्तेमाल इस क्षेत्र के फ़ायदे के लिए किया जा सकता है। यह राज्य जैव कृषि के लिए काफी उपयुक्त है। राज्य के कृषि और बागवानी उत्पादों की जैविक और पर्यावरण-हितैषी गुणों के कारण इसमें पूँजी लगाकर जैविक उत्पादों के उभरते बाजार में अत्यधिक उपलब्धियां प्राप्त की जा सकती हैं।

मणिपुर पूर्वी हिमालयी कृषि-जलवायु क्षेत्र में स्थित है। यह मैदानी तथा पहाड़ी दो भागों में विभाजित है। इस घाटी की चर्चा अक्सर चावल के भंडार के रूप में की जाती है। यह राज्य देश की मानसूनी पट्टी में स्थित है जहां

तालिका-1

खेती में चावल का क्षेत्र, उत्पादन और पैदावार

चावल उत्पादक क्षेत्र (हजार हेक्टेयर)				उत्पादन (हजार मी.टन)		पैदावार (किग्रा/हेक्टेयर)	
वर्ष	घाटी	पहाड़ी	मणिपुर का कुल योग	घाटी	पहाड़ी	मणिपुर	अखिल भारतीय
2001-02	91	29.2	42.5 (26.1)	162.6	249.4	137.9	2382
2002-03	80.38	29.55	43.18	—	153.11	—	2192
2003-04	80.78	35.26	41.79	—	157.83	226.95	154.29
							2416

टिप्पणी : आंकड़े में चावल की खेती वाले क्षेत्र की तुलना में कुल भूमि क्षेत्र का प्रतिशत दर्शाया गया है।

स्रोत : आरसीईएस (विभिन्न मुद्रे) और एसएएम 2004

घाटी में उष्णकटिबंधीय और अर्द्ध-समशीतोष्ण जलवायु पाई जाती है। यहां पहले से ही कृषि आधारित अर्थव्यवस्था मौजूद है। कृषि यहां के लोगों का मुख्य पेशा है और चावल उनका मुख्य भोजन। इस राज्य की ग्रामीण विकास के लिए सतत कृषि अनिवार्य आवश्यकता है। कृषि की धारणीयता के लिए उन प्रणालियों की आवश्यकता है जो पर्यावरण के तौर पर ठोस, आर्थिक तौर पर व्यवहार्य और सामाजिक तौर पर स्वीकार्य हैं।

मणिपुर की कई खास विशेषताएं इसकी सीमाओं और शक्तियों को निर्धारित करती हैं जिनका प्रभाव आसपास के मैदानी भागों पर भी पड़ता है। इन पारिस्थितिकीय संबंधों के कारण इस पहाड़ी भाग में प्रौद्योगिकी और उसके उत्पादों के विकल्प काफी सीमित हो जाते हैं। इस क्षेत्र में उर्वर और जैविक रूप से समृद्ध मिट्टी उपलब्ध है। यहां पर्याप्त वर्षा होने के साथ ही नदी घाटियों और जलधाराओं जैसे जल संसाधन भी मौजूद हैं। ऐसे में जलवायु की विविधताओं के कारण विभिन्न प्रकार की फसलों की संभावनाओं को बल मिलता है। दूसरी ओर ढलानों और भारी वर्षा के कारण मिट्टी में अस्थिरता और अम्लीयता बढ़ती है और कृषि तथा भूमि प्रबंधन एक कठिन काम होने के साथ-साथ अत्यधिक श्रम-आधारित हो जाता है। जनसंख्या की तुलना में विस्तृत भौगोलिक क्षेत्र, ढलानदार वनों और भूमि अधिकारों के कारण खेती की भूमि का आकार निर्धारित होता है। यहां के पहाड़ों के कारण भूजल के दोहन की संभावना क्षीण है और इसके फलस्वरूप फसलों की सिंचाई की संभावना काफी सीमित है। इसलिए नहरों और कुओं को छोड़कर अन्य स्रोतों के द्वारा ही

अधिकांश सिंचाई होती है।

इस क्षेत्र की कृषि-पारिस्थितिकी और इसके सामाजिक रिवाज देश के शेष भाग से भिन्न हैं और कृषि के लिए भूमि की कमी होना उतनी बड़ी बाधा नहीं है जितना की उपलब्ध भूमि का लाभदायक इस्तेमाल सुनिश्चित करना है। इस क्षेत्र के विकास के लिए वैकल्पिक और समुचित रणनीतियों को सावधानीपूर्वक तैयार करना ज़रूरी है जिसमें कृषि-पारिस्थितिकीय शक्तियों और सीमाओं, उदीयमान युग के संभावित बाजार आदि का ध्यान रखने के साथ ही देश की पारिस्थितिकीय स्थितियों के बारे में क्षेत्र के निर्णायक संपर्क को भी ध्यान में रखना चाहिए।

मणिपुर में किसान अब भी कुछ ऐसे रासायनिक उर्वरकों और कीटनाशकों का इस्तेमाल करते हैं जो नुकसानदायक हैं और जिन्हें 1988 से ही पूरे भारत वर्ष में प्रतिबंधित कर दिया गया है। इसमें कोई संदेह नहीं कि खेती में रासायनिक उर्वरकों के इस्तेमाल से पैदावार बढ़ती है किंतु मिट्टी, जल और वायु के संभावित तौर पर प्रदूषित होने के कारण जीवन की गुणवत्ता भी बुरी तरह से प्रभावित होती है। कीटनाशकों और उर्वरकों के अत्यधिक इस्तेमाल से यहां की मिट्टी और पर्यावरण को नुकसान हुआ है। कीटनाशकों के अवक्षेप सिगरेट के बाद यहां कैंसर का दूसरा सबसे बड़ा कारण है। इसके अलावा मिट्टी में मौजूद कीटनाशकों और उर्वरकों के अवक्षेप मिट्टी के लाभदायक सूक्ष्म जीवाणुओं के लिए भी नुकसानदायक हैं। इससे मिट्टी की उर्वरता कम होती है। उर्वरकों का बहुत ही थोड़े समय के लिए उत्पादकता पर सकारात्मक प्रभाव पड़ता है पर भूजल और जलाशयों के प्रदूषित

होने के कारण इसका दीर्घकालिक नकारात्मक प्रभाव पड़ता है। जहां तक उर्वरक की लागत का प्रश्न है, स्थिति और भी बदतर है। वर्ष 1991-92 में यहां प्रति हेक्टेयर 69.8 किलोग्राम उर्वरक का इस्तेमाल होता था जो वर्ष 2006-07 में बढ़कर 113.3 किलोग्राम हो गया। डायमोनियम फॉस्फेट के एक बोरे की कीमत सरकार द्वारा 490 रुपये निर्धारित है किंतु कालाबाजारी के जरिये इसे यहां 600-700 रुपये में बेचा जाता है। हमने रासायनिक उर्वरकों और कीटनाशकों के इस्तेमाल को बढ़ाकर इस पर आने वाली लागत को भी काफी बढ़ा दिया है।

इसके बावजूद मणिपुर ने पारंपरिक व्यवहार कायम रखा है और जैविक कृषि की ओर झुकाव को भी दर्शाया है जो पारिस्थितिकीय दृष्टि से लाभप्रद होने के साथ-साथ राज्य के विकास के लिए भी अनुकूल है। इस राज्य में इस प्रकार की गतिविधियां आसपास के अन्य क्षेत्रों को भी प्रभावित कर सकती हैं। यह बात सर्वविदित है कि हरित क्रांति की उर्वरक आधारित प्रौद्योगिकी और कृषि के बारे में विकासोन्मुखी रणनीति को अत्यधिक बढ़ावा देना भारत सहित विकासशील देशों की कई कृषि प्रणालियों के लिए अनुपयुक्त साबित हुए हैं। मणिपुर के किसान जैविक खादों का अधिक इस्तेमाल करते हैं जो परंपरा के अनुसार है। यह उल्लेखनीय है कि केंद्र सरकार के अलावा गुजरात, महाराष्ट्र, कर्नाटक, मध्य प्रदेश और उत्तराखण्ड सहित पांच राज्यों के पास जैविक कृषि की नीतियां मौजूद हैं। आंध्र प्रदेश इस प्रक्रिया की रूपरेखा तैयार करने में जुटा है। इसके अलावा हिमाचल प्रदेश ने भी जैविक कृषि पर एक राज्यस्तरीय परियोजना शुरू की है। पूर्वोत्तर के राज्यों ने भी जैविक कृषि को बढ़ावा देने के लिए एक

तालिका-2

कृषि संबंधी आर्थिक संकेतक

राज्य	खेत का औसत आकार (हेक्टेयर में)	सिंचित क्षेत्र में फसल (प्रतिशत में)	उर्वरक एनकेपी (प्रति हेक्टेयर)	प्रति वर्ग किमी जनसंख्या (घनत्व)	वन/पुनरुत्पादन क्षेत्र (प्रतिशत)	एनएसए/भौगोलिक क्षेत्र (प्रतिशत)	फसल के कुल क्षेत्र में फसल लगाने की प्रवृत्ति का प्रतिशत				
							चावल (%)	मक्का (%)	दलहन (तिलहन) (%)	फल (%)	सब्जी (%)
मणिपुर	2.2	34.7	105	107	27.2	6.3	76.3	1.4	4.3	3.9	14

स्रोत : आरसीईएस (विभिन्न मुद्रे) और एसएएम 2004

योजना तैयार की है। इस राज्य में जैविक कृषि के बारे में अध्ययन के रास्ते में एक बड़ी रुकावट यह है कि उत्पादन के बारे में विश्वसनीय आंकड़े का अभाव है। कुछ गैर-सरकारी संगठन इस क्षेत्र में सक्रिय हैं।

इस राज्य के विकास के लिए वैकल्पिक और समुचित रणनीतियों को सावधानीपूर्वक तैयार की ज़रूरत है जिसमें कृषि-पारिस्थितिकी की मजबूती और सीमाओं तथा उभरते युग की बाजार संभावनाओं का पूरा ध्यान होना चाहिए। कृषि उद्यम और फसल क्षेत्र का सबसे बड़ा हिस्सा बाहरी उर्वरक का इस्तेमाल न करने की पूर्णतः पारंपरिक प्रक्रिया के बाद जैविक कृषि की एक अन्य प्रक्रिया के प्रति समर्पित है। आमतौर पर छोटे किसानों द्वारा उर्वरकों का इस्तेमाल किया जाता है। हालांकि बड़े किसान भी उर्वरकों का उन खेतों में इस्तेमाल करते हैं

जहां सिंचाई का प्रबंध हो, किंतु पहाड़ी भूमि पर खेती के लिए उन संसाधनों का अभाव है। उर्वरकों का इस्तेमाल करने वाले उद्यमों में रासायनिक कीटनाशकों सहित अन्य प्रकार की आधुनिक प्रौद्योगिकी का इस्तेमाल करना भी शामिल है।

जैविक कृषि पशुधन के स्वामित्व के साथ सकारात्मक तौर पर जुड़ा है और छोटे खेतों वाले किसानों के समूह के लिए इस संसाधन का प्रभाव बढ़ जाता है। जैविक खेती के लिए मोटे अनाज और चारा तथा सब्जियां प्राथमिक फ़सलें हैं जबकि तिलहनों, दलहनों, मिश्रित फ़सलों और फलों को पूर्णतः पारंपरिक प्रक्रिया के लिए प्राथमिकता दी जाती है। चावल और गन्ना ऐसी फ़सलें हैं जिनमें उर्वरकों के इस्तेमाल की अधिक संभावना है। पारिस्थितिकी पर विचार करते हुए और मैदानी भागों में उद्योग और कृषि

के क्षेत्र में अधिकांश आधुनिक विधियों के संभावित प्रतिकूल प्रभावों को ध्यान में रखते हुए भूमि के लिए जनजातीय रिवाजों, पशुधन के स्वामित्व और सिंचाई की सीमाओं के रूप में आर्थिक मजबूती के रूप में राज्य के विकास में जैविक कृषि एक आशाजनक क्षेत्र है। प्राकृतिक तौर पर विकसित प्रौद्योगिकीय व्यवहारों को बदलकर राष्ट्रीय और अंतरराष्ट्रीय बाजारों में अधिकाधिक लाभ अर्जित किया जा सकता है।

इस क्षेत्र में अनुभव-आधारित विश्लेषण से भी सब्जियों और चारे की अपेक्षित संभावना का पता चलता है। इन फ़सलों के अवशेषों के रिसाइकिलिंग से प्रत्यक्षतः उनका बदलाव फ़सलों के बायोमास के रूप में होता है। यह कार्य अप्रत्यक्ष रूप से पशुओं के माध्यम से भी होता है, जिसका लाभ प्राप्त किया जा सकता है। इस व्यवहार को आधुनिक विधियों की तुलना में

तालिका-3

मणिपुर के जिलों में कृषि भूमि का वितरण (हेक्टेयर में)

जिला	क्षेत्र	कृषि भूमि	नयी कृषि भूमि जो जल जमाव वाले क्षेत्रों को बदल कर हासिल की गई है	कुल कृषि भूमि	कुल क्षेत्र में कृषि भूमि का प्रतिशत
घाटी					
थौबल	51,400	21,496.50	1,470.50	22,967	44.68
बिष्णुपुर	49,600	26,138.60	—	26,138	52.70
इंफाल*	1,22,800	60,616.00	267.60	60,884.40	49.58
कुल	2,23,800	1,08,251.90	1,738.10	1,09,990	49.15
	(10.02)			(73.18)	
पहाड़ी					
सेनापति	3,27,100	11,101.82	—	11,101.82	3.39
तमेंगलोंग	4,39,100	6,907.89	—	6,907.89	1.58
चूड़ाचांदपुर	4,57,000	9,675.02	—	9,675.02	2.12
चंदेल	3,31,300	6,192.82	—	6,192.82	1.87
उखरुल	4,54,400	6,442.92	—	6,442.92	1.42
कुल	20,08,900	40,320.47	—	40,320.47	2.00
	(89.98)			(26.82)	
मणिपुर	22,32,700	1,48,572.62	173.81	1,50,310.72	6.73
	(100)				

* इंफाल पूर्वी और इंफाल पश्चिमी का संयुक्त आंकड़ा।

स्रोत : एमआरएसएसी

प्राथमिकता दी जाती है क्योंकि इन्हें गरीबी से निपटने के एक सशक्त औजार के रूप में देखा जाता है। साथ ही प्रसंस्करण की गतिविधियों और प्रणालीबद्ध जैविक खेती के माध्यम से पशुधन और वानस्पतिक उत्पाद मूल्य-संवर्द्धन को बढ़ावा देते हैं। यह निवेश को आकर्षित करने में मददगार हो सकता है। इसके बल पर स्त्री-पुरुष समानता के साथ श्रमिकों की सार्थक भागीदारी के साथ ही स्वदेशी पहचान कायम रखते हुए बाहरी अर्थव्यवस्था के साथ क्षेत्र को जोड़ने में आसानी होगी। किसी क्षेत्र की मज़बूती स्थिरता, प्राकृतिकता और परंपराओं से जुड़ी होती है जो उसे प्राकृतिक सौंदर्य, अमन और समृद्धि प्रदान करती है। इस क्षेत्र द्वारा राष्ट्र उपलब्ध कराया जा रहा परिवेश निश्चित तौर पर आर्थिक विकास के लिए मददगार हो सकता है।

उपसंहार

जैविक कृषि सभी प्रकार की धारणीय कृषि और ग्रामीण विकास के लक्ष्यों के प्रति सकारात्मक होने के साथ-साथ फ़सल उत्पादन में सुधार लाने के लिए मिट्टी की उर्वरता कायम रखने और किसानों की सामाजिक-आर्थिक स्थितियों में सुधार लाने में मददगार है। मिट्टी को स्वस्थ बनाना जैविक कृषि के सबसे बड़े लाभों में से एक है। इनके साथ लाभादायक और स्वस्थ जीवाणु, फ़ूलद और बैक्टीरिया होते हैं जो बीमारी पैदा करने वाले नुकसानदायक बैक्टीरिया और फ़ूलद को नियंत्रित करते हैं। समुचित तौर पर व्यवस्थित जैविक कृषि से जल प्रदूषण कम होता है जिससे खेत में जल

और मिट्टी का संरक्षण होता है और इस प्रकार कृषि आधारित जैव-विविधता निरंतर कायम रहती है। प्राकृतिक संरक्षण के प्रति दृढ़प्रतिज्ञ होना जैविक कृषि की एक अनिवार्यता है।

मणिपुर राज्य की विशेष प्रकृति और इसकी अवस्थिति को ध्यान में रखते हुए जैविक खेती की शुरुआत और इन क्षेत्रों में जैविक खाद तथा जैविक कंपोस्ट इस्तेमाल पर जोर देना चाहिए जो नियांत के लिए भी लाभदायक हो सकता है। पौधों के पोषक तत्वों के जैविक स्रोतों को बढ़ावा देने के लिए प्रयास की ज़रूरत है। विशाल कृषि क्षेत्र होने के कारण इस राज्य के लिए तुलनात्मक दृष्टि से यह लाभदायक है क्योंकि यह रासायनिक प्रदूषण से मुक्त रहने के साथ ही विविधतापूर्ण कृषि जलवायु की विशिष्ट स्थितियों के बीच फैला हुआ है जिसे जल्द ही जैविक कृषि के रूप में आसानी से परिणत किया जा सकता है। राज्य के किसान पोषकों के एक स्रोत के रूप में अक्सर जैविक कंपोस्ट का इस्तेमाल करते हैं जो उन्हें अपने खेतों से अथवा स्थानीय रूप में उपलब्ध हो जाता है। मणिपुर में जैविक कृषि को अपनाने की अपार संभावना है जहां ग्रामीण और शहरी कंपोस्ट फ़सलों के अवक्षेप और जैविक उर्वरकों आदि की प्रचुरता है। इस राज्य की जनता पारिस्थितिकीय विकास के लिए संसाधनों और नीतियों की मांग कर रही है ताकि इस क्षेत्र और बाजार की संभावनाओं का दोहन किया जा सके। दिनानुदिन खेती की लागत बढ़ती जा रही है और उसी प्रकार किसानों की जोत की जमीन घटती जा रही है। इन परिस्थितियों में

अधिकांश किसानों के लिए खेती की व्यवहार्यता प्रभावित होती है। कुछेक बड़े किसानों को छोड़कर, प्रायः सभी किसान कर्ज के मकड़ाजाल में फ़ंसे हैं और ऋण अदायगी करने में असमर्थ हैं। भूमि को ऋणदाताओं के पास बंधक रख दिया जाता है जो कभी-कभी बसूली के लिए कठिन चाल चलते हैं। किसान अक्सर अपनी भूमि को खो देने के भय के बीच जीवन गुजारते हैं। इस अत्यंत कठिन किंतु अत्यावश्यक कार्य को निपटाने के लिए दो बातें काफी महत्वपूर्ण हैं— काम करने की इच्छाशक्ति और राज्य में जैविक खेती की गतिविधि के लिए सकारात्मक वातावरण।

जैविक कृषि का नीतिगत दृष्टिकोण मिशन-आधारित और किसानों-नुस्खी होना चाहिए जो वाणिज्यिक और कारपोरेट-केंद्रित जैविक कृषि के दृष्टिकोण से भिन्न हो, ताकि कृषि का क्षेत्र आर्थिक और पारिस्थितिकीय तौर पर धारणीय हो सके। आधुनिक कृषि प्रणालियां प्रकृति, मानव और सभ्यता के लिए थकानकारी, शोषणकारी और अपमानजनक साबित हुई हैं। इसलिए हमें एक ऐसी कृषि प्रणाली को अपनाना है जो हमारे किसानों को उनका स्वाभिमान, आत्मसम्मान, आत्मविश्वास को वापस लाने के साथ ही उनके पूर्वजों की कृषि से जुड़ी विरासत के प्रति विश्वास को वापस ला सके। इसलिए मणिपुर में जैविक खेती के लिए जल्द-से-जल्द एक गंभीर योजना की ज़रूरत है। □

(लेखिका मणिपुर विश्वविद्यालय के जैव विज्ञान विभाग में शोध अध्येता हैं।
ई-मेल: radhawang@gmail.com)

अतुल्य भारत अभियान को मिला वर्ल्ड ट्रैवल अवार्ड

पर्यटन को बढ़ावा देने के लिए भारत सरकार की ओर से शुरू किए गए अभियान ‘अतुल्य भारत’ अथवा ‘इनक्रेडिबल इंडिया’ ने साल के सर्वश्रेष्ठ अभियान का वर्ल्ड ट्रैवल अवार्ड जीता है। भारत की पर्यटन मंत्री कुमारी शैलजा को लंदन में आयोजित एक समारोह में यह पुरस्कार विश्व सुंदरी क्सेनिया कुखीनोवा ने दिया। लंदन में आयोजित विश्व बाजार में भाग लेने आई कुमारी शैलजा को ‘इनक्रेडिबल इंडिया’ अभियान के प्रचार-प्रसार के लिए एशियाई गिल्ड अवार्ड भी मिला। सुश्री शैलजा को यह पुरस्कार हाउस ऑफ लॉर्ड्स में दिया गया। पर्यटन मंत्री को सैंडवैल के लॉर्ड पीटर आर्कर ने यह पुरस्कार और फेलोशिप प्रदान किया। गिल्ड ने लंदन के इंडिया टूरिस्ट ऑफिस

के निदेशक जगदीश चंद्र को भी फेलोशिप दी। उन्हें ब्रिटेन में इस अभियान को लाने में कड़ी मेहनत करने के लिए फेलोशिप दी गई। एशियन गिल्ड के संयुक्त निदेशक सुरेश जोशी के अनुसार ‘अतुल्य भारत’ अभियान ने भारत की संस्कृति और परंपराओं को विस्तृत रूप देते हुए ब्रिटिश समाज में एशियाई लोगों के स्तर को बढ़ावा दिया है।

सुश्री शैलजा के अनुसार हमने वर्ष 2002 में देश को सबसे अलग, जीवत और अलग पहचान बाले देश के रूप में प्रचारित करने की योजना बनाई। उसके बाद अतुल्य भारत अभियान की शुरुआत हुई। इस अभियान के द्वारा देश की एक अलग पहचान बनाने का प्रयास किया गया। □

महिलाओं का राजनीतिक सशक्तीकरण

● एच. सुधीर
खेलेना गुरुमयूम

महिला सशक्तीकरण एक ऐसी प्रक्रिया है जो महिलाओं को भौतिक, बौद्धिक और मानव संसाधनों तक पहुंचने और उन पर नियंत्रण कायम करने में सक्षम बनाता है। उनका सशक्तीकरण शक्तियों का एक ऐसा पुनर्वितरण है जो पुरातन अवधारणाओं को चुनौती देने के साथ ही उन्हें सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक और सांस्कृतिक मुद्दों सहित समाज के सभी पहलुओं से संबंधित निर्णय प्रक्रिया में भागीदारी प्रदान करता है। इसलिए महिलाओं का राजनीतिक सशक्तीकरण इस प्रक्रिया का एक अभिन्न हिस्सा है और इसमें कोई संदेह नहीं की निर्णय प्रक्रिया में भागीदारी के बल पर सच्चे अर्थों में उनका सशक्तीकरण संभव हो सकता है। निर्णय प्रक्रिया से संबंधित निर्वाचित निकायों में महिलाओं के प्रतिनिधित्व के बल पर चुनौतियों से निपटने में नीतियों के निर्धारण हेतु महिलाओं के लिए नया प्रवेशद्वार खुलता है। ऐसे प्रतिनिधित्व के बल पर सामाजिक न्याय, भेदभाव और हिंसा के विरुद्ध संरक्षण से संबंधित उपायों का कारगर प्रबंधन सुनिश्चित हो सकता है।

भारतीय गणतंत्र ने महिला सशक्तीकरण को प्राथमिक महत्व दिया है। भारत के संविधान के 73वें और 74वें संशोधन का उद्देश्य निर्णय प्रक्रिया के निर्वाचन निकायों में महिलाओं के लिए आरक्षण लागू करना है जो राजनीतिक क्षेत्र में महिला सशक्तीकरण के लिए उठाया गया एक महत्वपूर्ण कदम है। इसके अतिरिक्त मौजूदा कानूनों में सुधार के साथ ही मारुत्ब लाभ अधिनियम 1951, चिकित्सकीय गर्भपात अधिनियम 1971, दहेज निषेध अधिनियम

1961 और 1986, समान वेतन अधिनियम 1986, महिलाओं/बालिकाओं का अनैतिक व्यापार (रोकथाम) अधिनियम 1986, बलात्कार कानून में संशोधन 1983, सती प्रथा रोकथाम अधिनियम 1987, जन्म-पूर्व जांच तकनीक नियमन और दुरुपयोग रोकथाम 1994 आदि ऐसे कदम हैं जो महिला सशक्तीकरण के लिए उठाए गए हैं।

महिला सशक्तीकरण को ध्यान में रखते हुए भारत में महिलाओं की स्थिति पर गठित समिति (सीएसडब्ल्यूआई) के साथ ही राष्ट्रीय महिला आयोग (एनसीडब्ल्यू) और राज्य महिला आयोग जैसे कदम भी उठाए गए हैं। विशेषकर राष्ट्रीय महिला आयोग के तीन प्रमुख कार्य हैं:

(1) कानूनों के क्रियान्वयन के बारे में सुझाव देना; (2) कानूनों की समीक्षा करना और (3) महिलाओं से संबंधित मुद्दों पर रिपोर्ट तैयार करना। राष्ट्रीय महिला सशक्तीकरण नीति, 2001 का उद्देश्य सामाजिक और आर्थिक नीतियों के माध्यम से महिलाओं को आत्मनिर्भरता प्रदान करने हेतु समुचित वातावरण तैयार करना, उनके अधिकारों की रक्षा करना, निर्णय प्रक्रिया तक समान पहुंच सुनिश्चित करना और महिलाओं के लिए अनुकूल संस्थागत समर्थन प्रणाली को सशक्त बनाना है।

विभिन्न राजनीतिक दलों और महिला मंचों सहित कई महिला संगठनों की ओर से दबाव के बाद वर्ष 1996 में महिला आरक्षण के लिए संविधान संशोधन विधेयक पेश किया गया था। इस संशोधन विधेयक में संसद के निचले सदन और राज्य की विधानसभाओं में महिलाओं के

लिए 33.3 प्रतिशत आरक्षण का प्रावधान शामिल है किंतु यह विधेयक अब तक लंबित है। संविधान के 73वें संशोधन के बाद मणिपुर पंचायती राज अधिनियम, 1944 लागू किया गया। यह अधिनियम भारतीय संविधान में वर्णित ग्रामीण संस्थापनाओं की त्रिस्तरीय प्रणाली से भिन्न है और इसके अंतर्गत मणिपुर के लिए केवल ज़िला परिषदों और ग्राम पंचायतों का ही प्रावधान है, पंचायत समिति का प्रावधान नहीं है।

इस पृष्ठभूमि में यह लेख मणिपुर राज्य के निर्वाचित स्थानीय निकायों में महिलाओं के राजनीतिक सशक्तीकरण के संदर्भ में समस्याओं और परिदृश्यों की विवेचना करता है। मणिपुर में नगरीय स्थानीय निकाय नगरपालिका परिषदों और नगर पंचायतों से बना होता है जबकि ग्रामीण स्थानीय निकाय ज़िला परिषदों और ग्राम पंचायतों से बना होता है। इस लेख में दिए गए आंकड़े चुनिंदा पालिका परिषदों और नगर पंचायतों (शहरी क्षेत्रों के मामले में) की महिला परिषदों (अध्यक्ष सहित) और ज़िला परिषदों तथा ग्राम पंचायतों (ग्रामीण क्षेत्रों के मामले में) के सदस्यों (प्रधान सहित) के मामले में किए गए अध्ययनों पर आधारित हैं। ये अध्ययन मणिपुर घाटी के चार ज़िलों— पश्चिम इंफाल, पूर्व इंफाल, थोबल और विष्णुपुर में कराए गए हैं; जहां महिलाओं के लिए कोटा प्रणाली लागू की गई है।

यदि राज्य के निर्वाचन इतिहास को देखा जाए तो वर्ष 1952 के संसदीय चुनाव में एक महिला उम्मीदवार थी, किंतु वह चुनाव हार गई

थी, जबकि एक महिला उम्मीदवार को वर्ष 1952 में निर्वाचिक मंडल के चुनाव में सफलता मिली। वर्ष 1957 में क्षेत्रीय परिषद के चुनावों में केवल एक महिला उम्मीदवार मैदान में थी। वर्ष 1957 में दो महिलाओं को क्षेत्रीय परिषद में नामांकित किया गया और वर्ष 1962 में विधानसभा में महिलाओं की संख्या इतनी ही थी। इन सभी चुनावी यात्राओं में इन निकायों में शहरी क्षेत्रों में महिलाओं की उपस्थिति प्रमुखतापूर्वक रही। वर्ष 1972 में मणिपुर को राज्य का दर्जा प्राप्त होने के बाद विधानसभा चुनावों में महिला उम्मीदवारों की संख्या काफी कम थी। वर्ष 1980 के चुनावों में महिला उम्मीदवारों की संख्या में वृद्धि हुई। वर्ष 1984 के विधानसभा चुनावों में महिलाओं की संख्या में काफी गिरावट हुई जबकि वर्ष 1990 के विधानसभा चुनावों में इनकी संख्या बढ़ गई। एक रोचक तथ्य यह है कि वर्ष 1995 के चुनावों में पहाड़ी और घाटी दोनों ही क्षेत्रों में महिला उम्मीदवारों की संख्या में वृद्धि दर्ज की गई थी। वर्ष 2000 और 2002 के आम चुनावों में केवल एक महिला उम्मीदवार निर्वाचित हुई थी और वर्ष 2007 के चुनावों में भी ऐसा ही हुआ।

सर्वेक्षण के निष्कर्षों के अनुसार शहरी मामले में महिला परिषदों ने महिलाओं से जुड़े व्यापक मुद्दों से हटकर अपने स्थानीय मुद्दे का प्रतिनिधित्व किया। इसके सामान्य कारणों के रूप में उनकी शैक्षिक पृष्ठभूमि और मीडिया के अधिकाधिक प्रभाव को देखा गया। उसी प्रकार उन्होंने भी कुल मिलाकर महिला सशक्तीकरण के मार्ग पर शिक्षा को पूर्व शर्त के रूप में अनुमत किया। महिला प्रतिनिधित्व के बीच महिला सशक्तीकरण के तौर-तरीके पर विभिन्न प्रकार के विचार रखे गए। विभिन्न विकल्पों की एकरूपता को इस बिंदु पर व्यक्त किया गया कि दोनों नगरपालिका परिषदों और पंचायतों के चुनावों में राजनीतिक दलों की संबद्धता नहीं होनी चाहिए। वहीं दूसरी ओर महिलाओं के कोटे को 50 प्रतिशत तक बढ़ाने के मुद्दे पर लगातार सहमति रही है। इससे इस बात की पुष्टि होती है कि बालिकाओं की व्यापक शिक्षा के माध्यम से निर्णय प्रक्रिया से संबंधित निकायों में महिलाओं के लिए कोटा प्रणाली को सार्थक रूप दिया जा सकता है। महिला के लिए परिवर्तनशील कोटा प्रणाली के

विस्तार के संबंध में कम-से-कम दो लगातार अवधियों के लिए प्राथमिकता दी गई है। ठीक उसी समय एक यह विचार भी आया कि महिलाओं के लिए अलग से आरक्षण की ज़रूरत नहीं है। इसकी जगह पर मेधाविता अथवा क्षमता पर आधारित शर्तें होनी चाहिए।

निर्वाचित महिला प्रतिनिधियों के साथ ही चुनाव में पराजित होने वाली महिलाएं भी यह अनुभव करती हैं कि महिला मतदाताओं की ओर से महिला उम्मीदवार के प्रति आदर का अभाव है। महिला प्रतिनिधियों की यह शिकायत रही है कि कई मौके पर उनके पुरुष सहयोगी उनके साथ पक्षपात अथवा स्त्री-पुरुष भेदभाव करते हैं। महिलाओं से संबंधित प्रस्तावों पर पुरुष सदस्य विद्वेषपूर्ण तरीके से काम करते हैं। उसी प्रकार वे यह भी अनुभव करती हैं कि महिलाओं की परिवर्तनशील कोटा प्रणाली को लाभप्रद बनाने के क्रम में स्त्री-पुरुष भेदभाव की ओर गंभीरतापूर्वक ध्यान देने की ज़रूरत है। एक बात यह भी सामने आई है कि महिलाओं से संबंधित नीतियों को तैयार करने में महिला प्रतिनिधियों के बीच एकजुटता का अभाव है। इसलिए निर्वाचित निकायों में सदस्यता के लिए उच्चतर शैक्षिक योग्यता की तुलना में काम करने के अनुभव की अधिक आवश्यकता है।

ज़िला परिषदों और ग्राम पंचायतों में महिलाओं की भागीदारी में उल्लेखनीय वृद्धि हुई है। ज़िला परिषदों और ग्राम पंचायतों दोनों में अधिकांश महिला प्रतिनिधि विवाहित हैं और उनकी उम्र 30 से 50 वर्षों के बीच है। उनके पति ज्यादातर मामलों में सरकारी कर्मचारी हैं। महिला पंचायत प्रतिनिधियां यह स्वीकार करती हैं कि वे स्त्री-पुरुष भेदभाव की मौजूदगी को अच्छी तरह जानती हैं। उसी तरह वे यह भी मानती हैं कि महिलाओं के लिए कोटे को बढ़ाकर 50 प्रतिशत किया जाना चाहिए और परिवर्तनशील कोटा प्रणाली को कम-से-कम दो लगातार अवधियों के लिए लागू करना चाहिए क्योंकि पहली अवधि सिर्फ परीक्षण अवधि ही होती है। सरकारी तंत्र की ओर से सहयोग के अभाव के कारण महिला-आधारित कई कार्यक्रम मंद पड़ जाते हैं और ऐसे कई उदाहरण सामने आए हैं कि सदस्यों को कार्यक्रमों के बारे में अंतिम क्षणों में बताया गया जिसके चलते कार्यक्रम निष्प्रभावी हो गया। शिक्षा की कमी

से न केवल उत्तरदायित्वों के कारण निपटारे में बाधा होती है, बल्कि पंचायतों के लिए लाभदायक नीति-निर्माण में भी बाधा पहुंचती है। सरकारी अधिकारी अपने अधिकारिक स्तर पर अक्सर महिला प्रतिनिधियों की अनभिज्ञता का लाभ उठाते हैं। महिला प्रधान नकली प्रतिनिधित्व के विरुद्ध है क्योंकि यहां वे महिलाओं की राजनीतिक प्रक्रिया में समुचित भागीदारी सुनिश्चित करना चाहती हैं, जिनसे उन्हें वंचित रखा गया है।

ऐसा पाया गया है कि ग्रामीण क्षेत्रों में एक विशेष इलाके में महिला कोटे की समाप्ति के बाद परिवार के पुरुष सदस्य या फिर अधिकांश मामले में पति को नेतृत्व हस्तांतरित कर दिया जाता है। मातृत्व लाभ, बालिका समृद्धि, अन्पूर्ण कार्यक्रम जैसी योजनाओं के क्रियान्वयन के समय अक्सर विधायक/मंत्री लाभार्थियों के चयन में अपने समर्थक आवेदकों का साथ देते हैं जिससे ज़रूरतमंद लोग वंचित हो जाते हैं। इससे बचने के लिए प्रत्यक्ष तौर पर वित्तपोषण अथवा मंत्रीस्तरीय हस्तक्षेप से इसे मुक्त करने का सुझाव दिया गया है।

चाहे ग्रामीण क्षेत्र हो या शहरी क्षेत्र दोनों ही स्थानों की महिलाएं यह मानती हैं कि राजनीतिक हस्तक्षेप, कार्यालय संबंधी अनावश्यक देरी, निधि मिलने में विलंब और शिक्षा में कमी कारगर क्रियान्वयन में बाधाएं हैं। सदस्यों की मांग के अनुसार उन पर दल-बदल विरोधी कानून लागू किया जाना चाहिए। जिस प्रकार शेष भारत में पारंपरिक जातिवाद चुनावी प्रक्रिया को प्रभावित करता है उतना मणिपुर में जातिवाद का प्रभाव नहीं है, किंतु नातेदारी, पारिवारिक लागव और आपसी संबंध चुनावी प्रक्रिया में निर्णयक होते हैं। यहां चुनाव परिणाम पर वैवाहिक और पेशागत दर्जे का कोई प्रभाव नहीं होता है।

अंततः: महिलाओं के राजनीतिक सशक्तीकरण के लिए कोई एक तरीका नहीं है। सार्थक सशक्तीकरण के लिए क्षेत्रीय अथवा स्थानीय संदर्भ में एक सृजनात्मक सोच की ज़रूरत है क्योंकि मणिपुर घाटी जैसे छोटे स्थान में भी काफी विविधताएं पाई जाती हैं। □

(लेखकद्वय में से पहले मणिपुर विश्वविद्यालय में इतिहास के सहायक प्राध्यापक और दूसरे मानवाधिकार एवं कर्तव्य शिक्षा केंद्र में अतिथि व्याख्याता हैं। ई-मेल : sudhirbam@rediffmail.com)

सामूहिक संसाधन प्रबंधन परियोजना

सामुदायिक संगठन सहभागिता और महिलाओं के
बढ़ते कदम की कहानी

● कीर्ति सक्सेना

ऊंची भूमि हेतु पूर्वोत्तर क्षेत्र सामुदायिक संसाधन प्रबंधन परियोजना (एनईआरसीओआरएमपी) की शुरुआत वर्ष 1999 में अंतरराष्ट्रीय कृषि विकास कोष (आएफएडी) के आर्थिक सहयोग से की गई थी। इसका उद्देश्य वंचित समूहों के लिए प्राकृतिक संसाधन के प्रबंधन में सुधार कर स्थायी रूप से उनकी आजीविका में सुधार करना था। इससे पर्यावरण के संरक्षण में भी मदद मिलेगी।

परियोजना क्षेत्र

परियोजना के पहले चरण (जिसे अब 11वीं योजना के अंत तक बढ़ा दिया गया है) में मेघालय, मणिपुर और असम के 6 समीपस्थ जिलों (पश्चिमी गारो पर्वतीय, पश्चिमी खासी पर्वतीय, उखरुल, सेनापति, उत्तरी कहार पर्वतीय और करबी आंग्लोंग) के 862 गांव शामिल किए गए हैं। क्रियान्वयन में भारत सरकार और मेघालय, मणिपुर और असम की राज्य सरकारें सहयोग करेंगी। भारत सरकार अपनी पूर्वोत्तर परिषद (एनईसी) के माध्यम से भागीदारी निभाएगी जबकि तीनों राज्य सरकारें ऊपर वर्णित लक्ष्यों और उद्देश्यों को पूरा करने के लिए परियोजना द्वारा गठित क्षेत्रीय और ज़िला परिषदों

के ज़रिये काम करेंगी।

परियोजना का औचित्य

एनईआरसीओआरएमपी-ऊंची भूमि हेतु पूर्वोत्तर क्षेत्र सामुदायिक संसाधन प्रबंधन परियोजना की रूपरेखा वर्ष 1994 और 1997 के बीच तैयार की गई थी। विकास के पूर्व प्रयासों की सीमित सफलता को देखते हुए इस परियोजना की आवश्यकता महसूस की गई। पहले जो योजनाएं तैयार की जाती थीं वे बनती तो ऊपर थी परंतु उनमें अमल नीचे की ओर होता था। विभिन्न क्षेत्रों के लिए अलग-अलग और विकास के प्रति रूदिगत दृष्टिकोण के कारण जनजातीय लोगों की सामाजिक-आर्थिक जटिलताओं और उनके अंतरसंबंधों को प्रायः नज़रअंदाज कर दिया जाता था। ग्रामीण अर्थव्यवस्था की जड़ता और उसके कारण पैदा होने वाली निर्धनता, कृषि की पारंपरिक झूम प्रणाली का बढ़ती जनसंख्या के दबाव का समना करने में असमर्थता और लघु परती अवधि के कारण उर्वरता का हास और इन सब कारणों के फलस्वरूप पर्यावरण और जैव

विविधता को होने वाली हानि आदि कुछ अन्य कारण हैं जिनकी वजह से एनईआरसीओएमपी की आवश्यकता महसूस की गई। यह अनुभव किया गया कि पूर्वोत्तर क्षेत्र, विशेषकर छठी अनुसूची वाले क्षेत्रों की रूदियों और परंपराओं से जकड़ा संस्थागत और प्रशासकीय ढांचा, स्वभाव से लोकतांत्रिक होने के बावजूद स्थानीय समुदायों के उचित प्रतिनिधित्व और प्रभावी विकास के मामले में कमतर साबित होता था।

एनईआरसीओआरएमपी का उद्देश्य सामुदायिक संस्थाओं के माध्यम से जनोन्मुखी ग्रामीण विकास करना है। समुदाय आधारित ये संस्थाएं सहभागिता निभाती हैं तथा संपोषणीय और व्यावहारिक होती है। ज़मीनी स्तर पर इन सामुदायिक संस्थाओं को प्राकृतिक संसाधन



प्रबंधन समूह और स्वयं-सहायता समूह कहा जाता है।

लक्ष्य और उद्देश्य

इस परियोजना का उद्देश्य मुख्य रूप से पर्यावरण के संरक्षण और नष्ट हुए पर्यावरण की बहाली है जिसके लिए वंचित वर्ग की आजीविका के प्राकृतिक संसाधनों का स्थायी रूप से बेहतर प्रबंधन करना होगा। इस व्यापक लक्ष्य के साथ-साथ निम्नलिखित विशिष्ट उद्देश्य भी हैं :

- और अधिक संवेदनशील विकास को प्रोत्साहित करना।
- स्थानीय लोगों की भागीदारी और क्षमताओं में वृद्धि।
- पर्यावरणीय ज्ञान और जागरूकता पैदा करना तथा उनको बढ़ावा देना।
- इनपुट डिलीवरी और परिसंपत्तियों के प्रबंधन की प्रभावी प्रणालियां स्थापित करना।
- स्थानीय संस्थाओं और सामुदायिक निर्णय-प्रक्रिया में महिलाओं की भागीदारी बढ़ाना।
- बचत क्षमता में विस्तार और मितव्ययिता को प्रोत्साहन।
- बुनियादी सेवाओं और सामाजिक अवस्थापना को सुलभ बनाना।

परियोजना के अवयव

परियोजना के निम्नलिखित उद्देश्यों को पूरा कर हासिल किया जा रहा है:

- समुदायों और भागीदार एजेंसियों की क्षमता का विकास

- आर्थिक आजीविका गतिविधियां
- समुदाय आधारित जैवविविधता संरक्षण
- सामाजिक क्षेत्र की गतिविधियां
- ग्रामीण सड़कें और ग्रामीण विद्युतीकरण

परियोजना के मूल्यांकन से निम्नलिखित प्रगति का पता चला

परियोजना से समग्र मूल्यांकन से स्पष्ट हुआ है कि तमाम चुनौतियों और भौगोलिक विषयवस्तु के आकार के कारण अति महत्वाकांक्षी होने के बावजूद एनईआरसीओआरएमपी पर्याप्त रूप से एक सफल वैकल्पिक प्रयास सिद्ध हुआ है।

ग्रामीण निर्धनता प्रभाव इस परियोजना की सफलता को मापने का मुख्य पैमाना है। यह सक्रिय रूप से शामिल परिवारों और लोगों की संख्या और आजीविका तथा उनकी भलाई में सुधार की सीमा का कार्य है। मूल्यांकन से जो

सीधे लाभ और परिवर्तन आए हैं उनका सार निम्नानुसार है :

परियोजना में मूल्यांकन के प्रारंभिक स्तर पर 460 गांवों के 23,000 परिवार और 1,31,000 लोग शामिल थे परंतु अब तक इसमें 862 गांव और उनके 39,203 परिवारों के 2,23,450 लोग शामिल हो चुके हैं।

मूल्यांकन मिशन का निष्कर्ष है कि अब तक कम-से-कम 25,000 लोग लाभान्वित हो चुके हैं और उन्होंने एक या अधिक परियोजना गतिविधियों से अच्छा-खासा लाभ उठाया है। कुल कमाई के आंकड़ों से निर्धनता में आई कमी का पता चलता है। आंकड़ों से पता चलता है कि वर्ष 1999 से 2004 के बीच जिन 18,390 परिवारों का मूल्यांकन किया गया उनमें से सबसे निर्धन लोगों की संख्या 9,742 से घटकर 6,455 रह गई और जो कुछ बेहतर स्थिति में थे उनकी संख्या 172 से बढ़कर 625 हो गई। इस प्रकार संबंधित परियोजना के 18 प्रतिशत सबसे निर्धन श्रेणी से बाहर निकल चुके हैं; और 2 प्रतिशत लोग संपन्न वर्ग में ऊपर उठ चुके हैं।

मुख्य क्रियान्वयन परिणाम

निर्धनता पर प्रभाव के मुख्य और सर्वाधिक प्रत्यक्ष स्रोत कृषि पर निर्भर आजीविका, फ़सल विविधीकरण, सिंचाई और झूम का मैदान, गैर-कृषि आजीविका (कुछ कम सीमा तक) और आय सूजन जैसी उत्पादन और आयोनमुखी गतिविधियां रही हैं।

● कृषि, भूमि उपयोग और जैव विविधता संरक्षण

यद्यपि अभी भी झूम की खेती बड़े पैमाने पर हो रही है, तथापि समीक्षावधि के दौरान इसमें उल्लेखनीय कमी आई है।

परियोजना के तहत 23 हजार हेक्टेयर के लक्ष्य के विरुद्ध अब तक 10 हजार 211 हेक्टेयर झूम खेतों को परियोजना समुदाय में बदला जा चुका है। कम-से-कम समूह (क्लस्टर) स्तर पर, अधिकतर समुदायों ने पूर्ववर्ती झूम भूमि पर सामुदायिक वन तैयार कर लिए हैं। खेती के लिए नयी भूमि तैयार करने के काम में प्रगति हुई है। छोटे-छोटे खेत तैयार करने में सफलता मिली है। सभी ज़िलों के कई स्थानों में लघु सिंचाई के साधन सुलभ हुए हैं। 370 हेक्टेयर के लक्ष्य के विरुद्ध 492 हेक्टेयर में सिंचाई की नयी सुविधाएं मुहैया

कराई गई हैं और 1,370 हेक्टेयर के लक्ष्य के विपरीत 1,530 हेक्टेयर में मौजूदा सिंचाई सुविधाओं की मरम्मत की गई है।

परियोजना ग्रामों में पशुपालन में उल्लेखनीय सुधार हुआ है। सुअरपालन और मुर्गीपालन (बत्तखपालन सहित) को क्रमशः 8,162 और 12,334 परिवारों ने अपनाया है और यह उनके लिए काफी लाभप्रद सिद्ध हो रहा है। मछली तालाबों की संख्या भी पर्याप्त रूप से बढ़कर 176 हेक्टेयर तक पहुंच गई है, जबकि लक्ष्य केवल 50 हेक्टेयर का ही था। जहां-जहां मधुमक्खी के छते और सामग्रियां मुहैया कराई गई हैं, वहां मधुमक्खी पालन और शहद उत्पादन में भी काफी बढ़ोत्तरी हुई है।

● ग्रामीण अवस्थापना और ग्रामीण विद्युतीकरण

ग्रामीण सड़क और ग्रामीण विद्युतीकरण घटक का निहित उद्देश्य गांवों की संपर्क सुविधाओं में सुधार लाना था ताकि लोगों, कृषि के काम आने वाली सामग्री और उत्पादों, घरेलू आपूर्तियों और सामाजिक सेवाओं एवं सुविधाओं को परिवहन सुगम बनाया जा सके और गैर-कृषि वाणिज्यिक तथा लघु उद्योग गतिविधियों के विकास के लिए आवश्यक विद्युत शक्ति पहुंचाई जा सके। योजना थी कि क्रीब 170 किमी सड़कों को सुधारा जाएगा और 20 किमी तारकोल वाली पक्की सड़कें बनाई जाएंगी। समीक्षा अवधि के दौरान 126 किमी सड़कों को सुधारा गया और 181 किमी लंबी नयी गिट्टी/मुरम की सड़कें तैयार की गईं।

ग्रामीण विद्युतीकरण के तहत प्रगति संतोषप्रद नहीं रही। ग्रिड से 115 गांवों को जोड़ने के लक्ष्य के विपरीत कुल 80 गांवों को ही ग्रिड से जोड़ा जा सका। इसी प्रकार 20 सूक्ष्म पनविज्जली योजनाओं के स्थान पर केवल एक ही सूक्ष्म पनविज्जली योजना का निर्माण हो सका।

● गैर-कृषि आजीविका

इसके कार्य खास लक्ष्य नहीं तय किए गए थे। अनेक गैर-कृषि आजीविका परियोजनाएं पहले से ही परियोजना के तहत चल रही हैं। ये परियोजनाएं स्वयं सहायता समूहों और क्लस्टरों के माध्यम से चल रही हैं। इनमें छोटी खुदाई दुकानें 238, हस्तशिल्प इकाइयां 80, फार्मसी 66, बुनाई उद्यम 592, कुम्हार 484, चावल मिल 29 और अन्य अनेक इकाइयां शामिल हैं।

● सामाजिक क्षेत्र की गतिविधियां

इनमें तीन उप-घटक शामिल हैं— पेयजल आपूर्ति, सामुदायिक स्वास्थ्य देखभाल और विद्यालयीन कृषि कार्य। परियोजना के तहत 40 खुदाई वाले कुओं, 100 नलकूप और हैंडपंप और 160 गुरुत्वाकर्षण बल के द्वारा काम करने वाली पाइप प्रणालियों के लिए पैसा देना तय किया गया था। जो उपलब्धियां हासिल हुई वे इस प्रकार हैं— 347 सुरक्षित पेयजल आपूर्ति प्रणालियां; 134 जलाशय; 34 तालाब सुधार और 30 रिंग वेल। इसी प्रकार 594 गांवों में 22,120 कम लागत वाले शौचालय बनाने में सफलता मिली। इसे स्वच्छता और व्यक्तिगत साफ़-सफाई के क्षेत्र में महत्वपूर्ण उपलब्धि माना जा रहा है जिससे संक्रामक बीमारियों की रोकथाम और उन्नत स्वास्थ्य के लिए मदद मिली है। विद्यालयीन कृषि कार्यक्रम को उच्च प्राथमिकता नहीं दी गई। कुछ स्कूलों के प्रदर्शन भू-खंड और कृषि प्रक्षेत्रों को एनएआरएमजी ने इस परियोजना के अंतर्गत शामिल किया है।

सामुदायिक विकास और सहभागिता का संस्थाओं और महिलाओं पर प्रभाव

सामुदायिक संगठन और सहभागिता; संभाव्य और संपोषणीय स्वयं सहायता समूहों का गठन; निर्भरता की मनोवृत्ति और स्वप्रबंधन की शक्ति का अहसास; निर्धन और निर्धनता समर्थक लक्षित दृष्टिकोण और संपोषणीय आजीविकाओं के विस्तार क्षेत्र में एनईआरसीओआरएमपी की उपलब्धियों को व्यापक रूप से स्वीकार किया गया है।

संस्थाओं के मोर्चे पर परियोजना का प्रभाव मुख्य रूप से ज़मीनी स्तर पर, गांवों और स्थानीय स्तर पर, परियोजना समूहों और क्लस्टर संगठनों और संघों तथा उनके गैर-सरकारी संगठन (एनजीओ) भागीदारों पर पड़ते अधिक देखा गया है। कुछ ज़िलों विशेषकर मेघालय में परियोजना का प्रभाव उन विभागों पर भी पड़ा है जिनका सहयोग स्वयं सहायता समूहों, प्राकृतिक संसाधन प्रबंधन समूहों, (एनएआरएमजी) और परियोजना कर्मियों को नियोजन, अधिकल्पन और निवेशों एवं उद्यमों के परिचालन के लिए तकनीकी सहायता प्रदान करने में ली जा रही है।

परियोजना के दायरे में अनेक ऐसे जनजातीय समुदाय शामिल थे जिनकी प्रजातीय भाषायी पहचान और सामाजिक-आर्थिक विशेषताएं तो

अलग-अलग होती हैं परंतु वे साझे तौर पर एक ही ग्राम परिषद के सदस्य होते हैं। हालांकि जनजातीय समाजों में महिलाओं की स्थिति गैर-जनजातीय समाजों की तुलना में बेहतर है। वे कभी भी ग्राम परिषदों का हिस्सा नहीं रहीं और न ही कभी महत्वपूर्ण सामुदायिक अथवा इलाकाई निर्णय प्रक्रिया में भागीदार रहीं। परियोजना का एक और उद्देश्य महिलाओं को सामुदायिक निर्णय प्रक्रिया में शामिल करने पर केंद्रित था। स्वप्रबंधित बचत समूहों और ऋण एवं अन्य स्वयं सहायता समूहों और प्राकृतिक संसाधन प्रबंधन समूहों के गठन के जरिये निर्णय प्रक्रिया में महिलाओं की भागीदारी सुनिश्चित करने का विचार था। इसका उद्देश्य उनका बीड़ीसी (ग्राम विकास परिषद) के विकल्प के रूप में तैयार करना था। प्राकृतिक संसाधन प्रबंधन समूह सामुदायिक विकास की नियोजन एवं क्रियान्वयन संस्थाएं बन गई हैं। उनमें महिलाओं और पुरुषों की समान भागीदारी (50-50 प्रतिशत सदस्यता) से लिंगानुपात में संतुलन बनाए रखा गया है। स्त्री-पुरुषों के बीच संतुलन और समानता परियोजना की प्रायः सभी गतिविधियों में परिलक्षित होती हैं। इस समय परियोजना प्रक्षेत्र में 996 प्राकृतिक संसाधन प्रबंधन समूह हैं।

परियोजना की संभवतः सबसे महत्वपूर्ण उपलब्धि, महिला सदस्यों की प्रधानता वाले स्वयं-सहायता समूहों का गठन है। इस समय 2,071 स्वयं-सहायता समूह हैं जबकि प्रारंभिक लक्ष्य केवल 920 समूहों का ही था; यह वृद्धि 125 प्रतिशत की है। महिला सदस्यों की कुल संख्या 33,056 तक पहुंच जाने से न केवल इस बात का पता चलता है कि गांवों के कितने लोग इस प्रक्रिया में शामिल हैं बल्कि उनके उत्साह का भी परिचय मिलता है।

स्वयं-सहायता समूह आंदोलन से महिलाओं की सोच, व्यवहार और विश्वास में व्यापक, प्रबल और सुस्पष्ट परिवर्तन आया है। प्रशिक्षण के दौरान उन्हें लिखने-पढ़ने का अवसर मिला और इसी एक बात ने उनको सशक्त बना दिया। हिसाब-क्रिताब रखने के लिए बुक-कीपिंग और लेखाकर्म का जो प्रशिक्षण मिला उससे उनमें आत्मविश्वास पैदा हुआ और बचत एवं मितव्यविता का महत्व पैदा हुआ। इन सबका आभास घरेलू स्तर पर लिए जाने वाले फैसलों में उनकी बढ़ती हुई भूमिका और उनके वित्तीय

प्रबंधन क्षमता में हुई वृद्धि को देखकर सहज ही हो जाता है। विशिष्ट प्रशिक्षण कार्यक्रमों में 680 पुरुषों और 630 महिलाओं से भी अधिक लोगों के लिए 206 तकनीकी प्रशिक्षण सत्र; समूह सक्रियता और प्रबंधन पर एसएचजी 2,388 प्रशिक्षण सत्र; बचत एवं ऋण प्रबंधन के 4,309 प्रशिक्षण सत्र; लेखाकर्म और बहीखाता पद्धति के 436 सत्र; संप्रेषण कौशल के 2,339; और समूह नियमों और कानून के 416 सत्र शामिल थे।

एसएचजी आंदोलन से प्रतिदिन के जीवन में महिलाएं एक-दूसरे के और पास आई हैं और उनकी पारस्परिक समझ भी बढ़ी है। इससे उनकी सामाजिक और राजनीतिक स्थिति तथा प्रभाव में भी वृद्धि हुई है। आय के साधन सृजित करने वाली 11 गतिविधियों से समय की बचत करने, पैसा कमाने और बेहतर खाद्य उपलब्धता के मामले में महिलाओं को अच्छा-खासा लाभ हुआ है। बन प्रबंधन, जल संरक्षण और आपूर्ति के कार्य में भाग लेने से उनको और समुदाय को लाभ पहुंचा है। झंझट कम हुआ है और स्वास्थ्य में सुधार हुआ है।

समुदायों ने पहली बार जलापूर्ति योजनाओं का प्रचालन और प्रबंधन का दायित्व लेना शुरू किया है। सुरक्षित पेयजल, किफायती शौचालयों और जागरूकता अभियानों से बीमारियों की घटनाओं में काफी कमी आई है और महिलाओं एवं लड़कियों के काम का बोझ कम हुआ है।

अतिरिक्त पानी का उपयोग बागवानी और बन लगाने के लिए भी किया जा रहा है। कामकाजी साक्षर विशेषकर महिला एसएचजी सदस्यों में अच्छा-खासा सुधार हुआ है। आमदनी और उत्पाद में वृद्धि से बढ़ों और बच्चों के पोषाहार में भी सुधार आया है। स्कूलों में पढ़ने वाले बच्चों की संख्या में वृद्धि हो रही है। लड़कियां भी उत्साह के साथ विद्या अध्ययन कर रही हैं।

निष्कर्ष

अंतरिम मूल्यांकन में दिखाई गई उपलब्धियों को देखते हुए अरुणाचल और मणिपुर के तीन-तीन ज़िलों में परियोजना के विस्तार का प्रस्ताव विचारार्थ योजना आयोग को भेजा गया है। □

(लेखिका पूर्वोत्तर क्षेत्र विकास मंत्रालय में आर्थिक सलाहकार हैं।
ई-मेल : kirti.saxena@nic.in)

पूर्वोत्तर राज्यों के बारे में आकलन

भारत के राज्यों की स्थिति पर रिपोर्ट

● नंदिनी

भारत के एक मीडिया घराने ने राज्यों की स्थिति पर सिसंबर 2009 में अपनी एक रिपोर्ट जारी की। इसमें बड़े राज्य और छोटे राज्य, दो वर्ग बनाए गए थे और बड़े राज्यों में 30 तथा छोटे राज्यों में दस राज्य शामिल किए गए। उन राज्यों को बड़े राज्यों की श्रेणी में रखा गया जिनका क्षेत्रफल 35 हजार वर्ग किमी से अधिक तथा आबादी 5 लाख से अधिक है। पूर्वोत्तर का असम जहां बड़े राज्यों में गिना जाता है वहाँ दस छोटे राज्यों में पूर्वोत्तर के अन्य सातों राज्य अरुणाचल प्रदेश, मिज़ोरम, नगालैंड, मणिपुर, मेघालय, त्रिपुरा एवं सिक्किम के अतिरिक्त दिल्ली, पुडुचेरी व गोवा को शामिल किया गया है।

राज्यों की इस स्थिति रिपोर्ट में सिक्किम को 'लघु आश्चर्य' की संज्ञा देते हुए 'बड़े सपनों वाला छोटा राज्य' बताया गया है। सिक्किम को 2015 तक ग्रीष्मी, निरक्षरता, बीमारी और बेरोजगारी से मुक्त राज्य बनाने का लक्ष्य निर्धारित किया गया है। वर्ष 1994 में यहां की साक्षरता दर 56 प्रतिशत थी जो आज बढ़कर 82 प्रतिशत हो चुकी है। हर गांव में पैदल चलने लायक दूरी के भीतर स्कूल है। शिक्षा पर बजटीय राशि 15 प्रतिशत से बढ़कर इस वर्ष 20 प्रतिशत कर दी गई है। सड़कों का ढांचा भी कई राज्यों की अपेक्षा यहां बेहतर है। सिक्किम में 1,747 किमी

सड़कें हैं जिनमें 178 किमी राज्य राजमार्ग हैं।

सिक्किम को शत-प्रतिशत विद्युतीकृत राज्य घोषित किया जा चुका है। राज्य में छह हजार मेगावाट विद्युत उत्पादन क्षमता की संभावना इसकी नदियों के कारण बढ़ी है। राज्य का लक्ष्य एक हजार करोड़ रुपये का राजस्व विजली की बिक्री से अर्जित करने का है।

मिज़ोरम के परिवहन मंत्री पी.सी. जोरामसंगलीना ने 'राज्यों की स्थिति रिपोर्ट' जारी करने के दौरान आयोजित 'भारत निर्माण' समारोह में कहा कि भारत में मिज़ोरम 53 प्रतिशत आबादी के साथ सर्वाधिक शहरीकृत आबादी वाले राज्यों में है। बेहतर अवसर की खोज में और अधिक लोगों के शहरी क्षेत्रों में पहुंचने की संभावना है। उन्होंने स्वीकार किया कि बढ़ते हुए शहरीकरण के कारण शहरी ग्रामीणों और स्लम बस्तियों की तादाद बढ़ रही है, जिसके कारण बुनियादी सुविधाएं, जैसे— पानी, स्कूल आदि की सुविधा उपलब्ध कराना चुनौतीपूर्ण है। परिवहन मंत्री ने कहा कि इन सबके बावजूद मिज़ोरम सरकार नयी भूमि नीति तैयार कर रही है। ग्रामीण क्षेत्रों में जमीन के साथ सहायता भी दी जा रही है। केंद्र के सहयोग से इस समस्या को हल किया जाना संभव है।

देश के 30 राज्यों में केवल 5 राज्य ही ऐसे हैं जिनकी शहरी आबादी राज्य की कुल आबादी

का 50 प्रतिशत से अधिक है। इन राज्यों में मिज़ोरम भी शामिल है।

राज्यों की स्थिति रिपोर्ट में राज्यों को दिए गए स्थान में 20 बड़े राज्यों में असम का 15वां स्थान है, जबकि दस छोटे राज्यों में मिज़ोरम चौथे, सिक्किम पांचवें, अरुणाचल छठे, नगालैंड सातवें, मणिपुर आठवें, त्रिपुरा नौवें और मेघालय दसवें स्थान पर रखा गया है। ग्रामीण आवास में छोटे राज्य में नगालैंड को पहला स्थान मिला है। अरुणाचल ने सिंचाई के मामले में 55 प्रतिशत लक्ष्य प्राप्त कर लिया जबकि ग्रामीण विद्युतीकरण और ग्रामीण सड़कों के मामले में सिक्किम छोटे राज्यों में आगे है। ई-गवर्नेंस में भी सिक्किम आगे है जबकि नरेगा में मिज़ोरम अग्रणी है।

पूर्वी क्षेत्र में स्थान के हिसाब से मिज़ोरम पहले, सिक्किम, दूसरे अरुणाचल प्रदेश तीसरे, नगालैंड चौथे, मणिपुर पांचवें, त्रिपुरा छठे, मेघालय सातवें तथा असम नौवें स्थान पर है।

छोटे राज्यों में विकास के मामले में मिज़ोरम सबसे आगे है, उसके साथ सिक्किम कड़ी स्पृह्य कर रहा है। अरुणाचल प्रदेश और नगालैंड भी अब विकास की दौड़ में इन दोनों राज्यों के साथ आगे बढ़ रहे हैं। कुल मिलाकर असम की स्थिति संतोषजनक नहीं कही जा सकती है। राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी कार्यक्रम (नरेगा) के क्रियान्वयन में छोटे राज्यों में मिज़ोरम ने पहला स्थान अर्जित किया। राज्यों में 125.82 लाख मानव दिवस सृजित कर राज्य के 91,758 परिवारों को रोजगार दिया गया। ई-गवर्नेंस में छोटे राज्यों में सिक्किम ने सरकारी सेवाओं में सीएससी कियोस्क के माध्यम से ई-गवर्नेंस में पहला स्थान पाया। सिंचाई और पेयजल में अरुणाचल प्रदेश शीर्ष स्थान पर रहा। ग्रामीण सड़कों के मामले में सिक्किम ने 761 किमी नयी सड़कों तथा 26 किमी सड़कों के ढांचे को बेहतर बनाकर 807 किमी ग्रामीण सड़कों से गांवों को जोड़ा। □

तालिका

पूर्वोत्तर क्षेत्र : राज्यों की स्थिति

राज्य	स्थान	कृषि	उपभोक्ता बाजार	प्राथमिक शिक्षा	कानून एवं व्यवस्था	ढांचागत सुविधा	निवेश	प्राथमिक स्वास्थ्य
मिज़ोरम	1	6	1	2	1	2	5	2
सिक्किम	2	10	5	1	2	3	2	3
अरुणा. प्र.	3	9	11	5	12	9	3	4
नगालैंड	4	3	12	3	4	8	1	1
मणिपुर	5	7	7	4	11	11	4	5
त्रिपुरा	6	4	4	6	6	7	8	6
मेघालय	7	8	8	7	13	12	6	7
असम	9	13	2	8	8	5	12	9



बांस के भंडार

● संदीप दास

सरकार बांस की खेती को प्रोत्साहित कर रही है और पूर्वोत्तर के राज्य बांस की उपज खूब बढ़ाने की स्थिति में आ गए हैं

असम के जोरहाट जिले के 43 वर्षीय किसान राहुल गोगोई को इस बात का कोई गम नहीं कि अब से पांच साल पहले उन्होंने अपनी कुल चार एकड़ जमीन के एक हिस्से पर बांस की खेती शुरू कर दी थी। बांस की भरपूर उपज ने उन्हें न सिक्ख आमदनी का एक अतिरिक्त साधन उपलब्ध कराया बल्कि स्थानीय साहूकार की रिश्वत से छूटने में भी मददगार बनी। पहले वह धान की फसल डगाने के लिए ऋण लिया करते थे। अब भी वह आधे एकड़ में धान बोते हैं जिससे उनका साल भर का भोजन चल जाता है। खेत में उगने वाले बांस को बेचकर वह अपनी वित्तीय ज़रूरत पूरी कर लेते हैं। यही कहानी है मणिपुर के

बांस किसान मुकुल मितेई की। वह भी पिछले 5 वर्षों से बांस उगा रहे हैं। बांस की क्रीमत बढ़ रही है और इसे 'अजूबा फ़सल' कहा जा रहा है। इसकी खास देखभाल करने की भी ज़रूरत नहीं पड़ती। यही कारण है कि बांस की खेती अब खासतौर से पूर्वोत्तर राज्यों में लोकप्रिय होती जा रही है।

पूर्वोत्तर राज्यों में बांस का इस्तेमाल अतिरिक्त निर्माण सामग्री के रूप में किया जाता है। इसे घरेलू वस्तुएं बनाने, हस्तशिल्प के उत्पाद तैयार करने, कागज बनाने, मछलीपालन, परिवहन आदि में भी इस्तेमाल किया जाता है। भारत में दुनिया के कुल बांस उत्पादन के 43 प्रतिशत की पैदावार होती है। सरकारी आंकड़ों के

अनुसार देशभर में बांस की 136 किस्में पाई जाती हैं। इनमें से 89 किस्में पूर्वोत्तर क्षेत्र में मिलती हैं। पूर्वोत्तर राज्यों की अर्थव्यवस्था में बांस का बहुत महत्व है। असम, मणिपुर, अरुणाचल प्रदेश, मेघालय, मिज़ोरम, नगालैंड, सिक्किम और त्रिपुरा इसके गढ़ माने जाते हैं।

त्रिपुरा सरकार के आंकड़ों के अनुसार राज्य के कुल वन क्षेत्र 834 वर्ग किलोमीटर (15 प्रतिशत) पर बांस उगता है। अनुमान है कि लगभग 3 लाख ग्रामीण परिवार बांस की खेती पर निर्भर हैं। एक अनुमान के अनुसार त्रिपुरा में हर वर्ष 25-30 करोड़ रुपये मूल्य के बांस का व्यापार होता है। राज्य के बांस मिशन ने अगले कुछ ही वर्षों में इसे बढ़ा कर 75-85



करोड़ रुपये तक पहुंचा देने का लक्ष्य रखा है।

एक अनुमान के अनुसार देश के एक करोड़ हेक्टेयर क्षेत्र पर बांस के वन हैं। यह क्षेत्र भारत के कुल वनक्षेत्र के 13 प्रतिशत के बराबर है। भारत में बांस के वन सर्वाधिक हैं। देश के कुल बांस का 2/3 भाग पूर्वोत्तर राज्यों से आता है। इस क्षेत्र में कुल बांस उत्पादन का 67 प्रतिशत बांस पैदा होता है। बांस पूर्वोत्तर राज्यों की संस्कृति और परंपराओं में रचा-बसा है। इस क्षेत्र की 70 प्रतिशत श्रमिक आबादी बांस पर निर्भर है।

बनस्पतिशास्त्र की नज़र से देखें तो बांस को घास वर्ग में सदाबहार पौधों की कोटि में गिना जाता है और यह ग़ारीबों की इमारती लकड़ी की आवश्यकता पूरी करता है। दुनिया भर में बांस की 1,200 किस्में और 91 वर्ग हैं। यह विभिन्न प्रकार की जलवायु-ठंडे पहाड़ों से लेकर ऊष्ण कटिबंधीय क्षेत्रों में उगता है। बांस की कोंपलें खाई जा सकती हैं और चीन तथा इंडोनेशिया के सुपरबाजारों में इन्हें तरह-तरह के रूपों में बिकते देखा जा सकता है। पूर्वोत्तर भारत में भी बांस की कोंपलें आदिवासी लोगों में सज्जियों की तरह लोकप्रिय हैं।

संयुक्त राष्ट्र औद्योगिक विकास संगठन (यूनीडो) के अनुसार अगले एक दशक में पूर्वोत्तर राज्यों में बांस आधारित व्यापार 5,000 करोड़ रुपये से अधिक का हो जाएगा। देश के राष्ट्रीय बांस टेक्नोलॉजी मिशन एवं व्यापार विकास मिशन को उम्मीद है कि 2015 तक भारत का बांस व्यापार बढ़कर साढ़े पांच अरब अमरीकी डॉलर का हो जाएगा।

बांस की खेती में लगे किसानों का कहना है कि यह लक्ष्य प्राप्त किया जा सकता है। चूंकि बांस की अर्थव्यवस्था अधिकांशतः असंगठित है, अतः वह विधिवत विकास के कारण शीघ्र बढ़ेगी और उसी प्रकार विकसित होगी जैसाकि मिशन का अनुमान है। मिशन ने एक कार्ययोजना लागू करने का कार्यक्रम बनाया है जिसके अनुसार बांस को रोजगार सृजन का प्रमुख साधन बनाया जाएगा। इसकी खेती से पर्यावरण में सुधार आएगा और पूर्वोत्तर राज्यों के बांस आधारित उद्योगों में वृद्धि होगी और हस्तशिल्प का खासतौर से विकास हो सकेगा। इससे पहले, इसी वर्ष यूनीडो ने पूर्वोत्तर राज्यों में बांस व्यापार बढ़ाने पर दो अरब अमरीकी डॉलर के निवेश की वचनबद्धता ज़ाहिर की

थी। इसे हस्तशिल्प, निर्माण सामग्री और निर्यात को बढ़ावा देने की योजनाओं पर लगाया जाएगा।

भारत में दुनिया के कुल बांस के 30 प्रतिशत बांस संसाधन उपलब्ध होने के बावजूद विश्व के कुल बांस व्यापार में भारत का भाग मात्र 4 प्रतिशत है। जापान, चीन और मलेशिया के मुकाबले कम उत्पादकता (लगभग 04 टन प्रति हेक्टेयर) के कारण भारत का हिस्सा कम है। इसका कारण है कम विकसित टेक्नोलॉजी और इस उद्योग का असंगठित होना। जापान, चीन और मलेशिया का इस व्यापार में हिस्सा लगभग 80 प्रतिशत है।

यूनीडो इससे संबद्ध अपने संसाधन समझौते को सुकर बनाने में भूमिका निभाने वाले असम के केन एवं बंबू टेक्नोलॉजी केंद्र की मार्फत लगा रहा है। इस समझौते के कारण इस क्षेत्र को नवीकरणीय ऊर्जा और चमड़ा शोधन जैसे क्षेत्रों में विशेष सेवाएं दी जा रही हैं।

हाल के वर्षों में बांस की मांग बढ़ी है। देश-विदेश में इसे फर्नीचर उद्योग में कच्चे माल के तौर पर देखा जा रहा है। इसका इस्तेमाल लकड़ी की जगह इस्तेमाल किए जाने वाले पैनल बोर्ड और निर्माण उद्योग में बढ़ रहा है। सब्जी के रूप में भी इसकी खपत हो रही है। चीन ने इसके बारे में नये-नये शोध किए हैं जिसके कारण 1970 के बाद इसकी उत्पादकता लगभग दस गुना बढ़ गई है। पहले इसकी वार्षिक उपज मात्र 2-3 टन प्रति हेक्टेयर होती थी। वर्तमान में चीन बांस और इसके उत्पादों के निर्यात से साढ़े 5 अरब अमरीकी डॉलर कमा रहा है।

राष्ट्रीय बांस मिशन एक केंद्र प्रायोजित योजना है। इसका सारा ख़र्च केंद्र सरकार उठाती है। 2000-09 में राज्यों को 84 करोड़ रुपये आवंटित किए गए जिसमें से 44 करोड़ रुपये पूर्वोत्तर राज्यों के लिए थे। इस मिशन का प्रमुख ज़ोर क्षेत्र विशिष्ट बांस की खेती और बांस आधारित उत्पादों की निर्यात वृद्धि पर है। इसके ज़रिये रोजगार सृजन और कौशल विकास पर भी ज़ोर दिया जाता है।

इसके साथ ही, पूर्वोत्तर राज्यों में 15 वर्ष का एक मास्टर प्लान भी शुरू किया गया। इसका नाम 'पूर्वोत्तर क्षेत्रीय बांस मिशन' रखा गया है। इसका प्रमुख उद्देश्य ग़ारीबी मिटाना और क्षेत्र के वन संसाधनों की रक्षा करना है।

विशेषज्ञों ने चेतावनी दी है कि जैसे-जैसे पूर्वोत्तर में बांस की खेती बढ़ रही है, बांस के फूलने का ख़तरा भी बढ़ सकता है। इससे पूर्वोत्तर क्षेत्र में बांस की फ़सल बर्बाद हो सकती है, चूहों की संख्या बढ़ने के कारण भी इस पर असर पड़ सकता है। चूहों की बढ़ती संख्या से इस क्षेत्र में प्रचलित 'झूम' खेती पर असर पड़ सकता है। अनाज उपजाने के लिए यहां के लोग अभी भी यही तरीका अपनाते हैं। इसके परिणामस्वरूप इस क्षेत्र में खाद्य सुरक्षा की समस्या पैदा हो सकती है।

केंद्रीय कृषि मंत्री शरद पवार ने बांस मिशन की समीक्षा करते हुए कहा था कि अगर इन उत्पादों को ग्रामीण सड़कों और जलमार्गों के ज़रिये ढोने की सुविधा मिले, तो बांस की फ़सल को तेज़ी से मिडियों तक ले जाया जा सकता है। कृषि मंत्री ने यह भी कहा था कि असम और अन्य राज्यों में बांस की अर्थव्यवस्था को ऊपर उठाने की ज़रूरत है।

अब जबकि दुनियाभर में जलवायु परिवर्तन पर बहस छिड़ी हुई है, बांस की खेती इसका एक उपयुक्त समाधान प्रस्तुत कर सकती है। धरती का तापमान बढ़ने की एक बुनियादी वज़ह यह है कि ग्रीनहाऊस गैसों का उत्सर्जन बढ़ रहा है और कार्बन डाई-ऑक्साइड भी इसका एक घटक है। यह जानना आश्चर्यजनक हो सकता है कि बांस इस गैस का एक असरदार तोड़ हो सकता है। बांस 35 प्रतिशत ऑक्सीजन छोड़ सकता है। अनेक रिपोर्टों में कहा गया है कि बांस प्रतिवेक्टरेयर 12 टन तक कार्बन शमन की क्षमता रखता है। अतः यह इन गैसों का सामना करने में इस्तेमाल किया जा सकता है। यही नहीं, 90 प्रतिशत से ज्यादा बांस कार्बन से टिकाऊ उत्पाद तैयार किए जा सकते हैं। ये ज्यादा दिन चलने वाले होते हैं। अतः अधिक दिनों तक कार्बन से बचाव कर सकते हैं। इसका इस्तेमाल खनिज ईंधन के विकल्प के रूप में भी हो सकता है।

भारत में और विशेष रूप से पूर्वोत्तर राज्यों में बांस का बहुत इस्तेमाल होता है और अगर केंद्र और राज्य सरकारें बांस व्यापार बढ़ाने के लिए मिलकर काम करें तो अगले कुछ वर्ष इस क्षेत्र के किसानों के लिए बहुत महत्वपूर्ण हो सकते हैं। □

(लेखक दिल्ली स्थित पत्रकार हैं।
ई-मेल: sandipdas2005@gmail.com)

ब्रह्मपुत्र नदी पर बांध ?

● संजीव काकोती

ब्रह्मपुत्र हिमालय से निकलने वाली 19 नदियों में से एक है। चेमा चुंग हुंग हिमनद से निकलकर यह चीन, भूटान, भारत और बांग्लादेश से होकर बहती है। इसकी लंबाई लगभग 2,900 किलोमीटर है। तिब्बत में इसे लोग यारलुंग सांगपो के नाम से जानते हैं। इसे विश्व की सबसे ऊँची नदी के रूप में जाना जाता है

पिछले कई वर्षों के दौरान चीन के बारे में समाचार माध्यमों से ऐसी कई सनसनीखेज रिपोर्ट आई हैं कि वह ब्रह्मपुत्र अथवा सांगपो नदी पर बांध बनाने में जुटा है। तिब्बत में ब्रह्मपुत्र नदी को सांगपो के नाम से जाना जाता है। इस प्रस्तावित बांध के बल पर बिजली पैदा करने के अलावा चीन में पानी की कमी वाले क्षेत्रों में पानी की आपूर्ति भी की जा सकती है। किंतु चीन ने नियमित रूप से ऐसी रिपोर्ट को खारिज किया है। जब उससे प्रस्तावित बांध के स्थल तक लोगों; मशीनों और सामग्रियों की आवाजाही के बारे में पूछा गया तो उसने बताया कि तिब्बत में आधारभूत सुविधाओं का विकास और सड़क निर्माण कराया जा रहा है।

पक्के सबूतों के अभाव में हाल तक भी यह मुद्दा भारत की विदेश नीति में प्रमुखता से शामिल नहीं हुआ है। किंतु ऐसा संकेत है कि भविष्य में यह मुद्दा भारत-चीन संबंधों के केंद्र में होगा। हाल में भारत के विदेश मंत्री एम.एम. कृष्णा और चीन के विदेश मंत्री यांग जीची के बीच मुलाकात हुई थी जिसमें भारत ने ब्रह्मपुत्र नदी पर बांध के बारे में अपनी चिंता से चीन को अवगत कराया।

बांध के बारे में सूचना की अनुपलब्धता इस कारण से भी समझ आती है, क्योंकि यह

काफी संदेनशील मुद्दा है और इसका व्यापक अंतरराष्ट्रीय प्रभाव पड़ सकता है। इसके अलावा बांध तक पहुंच आसान नहीं है और लोग इसे नहीं देख सकते। इसलिए इसके बारे में जानकारी मिलना कठिन है। इस मामले पर चीन की ओर से पर्दा डालने के प्रयासों को इस रूप में समझा जा रहा है कि प्राथमिक चरण में इस प्रस्तावित बांध के प्रति अंतरराष्ट्रीय विरोध के कारण मामले पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ने की संभावना के कारण ऐसा रखैया है। दूसरी ओर, चीन की ओर से इस परियोजना को पर्दे में रखने और काम पूरा होने पर विश्व के सामने इसकी घोषणा होने पर इसे पहले से किया गया काम माना जाएगा।

बीजिंग स्थित चाइनीज एकेडमी ऑफ इंजीनियरिंग फ़ीजिक्स के दो वरिष्ठ वैज्ञानिकों द्वारा वर्ष 1995 में दाखिल एक शैक्षिक प्रपत्र के माध्यम से शायद पहली ऐसी रिपोर्ट का पता चला। उसके बाद इस मुद्दे की जानकारी दी गई और कई मंचों पर इसके बारे में चर्चा की गई। इसके बाद यह जानकारी मिली कि चीन के जल संरक्षण, बिजली नियोजन और प्रारूपण संस्थान ने इस क्षेत्र में व्यवहार्यता अध्ययन संचालित किया था।

इस परियोजना के बारे में चीन की ज़रूरत

को बेहतर ढंग से समझने के लिए इसे उसकी जनसंख्या वृद्धि, भूमि उपयोग प्रणाली और खाद्य उत्पादन के साथ जोड़कर देखना होगा। वर्ष 2000 में प्रकाशित ‘ग्रेन इश्यू इन चाइना’ नामक रिपोर्ट में चीन की कृषि से जुड़ी स्थिति की चर्चा की गई है। इसमें बताया गया है कि दक्षिणी चीन में 70 करोड़ लोग रहते हैं और इनके पास चीन की कृषि योग्य भूमि का एक-तिहाई भाग और जल संसाधनों का 80 प्रतिशत भाग मौजूद है। वहीं दूसरी ओर उत्तरी चीन में 55 करोड़ लोग रहते हैं और यहां दो-तिहाई कृषि योग्य भूमि है और केवल 20 प्रतिशत जल संसाधन हैं। आगामी कुछ वर्षों में चीन की जनसंख्या 1 अरब 60 करोड़ हो जाएगी। इस कारण चीन को खाद्यान्न उत्पादन बढ़ाना होगा। इसके लिए जोत की ज़मीन का क्षेत्र बढ़ाना एक तरीका हो सकता है। चीन गोबी मरुभूमि सहित उत्तरी-पश्चिमी क्षेत्र के बड़े हिस्से को सिंचाई के दायरे में लाना चाहेगा। दुर्भाग्यवश यह क्षेत्र चीन की कुल भूमि का लगभग 45 प्रतिशत भाग है किंतु इसके पास केवल 7 प्रतिशत जल है। यही कारण है कि वह ब्रह्मपुत्र नदी की धारा को मोड़ना चाहता है। इसके लिए उसे न केवल एक विशाल बांध बनाना पड़ेगा बल्कि हिमालय में कई

सुरंगों भी बनानी पड़ेंगी और इसके लिए निर्यात्रित नाभिकीय विस्फोटों का भी इस्तेमाल करना होगा।

इस बीच चीन की सरकार ने 'यारलुंग सांगपो ग्रैंड कैनयोन नेशनल रिजर्वेशन' स्थापित करने की भी घोषणा की है। इसके अलावा इस प्रस्तावित बांध और जलधारा को मोड़ने की परियोजना के प्रभावों, उस पर आने वाली लागत और तकनीकी पहलुओं के अध्ययन के लिए कई अध्ययन रिपोर्ट और व्यवहार्यता रिपोर्ट तैयार की गई हैं। एक अनुमान के अनुसार अपने 26 टर्बाइंटों के साथ यारलुंग सांगपो बांध परियोजना से प्रतिधंदा लगभग 4 करोड़ किलोवाट पनबिजली तैयार की जा सकेगी। यांत्रणे नदी पर बनी तीन घाटी परियोजनाओं के बिजली उत्पादन की तुलना में यह दोगुना होगा। इसके अलावा जलधारा को मोड़कर देश के जिजियांग स्थित गोबी मरुभूमि और गंसू प्रदेश के उत्तर-पश्चिमी भाग में सिंचाई करके उसे हरा-भरा बनाया जा सकता है।

चीन के इंजीनियर और वैज्ञानिक इस परियोजना की तकनीकी व्यवहार्यता के बारे में आश्वस्त दिखाई पड़ते हैं। उदाहरण के लिए चाइनीज एकेडमी ऑफ इंजीनियरिंग फीजिक्स का कहना है कि हम निश्चित तौर पर इस परियोजना को नाभिकीय विस्फोटों के साथ पूरा कर सकते हैं। परियोजना के प्रमुख योजनाकार प्रोफेसर चिन चुआन यू के अनुसार हिमालय में 15 किलोमीटर की सुरंग बनाकर बारवा के 'यू टर्न' के पहले जलधारा को मोड़ना होगा। इसके परिणामस्वरूप बिजली का काफी उत्पादन हो सकेगा। इसी बिजली के एक हिस्से का इस्तेमाल 800 किलोमीटर दूर चीन के उत्तर-पश्चिमी भाग तक पंप द्वारा जल भेजने के लिए भी किया जा सकता है।

ब्रह्मपुत्र हिमालय से निकलने वाली 19 नदियों में से एक है। चेमा चुंग हुंग हिमनद से निकलकर यह चीन, भूटान, भारत और बांग्लादेश से होकर बहती है। इसकी लंबाई लगभग 2,900 किलोमीटर है। तिब्बत में इसे लोग यारलुंग सांगपो के नाम से जानते हैं। इसे विश्व की सबसे ऊँची नदी के रूप में जाना जाता है। बर्फीले हिमनदों से चलकर यह बंगाल की खाड़ी तक अपनी यात्रा में अनेक प्रकार की भौगोलिक संरचना से होकर गुजरती है जिसमें बर्फीले निर्जन क्षेत्र, घास के मैदानी भाग और

घनधोर जंगल शामिल हैं।

इस नदी ने जिस पारिस्थितिकीय और मानव विज्ञान संबंधी प्रजाति को जन्म देकर पाला-पोसा है वह अपने-आप में अनोखा है। ऐसे में विचार करने की ज़रूरत है कि इस परियोजना की पारिस्थितिकीय और मानवीय कीमत क्या होगी? क्या वे विशिष्ट संस्कृतियां जो सदियों से इस नदी के तटों पर फली-फूली हैं, वे बच पाएंगी? इस नदी द्वारा पानी के साथ जो रेत की मात्रा ढोकर लाई जा रही है, यह बांध उस प्रक्रिया को समाप्त कर देगी। पारिस्थितिकी पर इसका क्या प्रभाव पड़ेगा? क्या यह नदी प्रणाली का वही रेत नहीं है जिसने गंगा, मेकोंग और ब्रह्मपुत्र घाटियों का निर्माण किया?

इस बात पर भी विचार करने की ज़रूरत है कि इस क्षेत्र में विशेषकर उत्तर-पूर्वी भारत और बांग्लादेश में जून से लेकर दिसंबर तक मानसून के समय में अवक्षेपण दर 80 प्रतिशत तक रहती है और वर्ष के शेष महीने में घटकर 2 प्रतिशत हो जाती है। जल की कमी के समय ब्रह्मपुत्र के जल की काफी मांग रहती है। सैद्धांतिक रूप से यह प्रतीत होता है कि चीन का निजी स्वार्थ जल की कमी वाली अवधि में नदी की धारा को मोड़ने के लिए प्रेरित कर सकता है जिसके बल पर वह अपने लिए बिजली उत्पादन जारी रखने के साथ ही जल आपूर्ति भी कायम रख सकेगा, जबकि भारी वर्षा के समय वह पानी भी छोड़ सकेगा। ये दोनों ही परिदृश्य अन्य देशों के लिए कई प्रकार के दुष्परिणामों के संकेतक हैं। इससे वैश्वक तपन (ग्लोबल वार्मिंग) और जलवायु परिवर्तन की समस्या कई गुना बढ़ सकती है और इसके कारण कई क्षेत्रों में अत्यधिक वर्षा होगी और हिमनदों में बर्फ पिघलने की प्रक्रिया तेज़ होगी। इस कारण आसपास के क्षेत्रों में ज़ोरदार भूकंप की संभावना बढ़ेगी। मानव निर्मित इस बांध से प्राकृतिक आपदा की संभावना बढ़ेगी।

पारिस्थितिकीय कीमत पर हिमालय में ऐसे बांधों को बनाकर किसी प्रकार के फ़ायदे का अनुमान नहीं लगाया जा सकता है। दूसरी बात यह है कि सुरंग बनाने की योजना में नाभिकीय विस्फोटों के इस्तेमाल से रेडियो सक्रियता का ख़तरा उत्पन्न होगा। इसके अलावा नदी की धारा के निचले हिस्से के पास रहने वाले राष्ट्रों के तटवर्ती निवासी के अधिकारों की उपेक्षा

नहीं की जा सकती है। यहां यह उल्लेखनीय है कि ब्रह्मपुत्र के थाले लगभग 5,80,000 वर्ग किलोमीटर क्षेत्र में फैले हुए हैं जिसमें से 50 प्रतिशत चीन में, 33 प्रतिशत भारत में, 8 प्रतिशत बांग्लादेश में और लगभग 7.8 प्रतिशत भाग भूटान में हैं। तिब्बत से यह नदी लगभग 3,500 मीटर की ऊँचाई से नीचे उतरती है। यह 'काय' नामक स्थान पर आकर विशाल घाटी में प्रवेश करती है। इसे यारलुंग सांगपो घाटी के रूप में जाना जाता है जो विश्व की सबसे बड़ी घाटी है। यह घाटी कोलोरेडो ग्रैंड कैनियन से भी अधिक गहरी है। लंबी दूरी तक फैली यह तंग घाटी भारत के अरुणाचल प्रदेश के पासीघाट में आकर समाप्त होती है। इस स्थान पर यह नदी लगभग 155 मीटर की ऊँचाई पर स्थित है। दूसरे शब्दों में, 200 किलोमीटर से कम दूरी में यह नदी 3,500 मीटर की ऊँचाई से गिरकर 155 मीटर की ऊँचाई तक पहुँचती है। इससे इस नदी की प्रति किलोमीटर 17 मीटर की ढलान का पता चलता है। किसी भी मानक की तुलना में यह अतुलनीय है। वहीं ब्रह्मपुत्र घाटी, गुवाहाटी के क्षेत्र में यह प्रति किलोमीटर 10 सेंटीमीटर की ढलान के साथ आगे बढ़ती है।

चीन सरकार इस नदी पर बांध बनाने के लिए सर्वेक्षण योजना और नीति निर्माण के रास्ते पर चलकर बिजली पैदा करने और अपनी मुख्यभूमि की ओर नदी की राह मोड़ने पर आमादा है। इस प्रक्रिया के किसी भी चरण में चीन ने इससे संबंधित अन्य देशों के सरोकारों के बारे में सुनने की ज़रूरत नहीं समझी। नदी जल के बंटवारे के मुद्दे पर स्थापित अंतरराष्ट्रीय कानूनों और समझौतों का अभाव है। ऐसी स्थिति में प्रस्तावित बांध और यारलुंग सांगपो अथवा ब्रह्मपुत्र की जलधारा को मोड़ने से पारिस्थितिकी के साथ-साथ इस नदी की निचली धारा के किनारे रहने वाले 20 करोड़ से भी अधिक लोगों का जीवन बुरी तरह से प्रभावित हो सकता है। जब तक संबंधित राष्ट्रों के नेता इस राजनीतिक और मानवीय मुद्दे को अच्छी तरह नहीं उठाएंगे, यह मुद्दा निश्चित तौर पर तनाव पैदा करने वाले और भविष्य में विवादों को उभारने वाले एक स्रोत के रूप में उभरेगा। □

(लेखक भारतीय प्रबंधन संस्थान, शिलांग में धारणीय विकास पद्धति है।
ई-मेल: skakoty@gmail.com)

पूर्वोत्तर राज्यों में पर्यटन

पूर्वोत्तर पर्यटकों के लिए बेहतरीन जगह है। पूर्वी हिमालय की गोद में बसे इस इलाके में ऐश्याका सबसे बड़ा जैविक उद्यान है। यहां आकर मशहूर पर्यावरणविद बेरिल स्टापेल्टन को भी लगता है कि वे सच में अपने घर में आ गए हैं। जंगलों, प्राकृतिक नजारों और पहाड़ों की खूबसूरती वाले पूर्वोत्तर भारत में सबका स्वागत है।

सच यही है कि पर्यटन की अपार संभावनाओं के बावजूद अब तक इस इलाके में इसका पर्याप्त दोहन नहीं हो पाया है। इसका कारण दूँढ़ना भी बहुत मुश्किल नहीं है। आजादी के छह दशक बीत जाने के बावजूद आधारभूत सुविधाओं का विकास नहीं हो पाना और गरीबी तथा उग्रवाद इसके मुख्य कारण हैं। इन चुनौतियों के बावजूद इस क्षेत्र में उम्मीद की एक नयी किरण दिखने लगी है।

पर्यटन मंत्रालय के आंकड़ों के अनुसार पूर्वोत्तर के सात राज्यों— अरुणाचल, नगालैंड, असम, मणिपुर, मेघालय, मिजोरम और त्रिपुरा में जाने वाले घरेलू पर्यटकों की संख्या वर्ष 2006 में 44.5 लाख को पार कर गई। इस दौरान विदेशी पर्यटकों की संख्या क्रीब 38,600 रही। साल 2007 में घरेलू पर्यटकों की संख्या बढ़कर 47 लाख पर पहुंच गई और विदेशी पर्यटकों की संख्या 43,100 पर। पर्यटकों की आमद में यह वृद्धि जारी है।

यह अलग बात है कि अगर भारत के कुल पर्यटकों की बात करें तो यह संख्या कहीं नहीं ठहरती। आज भी हालात यह है कि भारत आने वाले विदेशी पर्यटकों में से सिर्फ 1.2 फीसदी

लोग पूर्वोत्तर जाते हैं। पूर्वोत्तर में पर्यटन कारोबार को अभी रफ़्तार पकड़ना बाकी है। हालांकि पिछले कुछ सालों में विभिन्न वजहों से इसकी गति धीमी रही है। इसमें कमज़ोर बुनियादी ढांचे और संपर्क मार्ग का अभाव और सुरक्षा चिंताएं प्रमुख हैं।

क्रीब ढाई लाख वर्ग किलोमीटर में फैले इस इलाके को भारत से जोड़ने में 22 किलोमीटर के सिलिगुड़ी कॉरिडोर की महत्वपूर्ण भूमिका है। कहने की ज़रूरत नहीं कि पूर्वोत्तर राज्यों की 2,000 किलोमीटर की सीमा भूटान, चीन, म्यामां और बांग्लादेश से जुड़ी है। रणनीतिक रूप से महत्वपूर्ण क्षेत्र होने के बावजूद इस क्षेत्र में पर्यटन का पर्याप्त विकास इसलिए नहीं हो पाया क्योंकि आंतरिक रूप से यहां यातायात (सड़क एवं रेल) की सुविधा अब तक विकसित नहीं हो पाई है। राहत की बात यह है कि लॉजिस्टिक ट्रांसपोर्टेशन के लिए वायु यातायात के मामले में क्षेत्र ने अपेक्षाकृत अधिक प्रगति की है।

पर्यटन मंत्रालय इस इलाके में वायु सेवा बढ़ाने के लिए अपने प्रयासों में वृद्धि कर रहा है। इस क्षेत्र को पर्यटन मानचित्र पर उभारने के लिए राज्य सरकार और स्थानीय प्रशासन की महती भूमिका की ज़रूरत है।

अब टाटा समूह गुवाहाटी में एक पंचसितारा होटल बनाने जा रहा है। इसके अलावा गुवाहाटी में एक अन्य पंचसितारा होटल भी खोला जाएगा। अरुणाचल प्रदेश, मिजोरम और नगालैंड में आने वाले दिनों में तीन होटल मैनेजमेंट इंस्टीट्यूट खोले जा रहे हैं। असम के नौगांव में एक फूड

क्राफ्ट इंस्टीट्यूट भी खोले जाने की योजना है। आमद बढ़ाने के लिए सर्किट हाउस और सरकारी बंगले की पहचान की जा रही है और इसे पर्यटकों के हिसाब से विकसित किया जा रहा है।

होटल एंड रेस्टोरेंट एसोसिएशन (पूर्वी भारत) के अध्यक्ष एस.के. खुल्लर का मानना है कि सरकार ने अब तक इस क्षेत्र के विकास पर पर्याप्त ध्यान नहीं दिया, लेकिन अब वह पीपीपी मॉडल के आधार पर इसे विकसित होता देख रहे हैं। श्री खुल्लर कहते हैं— “इस इलाके में 17 वर्गीकृत होटलों में 739 कमरों की व्यवस्था है, परंतु अगर दार्जिलिंग की बात करें तो वहां अकेले 20,000 कमरे हैं। पीपीपी मॉडल के आधार पर बड़ी योजना को अंजाम देने की ज़रूरत महसूस की जा रही है।”

केरल और राजस्थान में पर्यटन एक रात में विकसित नहीं हुआ है। अंतरराष्ट्रीय पर्यटक हर समय नये स्थान की पहचान करते हैं और अब वे पूर्वोत्तर का रुख कर रहे हैं क्योंकि इस इलाके के पर्यटन क्षेत्र का अब तक दोहन नहीं हो पाया है। इलाके के विकास के लिए अब पर्यटन मंत्रालय भी गंभीर नज़र आ रहा है। पिछले तीन वर्ष में इलाके के लिए सरकार ने 520 करोड़ रुपये की 235 परियोजनाओं को मंजूरी दी है। पर्यटन के लिए आधारभूत संरचना को विकसित करने के लिए असम 250 करोड़ रुपये की मांग कर रहा है। पर्यटन को बढ़ावा देने के लिए बीते अक्तूबर में सिक्किम की राजधानी गंगटोक में एक सम्मेलन भी आयोजित किया गया है। □



पूर्वोत्तर का स्वर्ग : नामदफा राष्ट्रीय उद्यान

● ब्रजकिशोर सिंह

अरुणाचल प्रदेश भारत के पूर्वोत्तर सिरे पर स्थित एक जादुई, रहस्यमय और मनमोहक प्रदेश है जो भारत के सबसे अधिक लोकप्रिय गंतव्यों में से एक है। यहां की मनोरम पहाड़ियां तथा घाटियां सदैव पर्यटकों और वनस्पतिशास्त्रियों को आमंत्रित करती रहती हैं। अरुणाचल प्रदेश अत्यंत समृद्ध स्तनधारी वन्यजीव आवास है। यहां अनेक अक्षांशों और मौसमी परिस्थितियों में अलग-अलग प्रकार के वनस्पतियां उगती हैं जो वन्य जीवन की विभिन्न किसिमों को प्राकृतिक आवास और भोजन प्रदान करती हैं। अरुणाचल प्रदेश का सबसे सुंदर और अनूठा हिस्सा है नामदफा टाइगर रिजर्व और राष्ट्रीय पार्क।

नामदफा नेशनल पार्क में वास्तविक जंगल और हरियाली भरी वनस्पतियों की सुंदरता को देखा जा सकता है। यहां अभेद्य और हरित अनूठे जंगल 1,985.23 वर्ग किलोमीटर के क्षेत्र में विविध जंतुओं और वनस्पतियों के साथ फैले हुए हैं। नामदफा राष्ट्रीय पार्क भारत-बर्मा अंतरराष्ट्रीय क्षेत्र को स्पर्श करता है और चांग-लांग जिले में स्थित है। नोआ-दिहिंग नदी इसके बीच से गुज़रती है। यह वर्षा वनों से आच्छादित है। इसे 1983 में टाइगर रिजर्व घोषित किया गया।

वन्य जीवन की विविधता : यहां के नम उष्ण कटिबंधी वर्षा वन अनेक प्रकार के जंतुओं और पक्षियों का आश्रय स्थल हैं, जिन्हें देखना

एक अनोखा अनुभव है। पक्षी प्रजातियों में यहां सबसे अधिक उल्लेखनीय सफेद पंखों वाली बुड़ डक है जो एक दुर्लभ और लुप्तप्राय प्रजाति है। ग्रेट इंडियन हार्नबिल, जंगली बाज और फीसेंट लॉप इस जंगल में शोर मचाते उड़ते रहते हैं और अन्य रंग-बिरंगी चिढ़ियों तथा जंतुओं का शिकार करते हैं। यह दुनिया का एकमात्र ऐसा उद्यान है जहां बाघ की चार प्रजातियां एक साथ पाई जाती हैं— पैंथर टाइग्रिस, पैंथरा पार्डस, पैंथरा अनसिया और नियोफेलिस नेबूलोसा। यहां अन्य अनेक प्रकार की बिल्लियां पाई जाती हैं। पार्क में प्राइमेट प्रजातियों की संख्या भी काफी है। इसके उदाहरण हैं— असमी

मकाका, पिगटेल मकाका, स्टंप टेल मकाका और अनेक विशिष्ट प्रकार के हूलोक गिब्बन (हाइलोबेट्स हुलोक)। विलुप्ति के कागर पर खड़े एप प्रजाति के जीव भी इस अभेद्य और अछूते जंगल में घूमते देखे जा सकते हैं।

वानस्पतिक विविधता का नायाब नमूना नामदफा राष्ट्रीय उद्यान की वानस्पतिक और जैविक विविधता पर अभी भी अध्ययन की आवश्यकता है। विविधता के मामले में यह इतना धनी है कि पूर्ण सर्वेक्षण में किसी भी वनस्पतिशास्त्री के लिए पचास साल भी कम पड़ जाएंगे। यहां 150 से भी अधिक प्रकार की इमारती लकड़ी पाई जाती है। पाइनस मरकुसी और एबिअस देलावारी जैसी इमारती लकड़ियां भारत में अन्यत्र कहीं नहीं पाई जातीं। आर्किडों में सबसे अनूठे और विलुप्तप्राय ब्लू वांडा यहीं पाए जाते हैं। यहां एक दुर्लभ औषधीय पौधा मिशिमी तीता (कॉप्टी तीता) पाया जाता है जिसका प्रयोग यहां के आदिवासी विभिन्न रोगों के इलाज में करते हैं। अब इसके वाणिज्यिक प्रयोग पर रोक लगा दी गई है।

नामदफा पार्क में देखे जाने योग्य स्थान

देबान : यह नोआ दिहिंग नदी के तट पर स्थित खूबसूरत फॉरेस्ट कैंप है। यहां से पर्यटक नोआ दिहिंग नदी के दोनों किनारों पर फैली अद्भुत प्राकृतिक सुंदरता का आनंद ले

शेषांश पृष्ठ 50 पर

माल एवं सेवा कर

माल एवं सेवा कर (जीएसटी) पर विमर्श पत्र हाल ही में आधिकारिक तौर पर जारी किया गया है। इसमें इसकी पृष्ठभूमि शुरू करने का संदर्भ और प्रकृति आदि का विवेचन किया गया है। आइए जानते हैं कि जीएसटी अपने समग्र रूप में क्या है।

● माल एवं सेवा कर (जीएसटी) क्या है?

वर्तमान अप्रत्यक्ष कर व्यवस्था में केंद्र एवं राज्य सरकारों द्वारा लगाए जाने वाले करों की संघीय संरचना अंतर्निहित है। ये विभिन्न प्रकार के लेन-देन पर लगाए जाते हैं। कोई ऐसी अकेली कर पद्धति नहीं है जिसमें आपूर्ति शृंखला के दौरान सारी मूल्यवर्धन प्रक्रिया आ जाए। अधिकांश करों की एक-दूसरे के बीच अदला-बदली नहीं हो सकती। इसके कारण एक ऐसा प्रभाव आ जाता है जो माल एवं सेवाओं की क़ीमतें बहुत बढ़ा देता है। इस प्रकार कर का अनुपालन और प्रशासन जटिल बन जाता है। लंबे समय से इस पूरी व्यवस्था को चुस्त-दुरुस्त करने की ज़रूरत महसूस की जा रही थी। सुधारों के पहले चरण के दौरान व्यापक वैट व्यवस्था लागू की गई। इसके बाद एक व्यापक माल एवं सेवा कर (जीएसटी) का प्रस्ताव किया गया है। इसके लागू किए जाने वाले मॉडल पर गत 3-4 वर्षों से केंद्र और राज्यों के वित्तमंत्रियों की सशक्तीकृत समिति के बीच विचार-विमर्श चलता रहा है ताकि इस मॉडल पर सहमति बनाई जा सके।

पहले चर्चा-पत्र के साथ ही व्यापक जीएसटी व्यवस्था का मसौदा तैयार करने के आधिरी चरण की शुरूआत हो गई है।

● प्रस्तावित जीएसटी व्यवस्था की प्रमुख बातें क्या हैं?

चर्चा पत्र के अनुच्छेद 3 पर विस्तार से

विचार करें तो इसमें दो प्रकार की कर व्यवस्था की बात है— एक होगा केंद्रीय जीएसटी जिसे राज्य कार्यान्वित करेंगे। यह पूरी आपूर्ति शृंखला में सभी माल एवं सेवाओं के लेनदेन पर लगाया जाएगा। इस प्रकार दो कर लगेंगे। एक केंद्रीय स्तर पर और दूसरा राज्य स्तर पर। ये किस दर पर लगाए जाएंगे यह अभी तक तय नहीं है। माल एवं सेवाओं की अंतरराज्यीय आपूर्ति इसका अपवाद होगी। इस पर सिफ़्र एक कर लगेगा जिसे अंतरराज्यीय जीएसटी (आईजीएसटी) कहा जाएगा और यह सीजीएसटी और एसजीएसटी का जोड़ होगा। इसे सभी ऐसी आपूर्ति पर देना होगा।

सीजीएसटी (केंद्रीय माल एवं सेवा कर) और एसजीएसटी (राज्यस्तरीय माल एवं सेवा कर) हर लेनदेन पर देय होंगे और क्रमशः केंद्र एवं राज्य सरकार को प्राप्त होंगे। हर ऐसे कर के साथ समुचित टैक्स क्रेडिट ऑफसेट्स भी उपलब्ध होंगे। इस प्रकार कच्चे माल पर दिए गए सीजीएसटी के बदले तैयार माल पर देय सीजीएसटी पर छूट मिल सकेगी और कच्चे माल पर अदा एसजीएसटी देने के बाद तैयार माल पर उतनी ही रकम एसजीएसटी के रूप में नहीं देनी पड़ेगी। दोनों करों पर क्रॉस यूटिलाइजेशन की अनुमति नहीं होगी। तथापि, सेवाओं और माल पर हर कर के बीच क्रॉस यूटिलाइजेशन संभव होगा। इस दस्तावेज़ में एसजीएसटी के मामले में 10 लाख रुपये के ऊपरी स्तर काफी ऊंचा, 1.5 करोड़ रुपये रखने को कहा गया है। इसमें करों पर कर जोड़ने (कंपार्डिंग) की सिफ़ारिशें भी हैं। तंबाकू, शराब को परिपक्व बनाने और पेट्रोलियम पदार्थों के बारे में भी सिफ़ारिशें की गई हैं। लेकिन इस दस्तावेज़ में जीएसटी दरों और

दोहरे जीएसटी के लागू किए जाने की तारीख के बारे में कुछ नहीं कहा गया है।

संक्षेप में, यह बहुत बढ़िया दस्तावेज़ है और उम्मीद की जा सकती है कि इसी कोटि के और दस्तावेज़ आएंगे।

● जीएसटी के अंतर्गत कौन-सी मदें और सेवाएं आएंगी?

जीएसटी में केंद्रीय उत्पाद कर, सेवा कर, अतिरिक्त उत्पाद कर, विशेष अतिरिक्त उत्पाद कर, उपप्रभार और उपकर जैसे केंद्रीय कर तथा— राज्य वैट/बिक्री कर, मनोरंजन कर, विलासिता कर, लॉटरी पर कर, सट्टेबाजी और जुआ, राज्य उपकर तथा उपप्रभार और प्रवेश कर (चुंगी और स्थानीय सरकार के करों के अलावा) जैसे राज्य कर शामिल कर लिए जाएंगे।

● कौन-सी मदें और सेवाएं इसके अंतर्गत नहीं आतीं?

अल्कोहल, कुछ पेट्रोलियम पदार्थों (जैसे ईंधन) पर उपकर, चुंगी आदि स्थानीय प्राधिकारियों द्वारा वसूली जाती हैं अतः ये जीएसटी के अंतर्गत नहीं आते।

इसके अलावा, अभी यह तय नहीं किया गया है कि राज्यों द्वारा कुछ विशेष वस्तुओं (जैसे खेती की उपज) पर लगाए जाने वाले बिक्री कर जीएसटी में आएगा अथवा नहीं। यह फ़ैसला भी नहीं हुआ है कि क्या प्राकृतिक गैस जैसे पदार्थ इसमें शामिल होंगे। संपत्ति पर अप्रत्यक्ष कर का क्या होगा—यह भी अभी तय नहीं है, इसका भी उल्लेख नहीं है कि इनसे संबद्ध लेनदेन का क्या किया जाएगा।

● जीएसटी के अंतर्गत अंतरराज्यीय लेनदेन किस प्रकार होंगे?

सशक्तीकृत समिति ने अंतरराज्यीय लेनदेन के एक समन्वित मॉडल पर विचार किया है।

प्रस्ताव है कि ऐसे लेनदेन पर समन्वित जीएसटी लगाया जाए। यह सीजीएसटी और एसजीएसटी के जोड़ के बराबर होगा। अंतरराज्यीय विक्रेता इस उद्देश्य से आईजीएसटी, सीजीएसटी और एसजीएसटी के लिए क्रेडिट लेने के बाद मूल्यवर्धन पर आईजीएसटी अदा करेगा। इसके बदले क्रेता अपने तैयार माल पर एसजीएसटी की देनदारियां निपाते समय आईजीएसटी का दावा कर सकता है। इसके जरिये कच्चे माल की शृंखला निर्बाध चलते रहने की उम्मीद है। साथ ही यह भी सुनिश्चित हो सकेगा कि अंतरराज्यीय क्रेता या विक्रेता को न तो कर पहले अदा करना होगा और न ही उसका ज्यादा पैसा फंसेगा।

● जीएसटी की प्रस्तावित दर संरचना क्या है?

माल के बारे में एसजीएसटी की दो दर संरचना होगी (आवश्यक चीजों के लिए कम दर और अन्य के लिए मानक दर)। क्रीमती धातुओं और कर मुक्त माल सूची के लिए एक विशेष दर होने की संभावना है। केंद्र सीजीएसटी के लिए दो दर संरचना रख सकता है जो एसजीएसटी के दर स्तरों के अनुरूप हो सकती है। सेवाओं के लिए सीजीएसटी और एसजीएसटी-दोनों के लिए इकहरी दर संरचना रखे जाने का प्रस्ताव है। निर्वात के लिए शून्य दर वाली संरचना का प्रस्ताव है। सीजीएसटी/एसजीएसटी दोनों करों से निर्यात को छूट होगी। विशेष आर्थिक क्षेत्र (एसईजेड) को भी ऐसे ही लाभ देने का प्रस्ताव है जो उनके प्रसंस्करण

क्षेत्रों तक ही सीमित होगा। एसईजेड और डीटीए ग्राहक के बीच होने वाले किसी लेनदेन पर कोई कर लाभ नहीं मिलेगा। आयात सौदों पर भी जीएसटी का प्रस्ताव है।

● जीएसटी के अंतर्गत मौजूदा प्रोत्साहन योजनाओं का क्या होगा?

कर संग्रहण के बाद इस समय औद्योगिक प्रोत्साहन के रूप में उपलब्ध कर छूट को कर वापसी के रूप में बदला जा सकता है। विशेष औद्योगिक क्षेत्र योजनाओं के मामलों में, ऐसी योजनाएं तब तक चलती रहेंगी जब तक वे वैध हैं। कोई नयी छूट अथवा पहले से चल रही छूट योजना वैध नहीं होगी और प्रस्ताव के अनुसार ही मान्य होगी। ऐसे मामलों में जीएसटी वसूली के बाद केंद्र या राज्य प्रतिपूर्ति कर सकते हैं।

● आगे का रास्ता क्या है?

सशक्तीकृत समिति ने केंद्रीय और राज्य के अधिकारियों का एक संयुक्त कार्य समूह गठित किया है। यह समूह सीजीएसटी और आईजीएसटी में सविधान संबंधी संशोधनों के बारे में कानून का मसौदा तैयार करेगा जिसमें इस पर लागू नियम और प्रक्रियाएं दी जाएंगी, एसजीएसटी के लिए एक उपयुक्त मॉडल तैयार करेगा, सीजीएसटी के प्रशासन के लिए नियम बनाएगा और विवाद निस्तारण तथा अग्रिम फ़ैसलों से संबंधित मामलों पर ध्यान देगा।

● निष्कर्ष

जीएसटी मॉडल में राज्यों और केंद्र की

परस्पर विरोधी जरूरतों और सरोकारों का ध्यान रखा गया है। तथापि, ऐसी आशंका है कि इसने पूरे भारत में एक जैसी जीएसटी व्यवस्था लागू करने की दूरदृष्टि को कमज़ोर कर दिया है। अतः समान जीएसटी व्यवस्था से मिलने वाले लाभों और उद्देश्यों के पूरे होने की सिफ़र आंशिक संभावना है। यह भी एक ख़तरा है कि अगर उद्योग-व्यापार की जरूरतों को ध्यान में रखते हुए इस जीएसटी मॉडल को सही ढंग से लागू न किया गया, तो यह भी उतना ही जटिल बन जाएगा जितना जटिल मौजूदा अप्रत्यक्ष कर व्यवस्था है। उम्मीद की जाती है कि सशक्तीकृत समिति इस मॉडल में सुधार करेगी और सभी हितधारकों की प्रतिक्रिया का ध्यान रखेगी। मौजूदा केंद्रीय और राज्य स्तर के कच्चे माल पर क्रेडिट, राज्य अधिकार क्षेत्रों के उपयुक्त निर्धारण के सिद्धांतों, संचित एसजीएसटी क्रेडिट के नकद प्रवाह पर प्रभाव, निर्यात वापसी के दावे करने के तरीकों आदि का ध्यान रखते हुए यह कानून तैयार करने की ज़रूरत है।

केंद्र और सशक्तीकृत समिति के सामने सिफ़र एक बार मिलने वाला ऐसा अवसर मौजूद है जब कर प्रशासन, न्यायिक सुधारों और ऐसी व्यवस्था को आगे बढ़ाया जा सकता है जो भारत में व्यवस्थित व्यापार सुनिश्चित कर सके। उम्मीद है कि इस व्यवस्था को लागू करने का काम सतर्कता और पूरी जिम्मेदारी के साथ संपन्न कर लिया जाएगा। □

पृष्ठ 48 का शेषांश

सकते हैं। यह कैंप चारों ओर से हरी-हरी चादर के समान धरती पर बिछे प्रतीत होने वाले वृक्षों-झाड़ियों से घिरा हुआ है। यहां से होकर बहने वाली नोआ दिहिंग ट्रैकिंग, हाइकिंग और एंगलिंग के लिए आदर्श मानी जाती है।

फर्मबेस : यह जगह भी नोआ दिहिंग नदी के ही किनारे स्थित है लेकिन देबान फॉरेस्ट कैंप से 25 किलोमीटर दूर है। यह प्राकृतिक वैभव से भरपूर कैंपिंग स्थल है। घने जंगल से घिरे इस स्थान पर पर्यटक पक्षियों और जीव-जंतुओं को काफी पास से देख सकते हैं। यहां कैंपिंग करने के लिए वन विभाग उपकरण और गाइड भी उपलब्ध करता है।

हॉर्नबिल : देबान से सिफ़र 9 किलोमीटर

दूर है। यहां हॉर्नबिल पक्षी बहुतायत में मिलने के कारण इसे यह नाम दिया गया है। यहां इन्हें झुंडों में उड़ते हुए देखा जा सकता है।

हल्दीबारी : देबान से 5 किलोमीटर आगे यह स्थित है। यह स्थान इतना खूबसूरत है जिसे अब तक आपने सिफ़र तस्वीरों में देखा होगा। देबान से यहां जाने के लिए नोआ दिहिंग नदी को पार करना पड़ता है। यहां रात्रि विश्राम की भी सुविधा उपलब्ध है।

बुलबुलिया : यह एक मनमोहक कैंपिंग स्थल है और इसका यह नाम वसंत ऋतु में यहां नज़र आने वाले अद्भुत सौंदर्य के कारण मिला है। यहां रात बितानेवाला अपने को भाग्यवान मानता है। यहां जलीय जंतुओं और पौधों को निकट से देखा जा सकता है।

कैमरा प्लाइट : यहां से आप नामदफा के विस्मयकारी सौंदर्य का आनंद ले सकते हैं। यहां की हरियाली देखते ही बनती है।

मोतीझील : यह जलीय परितंत्र का अद्भुत नमूना है। यहां आप बहुत से शाकाहारी जानवरों को झील के किनारे हरी-हरी घास चरते देख सकते हैं। पक्षियों में रुचि रखनेवालों के लिए तो यह स्वर्ग ही है।

गांधीग्राम : यह नामदफा की दक्षिणी-पूर्वी सीमा पर स्थित है। साथ ही यह पूर्वोत्तर दिशा में भारत का दूर्वर्ती गांव भी है। यहां लिसु या यौबिन समुदाय के आदिवासी रहते हैं। यह देबान से लगभग 120 किलोमीटर की दूरी पर है। ट्रैकिंग करने वालों के लिए यह जगह काफी मुफ़्रीद है। □

ई-मेल: brajvaishali@gmail.com

कश्मीर में तरक्की की बयार

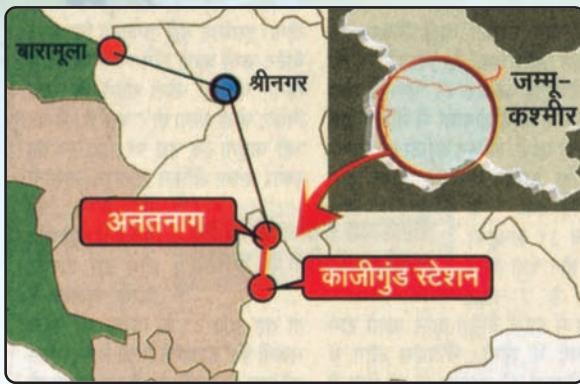
देश का सबसे ऊंचा रेलवे स्टेशन कश्मीर घाटी में स्थित काजीगुंड काम करने लगा है। प्रधानमंत्री मनमोहन सिंह ने पिछले दिनों कश्मीर रेल लिंक के अनंतनाग-काजीगुंड उपखंड का उद्घाटन किया। इस समारोह में यूपीए अध्यक्ष सोनिया गांधी ने भी शिरकत की।

श्रीनगर से 80 किलोमीटर दूर स्थित काजीगुंड स्टेशन समुद्र तल से 1,722 मीटर की ऊंचाई पर स्थित है। इस उपखंड के खुलने से घाटी राजधानी श्रीनगर और अन्य अहम स्टेशनों से जुड़ गई। इस उपखंड में ट्रेनें 100 किलोमीटर प्रतिघंटे की रफ्तार से दौड़ने लगी हैं। पहले यहां 80 किलोमीटर प्रतिघंटे की रफ्तार से ट्रेनें चल रही थीं।

18 किलोमीटर लंबे अनंतनाग-काजीगुंड उपखंड के खुलने के साथ ही रेलवे ने 19 किलोमीटर लंबे काजीगुंड-बारामूला उपखंड को पूरा कर लिया है। इस पूरे खंड में 113 छोटे-बड़े पुल हैं, जिनमें 435 मीटर लंबा वीथ नदी का पुल भी है। इस परियोजना को पूरा होने में लगभग 9 साल लगे हैं। परियोजना वर्ष 2000 में शुरू हुई थी।

अन्य तीन उपखंडों पर काम जारी

काजीगुंड-बनिहाल खंड में 11 किलोमीटर लंबी सुरंग बनाई जानी है, जिसमें से 7.8 किलोमीटर लंबी सुरंग का काम पूरा हो चुका



है। रेलवे दो अन्य उपखंड ऊधमपुर-कटरा और कटरा-ऊधमपुर पर भी काम कर रहा है। इस मौके पर ताजा पहल करते हुए प्रधानमंत्री डॉ. मनमोहन सिंह ने जम्मू-कश्मीर में शांति को बढ़ावा देने के लिए 'सार्थक विचारों' वाले किसी भी व्यक्ति से बातचीत की केंद्र की मंशा जताई है। उन्होंने पाकिस्तान के साथ बातचीत का सिलसिला फिर से शुरू करने की पेशकश की, लेकिन साथ ही जोड़ा कि पहले पड़ोसी देश को भारत में जारी आतंकवाद

में शामिल लोगों की गतिविधियों पर अंकुश लगाना होगा। पाकिस्तान संजीदगी और भरोसा दिखाता है तो भारत पीछे नहीं रहेगा।

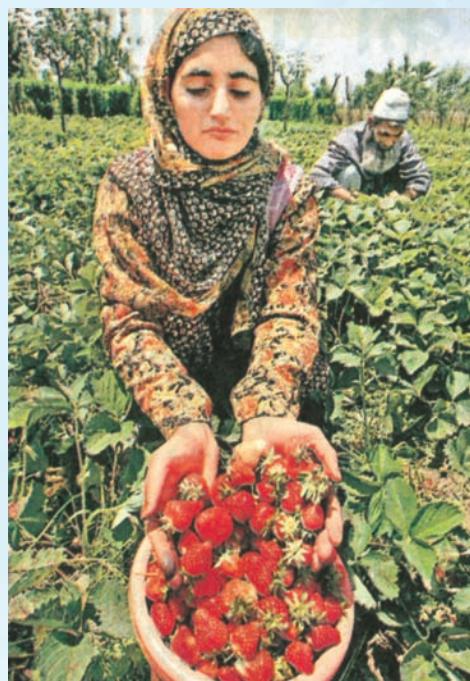
मनमोहन सिंह ने यहां यूपीए अध्यक्ष सोनिया गांधी और राज्य वेद नेताओं— मुख्यमंत्री उमर अब्दुल्ला, केंद्रीय मंत्री फारूक अब्दुल्ला और गुलाम नबी आजाद तथा पूर्व मुख्यमंत्री मुफ्ती मोहम्मद सईद की मौजूदगी में एक जनसभा में जम्मू-कश्मीर के विकास में केंद्र की हर संभव मदद का एलान किया।

प्रधानमंत्री ने याद दिलाया कि पांच वर्ष पहले उनकी सरकार ने हिंसा का रास्ता छोड़ने वालों के साथ बिना शर्त बातचीत का संकल्प लिया था, जिसके बाद सरकार ने विभिन्न समूहों से बातचीत की और कई कदम उठाए।

उन्होंने कहा, “मैं एक बार

फिर कहना चाहता हूं कि हम ऐसे हर व्यक्ति से बात करने को तैयार हैं, जिनके पास कश्मीर में शांति और विकास को बढ़ावा देने के लिए कोई सार्थक विचार हो।”

जनसभा के बाद प्रधानमंत्री और अन्य नेताओं ने कश्मीर रेल परियोजना के 18 किलोमीटर लंबे अनंतनाग-काजीगुड़ खंड का उद्घाटन किया। उन्होंने कहा, “वह दिन दूर नहीं जब जम्मू-कश्मीर के बीच रेलगाड़ियां बनिहाल दर्द से होकर गुजरेंगी।” प्रधानमंत्री ने 2004 के अपने शांति प्रस्ताव को याद करते हुए कहा, 2004-07 के बीच पाकिस्तान के साथ सबसे ज्यादा सार्थक और उपयोगी बातचीत हुई। तब आतंकवाद और हिंसा अपने उतार पर थी। प्रधानमंत्री ने कहा, “हम सही दिशा में बढ़ रहे थे। पहली बार लोगों को यह अहसास होने लगा था कि समस्या का स्थायी और अंतिम समाधान अब सन्निकट है। हालांकि, हमने जो तमाम प्राप्ति की थी उसमें आतंकवादी गतिविधियों से बार-बार बाधा डाली गई।” □



अब कश्मीर के बागानों से रसीली स्ट्रॉबेरी का भी निर्यात होने लगा है। पिछले कुछ समय से कश्मीर घाटी में इनकी खेती काफी लोकप्रिय हुई है।



शरद ऋतु के आगमन के साथ ही श्रीनगर की जावरवान पहाड़ियों के पास चिनार के पेड़ों की पत्तियां झड़ने लगी हैं और रंगत सुर्ख लाल होने लगी है।



विकास के मानदंड

गरीबी रेखा पर कृष्ण सवाल

● सुनील

गरीबी रेखा और देश में गरीबी का आकलन देश का सबसे ज्यादा चर्चित और विवादास्पद मसला है। सरकारों, योजनाकारों, अर्थशास्त्रियों और बुद्धिजीवियों के बीच तो इस पर गंभीर मतभेद है ही, गांवों और शहरों की गरीब बस्तियों में भी गरीबी रेखा की सूची को लेकर काफी विवाद एवं झगड़े रहते हैं। देश के गरीबों के हर आंदोलन में एक मांग गरीबी रेखा की सूची में गरीबों के छूटे नाम शामिल करने की होती है। पिछले डेढ़ दशक से धीरे-धीरे जनकल्याण की अधिकतर योजनाओं एवं कार्यक्रमों के लाभ गरीबी रेखा की सूची के परिवारों तक सीमित कर दिए गए हैं, इसलिए यह सूची काफी महत्वपूर्ण बन गई है। एक तरह से बीपीएल कार्ड किसी सरकारी कार्यक्रम का लाभ प्राप्त करने का लाइसेंस बन गया है। इसीलिए बीपीएल को लेकर इतना बवाल मचता रहता है।

भारत सरकार के प्रस्तावित खाद्य सुरक्षा विधेयक में भी खाद्य सुक्ष्म प्रावधानों को गरीबी रेखा के नीचे के परिवारों तक सीमित करने का प्रस्ताव है। इस संदर्भ में खाद्य मंत्रालय द्वारा राज्य सरकारों को लिखे एक पत्र में इस बात पर चिंता भी जाहिर की गई है कि ये सरकारें योजना आयोग द्वारा निर्धारित गरीबों की संख्या से काफी ज्यादा बीपीएल राशन कार्ड जारी कर देती हैं। योजना आयोग के पिछले आकलन के

मुताबिक देश में 6.52 करोड़ गरीब परिवार हैं, किंतु देश में 10.68 करोड़ बीपीएल राशन कार्ड हो गए हैं, यानी 4.16 करोड़ कार्ड ज्यादा बन गए हैं। नये अनुमान के मुताबिक तो अब इनकी संख्या और कम 5.91 करोड़ ही होना चाहिए। कई राज्य सरकारों ने भारत सरकार के इस सुझाव पर असहमति जारी की है।

गरीबी रेखा का निर्धारण कैसे होता है? भारत का योजना आयोग देश में गरीबों की संख्या का आकलन कैसे करता है?

गरीबी के आंकड़े

गरीबी के सरकारी आकलनों की शुरुआत सत्तर के दशक से होती है। गरीबी रेखा के निर्धारण के लिए मनुष्य की न्यूनतम कैलोरी (ऊर्जा) ज़रूरत को आधार बनाया गया। यह माना गया कि ग्रामीण क्षेत्रों में एक व्यक्ति को प्रतिदिन 2,400 कैलोरी तथा शहरी क्षेत्रों में 2,100 कैलोरी की ज़रूरत होती है (शहर के लोग कम मेहनत का काम करते हैं, इसलिए उनकी ज़रूरत कम मानी गई)। फिर यह देखा गया कि इतनी कैलोरी वाला भोजन पाने के लिए प्रतिव्यक्ति मासिक उपभोग ख़र्च या आमदनी कितनी होनी चाहिए। इस हिसाब से देश की गरीबी रेखा ग्रामीण व शहरी क्षेत्रों के लिए तय की गई और इससे कम में गुजारा करने वाले लोग गरीब माने गए। इसके आंकड़े निकालने के लिए राष्ट्रीय नमूना सर्वेक्षणों (एनएसएस)

का सहारा लिया गया, जो नियमित रूप से किए जाते हैं। इस गरीबी रेखा को समय-समय पर संशोधित करने के लिए प्रतिव्यक्ति मासिक आय को कीमत सूचकांक में बुद्धि के अनुपात में बढ़ाया जाता रहा। इस तरह अभी भी गरीबी रेखा और गरीबों की संख्या का निर्धारण सत्तर के दशक में तय किए गए कैलोरी मानदंडों से जुड़े आय-स्तरों से ही हो रहा है।

इन आंकड़ों से तस्वीर काफी उजली दिखाई देती है और देश में गरीबी लगातार घटती हुई मालूम होती है। आकलन के मुताबिक वर्ष 1973-74 में देश में 55 प्रतिशत लोग गरीब थे, 1983 में इनका प्रतिशत घटकर 44 रह गया। फिर वर्ष 1993-94 में गरीबों का प्रतिशत और घटकर 36 तथा 1999-2000 में 26 प्रतिशत रह गया। वर्ष 2004-05 में ज़रूर यह मामूली बढ़ा तथा 27.5 प्रतिशत हो गया। इन गरीबों में लगभग तीन-चौथाई गांवों में रहते हैं।

इस प्रकार बैश्वीकरण और आधुनिक विकास के समर्थक कह सकते हैं कि विकास के फायदे नीचे तक पहुंच रहे हैं और गरीबी कम हो रही है। हालांकि इन सरकारी आंकड़ों के मुताबिक भी चालू दशक में गरीबी कम नहीं हो रही है जबकि इस दशक में अर्थव्यवस्था की विकासदर काफी ज्यादा रही है। जैसे-जैसे अर्थव्यवस्था की बृद्धिदर बढ़ रही है, उसका पूरा हिस्सा ऊपर के अमीर लोग ही

हड्डप रहे हैं तथा गरीबों को कुछ खास नहीं मिल रहा है।

हालांकि गरीबी रेखा को मात्र कैलोरी खपत से तय करने की पद्धति में काफी समस्याएँ हैं, किंतु सरकार द्वारा तय की गई गरीबी रेखा बाद के वर्षों में वह न्यूनतम कैलोरी स्तर प्रदान करने वाली भी नहीं रह गई है, जिसको लेकर सत्तर के दशक में गरीबी निर्धारण की शुरुआत की गई थी। इसका खुलासा पिछले दिनों भारत सरकार के ग्रामीण विकास मंत्रालय द्वारा डॉ. एन.सी. सक्सेना की अध्यक्षता में बने विशेषज्ञ समूह की रपट में भी किया गया है। इसे पहले भी डॉ. उत्सा पटनायक, ज्यां द्रेज़ आदि अर्थशास्त्रियों ने उज्ज्ञागर किया था, किंतु सरकारी समिति द्वारा इसकी स्वीकारोक्ति महत्वपूर्ण है। गरीबी रेखा और कैलोरी स्तर में बढ़ती खाई

वर्ष 2004-05 की कीमतों पर सरकार ने गरीबी रेखा को ग्रामीण क्षेत्रों में 356 रुपये प्रतिव्यक्ति प्रतिमाह तथा शहरी क्षेत्रों में 539 रुपये प्रतिव्यक्ति पर निर्धारित की है। किंतु आय के इस स्तर पर इस वर्ष में मात्र 1,800 कैलोरी का उपभोग संभव था। यदि निर्धारित 2,400 एवं 2,100 कैलोरी के उपभोग को देखा जाए, तो इस वर्ष में गरीबी रेखा की आय ग्रामीण क्षेत्रों में क्रीब 700 रुपये प्रतिमाह एवं शहरी क्षेत्रों में क्रीब 1,000 रुपये प्रतिमाह होनी चाहिए। और इस स्तर पर देश में गरीबों का प्रतिशत 75 से ऊपर आएगा, न कि 27.5 प्रतिशत। इसी तरह से पिछले वर्षों के गरीबी के आकलन भी काफी बढ़ गए।

वर्ष 1999-2000 में योजना आयोग ने गरीबी रेखा के समकक्ष प्रतिव्यक्ति मासिक आय को ग्रामीण क्षेत्र में 328 रुपये और शहरी क्षेत्र में 454 रुपये माना था। किंतु यदि 2,400 और 2,100 कैलोरी के प्रतिमानों को लिया जाए, तो इस वर्ष के राष्ट्रीय नमूना सर्वेक्षण के मुताबिक यह आय क्रमशः 565 और 628 रुपये होनी चाहिए। और यदि इस स्तर को गरीबी रेखा माना जाए तो भारत में उस वर्ष आबादी में गरीबों का अनुपात 70.1 प्रतिशत हो जाएगा, जबकि आंकड़े मात्र 26.10 प्रतिशत ही गरीब बता रहे हैं। जैसाकि सक्सेना समिति स्वीकार करती है, गरीबी की एक बहुत बड़ी संख्या को बीपीएल योजनाओं के फायदों से वर्चित किया जा रहा है। वर्ष 1999-2000 में

गलत गणनाओं के कारण देश की 44 प्रतिशत आबादी या 44 करोड़ लोगों को बाहर कर दिया गया है, जिन्हें सरकार द्वारा तय किए गए मानदंडों के मुताबिक गरीबों की श्रेणी में आना चाहिए। वर्ष 2004-05 में बाहर किए गए गरीबों की यह संख्या बढ़कर 48 प्रतिशत आबादी या लगभग 54 करोड़ हो गई है।

इस फ़र्क का कारण यही है कि योजना आयोग ने हर बार कैलोरी उपभोग के अनुरूप गरीबी रेखा की मासिक आय निर्धारित करने के बजाय वर्ष 1973-74 में तय की गई आय को मात्र कीमत सूचकांक बृद्धि के अनुपात में बढ़ाकर अपने कर्तव्य की इतिहासी मान ली। किंतु इस बीच केवल विभिन्न वस्तुओं-सेवाओं की तुलनात्मक कीमतों में फ़र्क आया है, आम लोगों के उपभोग के अन्य मदों पर ख़र्च बढ़ा है तथा भोजन पर ख़र्च का हिस्सा कम हुआ है। इसे साधारण परिवारों की समृद्धि या बेहतरी का सूचक नहीं माना जा सकता, क्योंकि उस हालत में भी एक न्यूनतम कैलोरी वाला भोजन तो बे करते। ऐसा प्रतीत होता है कि इलाज, परिवहन, ईंधन आदि कई मदों पर गरीबों का ख़र्च बढ़ रहा है तथा मज़बूर होकर उन्हें भोजन में कटौती करनी पड़ रही है। यह स्थिति गंभीर अभावों एवं कंगाली की ओर इशारा करती है।

सरकार द्वारा निर्धारित गरीबी रेखा पर प्रतिव्यक्ति प्रतिदिन कैलोरी उपभोग लगातार कम होता गया है। ग्रामीण क्षेत्रों में यह वर्ष 1977-78 में 2,170 कैलोरी, वर्ष 1983 में 2,060 कैलोरी, वर्ष 1993-94 में 1,980 कैलोरी, वर्ष 1999-2000 में 1,890 कैलोरी तथा 2004-05 में 1,820 कैलोरी रह गया है। इससे एक और कटु सच्चाई का पता चलता है। वह यह कि देश की जनता का कैलोरी उपभोग निरंतर घटता जा रहा है।

घटती कैलोरी, बढ़ती बदहाली

प्रतिव्यक्ति प्रतिदिन कैलोरी एवं प्रोटीन उपभोग वर्ष 1983 से लगातार कम होता गया है।

कुछ विद्वानों ने यह दलील देने की कोशिश की है कि कैलोरी का घटता हुआ उपभोग अभावों की नहीं, बेहतर ज़िंदगी का द्योतक है जिससे शारीरिक मेहतन कम हो रही है। यह ऊपर के संपन्न हिस्से के लिए सही हो सकता है, किंतु नीचे की गरीब मेहनतकश आबादी को तो काफी मेहनत का काम करना पड़ता है और उनकी कैलोरी उपभोग बहुत कम है। यदि

उनकी आर्थिक हालत बेहतर होती, तो निश्चित ही यह बढ़ना चाहिए था। दूसरी बात यह है कि पिछले दशकों में भारत में जन्मदर कम हुई है और आबादी में बच्चों के मुक़ाबले वयस्कों का अनुपात बढ़ा है। वयस्कों को ज्यादा कैलोरी की ज़रूरत होती है, इसलिए भारतीय आबादी की औसत कैलोरी खपत तो बढ़नी चाहिए थी। स्पष्ट है कि घटती कैलोरी खपत भारत की बड़ी आबादी की लगातार बनी हुई एवं बढ़ती हुई कंगाली, बदहाली, अभावग्रस्तता और भुखमरी की ओर इंगित करता है।

भुखमरी की रेखा

इसकी पुष्टि अन्य स्रोतों से भी होती है। देश में प्रतिव्यक्ति उपलब्ध अनाज की मात्रा पहले तो बढ़ी थी, किंतु वर्ष 1991 के बाद से लगातार गिर रही है। वर्ष 1951 में यह 334 ग्राम प्रतिदिन थी, जो 1991 में बढ़कर 468.5 ग्राम हो गई थी, किंतु उसके बाद घटते हुए वर्ष 2007 में 407.4 ग्राम रह गई। किंतु दालों की प्रतिव्यक्ति उपलब्ध में तो 1961 से ही लगातार गिरावट आ रही है। देश में प्रतिव्यक्ति प्रतिदिन दाल की उपलब्ध मात्रा वर्ष 1951 में 60.7 ग्राम से बढ़कर 1961 में 69 ग्राम हुई थी, किंतु फिर यह लगातार घटते हुए वर्ष 2007 में 35 ग्राम, यानी आधी रह गई। भारतवासियों के लिए अनाज कैलोरी का और दाल प्रोटीन का प्रमुख स्रोत हैं। फिर ये मात्राएं समस्त भारत की औसत हैं, यानी गरीब या साधारण हैसियत के भारतीयों के लिए यह गिरावट और ज्यादा हो सकती है। इसलिए बड़ी संख्या में भारतवासी भरपेट और संतुलित भोजन नहीं कर पाते हैं।

भारत में कुपोषण की गंभीर हालातों से भी इसकी तसदीक होती है। वर्ष 2005-06 में हुए राष्ट्रीय परिवार स्वास्थ्य सर्वेक्षण से पता चलता है कि देश के 3 वर्ष से छोटे बच्चों में लगभग आधे (46 प्रतिशत) कुपोषित हैं और तीन चौथाई से ज्यादा (79 प्रतिशत) कमज़ोर एवं रक्ताल्पता से ग्रस्त हैं। भारत में खून की कमी एवं कमज़ोरी से ग्रस्त महिलाओं का प्रतिशत सात वर्ष पहले के मुक़ाबले घटने के बजाय 52 से बढ़कर 56 हो गया है। एक अंतरराष्ट्रीय संस्था द्वारा तैयार विश्व भूख सूचकांक के 118 देशों में भारत का स्थान बहुत नीचे 94वां है। इस स्थिति को डॉ. उत्सा पटनायक ने 'भूख का गणराज्य' नाम दिया है।

भारत सरकार द्वारा तय कैलोरी मानदंडों पर

भी कई सवाल उठे हैं और इन्हें अर्पणा बताया गया है। भारतीय चिकित्सा अनुसंधान परिषद ने वर्ष 2004 के अपने एक प्रकाशन में बताया कि भारी मेहनत का काम करने वाले पुरुष को 3,800 कैलौरी तथा महिला को 2,925 कैलौरी मिलना चाहिए। फिर एक इंसान को सिर्फ़ कैलौरी ही नहीं, प्रोटीन, वसा, खनिज लवण, विटामिन आदि कई तरह के पोषक तत्वों की ज़रूरत होती है। भोजन के अलावा भी इंसान की कई प्रकार की ज़रूरतें होती हैं और उन पर ख़र्च में भी समय के साथ परिवर्तन होते रहते हैं। सरकार द्वारा ग़रीबी रेखा के निर्धारण में इन सब की उपेक्षा की गई है।

बहुआयामी ग़रीबी

दरअसल, ग़रीबी की समस्या एक बहुआयामी समस्या है और इसे सिर्फ़ कैलौरी उपभोग स्तर से समझा नहीं जा सकता। कुपोषण, बीमारियों व भूख से मौतें, चिकित्सा का निजीकरण, अशिक्षा और बीच में विद्यालय त्याग, आवासहीनता, बढ़ती महंगाई, किसानों व बुनकरों की आत्महत्याएं, विस्थापन, बेरोज़गारी आदि इसके अलग-अलग चेहरे व पहलू हैं।

उदाहरण के लिए प्राकृतिक संसाधनों के विनाश एवं उनसे बेदखली से भी भारत की ग्रामीण आबादी के बड़े हिस्से का जीवन प्रभावित हुआ है। जंगलों, चरागाहों, खेतों, नदियों, तालाबों, समुद्र आदि से उनकी जीविका चलती रही है। उनकी कई ज़रूरतें (जैसे— ईंधन, चारा मकान-निर्माण सामग्री, लकड़ी, बांस, जड़ी-बूटी, कंद-मूल, फल, मछली आदि) बिना बाजार में जाए पूरी होती रही है। जैसे-जैसे इनसे वर्चित होकर उन्हें बाजार से पूर्ति करनी पड़ रही है, उनकी अभावग्रस्ता एवं बदहाली बढ़ रही है। यह स्थिति ग़रीबी रेखा के मौद्रिक आकलनों में नहीं झलकती है। यह बिलकुल संभव है कि लोगों की मौद्रिक आय बढ़ रही हो, क्लीमत वृद्धि से भी ज़्यादा बढ़ रही हो, किंतु कुल मिलाकर वे ज़्यादा वर्चित एवं अभावग्रस्त होते जा रहे हों। विस्थापन दो तरह के होते हैं— बड़े बांधों, ख़दानों, कारखानों, शहरों के विस्तार, फायरिंग रेंज आदि से सीधे विस्थापितों की संख्या करोड़ों में पहुंच गई है। दूसरा, प्राकृतिक संसाधनों के क्ष्य तथा ग्रामीण आबादी की पहुंच व उपयोग पर रोक लगाने से अप्रत्यक्ष एवं क्रमिक विस्थापन भी काफी बढ़ा है।

एक अनुमान के मुताबिक वर्ष 1951 से

1990 के बीच 2.13 करोड़ लोग विभिन्न परियोजनाओं से विस्थापित हुए हैं। इनमें 40 प्रतिशत से ज़्यादा आदिवासी हैं। ग़रीबी का एक सामाजिक पहलू भी है। देश के ग़रीबों में काफी बड़ी संख्या दलितों, आदिवासियों और अति पिछड़ेँ की है। इसी तरह महिलाओं का एक बड़ा तबका है जो बचा-खुचा और बासी खाना खाती है। भोजन, शिक्षा, इलाज और लाड-दुलार में लड़कों की तुलना में लड़कियों के साथ भेदभाव भारतीय घरों में आम बात है। सामाजिक भेदभाव के साथ पूँजीबादी शोषण और विषमता हालात को और भयानक बना देते हैं। ग़रीबी रेखा और ग़रीबी का आकलन इन भयानक हालातों को व्यक्त करने में बिलकुल अक्षम है।

वैकल्पिक आकलन

ग़रीबी रेखा और ग़रीबी के योजना आयोग के आकलनों का अधूरापन और विसंगतियां अब सर्वमान्य हो चली हैं और कई विद्वानों ने ग़रीबी का वैकल्पिक अनुमान लगाने की कोशिश की है। महेंद्र देव और रवि नामक दो अर्थशास्त्रियों ने सिर्फ़ शिक्षा और स्वास्थ्य पर ख़र्च को जोड़कर ग़रीबी का आकलन किया, तो पाया कि वर्ष 2004-05 में लोगों में ग़रीबी का अनुपात 27.5 के स्थान पर 35.8 प्रतिशत होना चाहिए। गौरतलब, है कि वर्ष 1973 में जब सरकार ने कैलौरी उपभोग (यानी भोजन ख़र्च) पर आधारित ग़रीबी रेखा की आय निर्धारित की थी, तब शिक्षा व स्वास्थ्य पर ग़रीबों का ख़र्च नहीं के बराबर था। तब या तो यह ख़र्च सरकार उठाती थी या फिर ग़रीब लोग अशिक्षित एवं आधुनिक इलाज के बगैर रहते थे। (देसी, घरेलू एवं जड़ी-बूटी आधारित पद्धतियों से वे ज़रूर इलाज करते थे। शिक्षा-स्वास्थ्य के निजीकरण से ये ख़र्च ग़रीब परिवारों के बजट में भी काफी महत्वपूर्ण हो गए हैं।

गुरुस्वामी और अब्राहम नामक दो विद्वानों ने सारी बुनियादी ज़रूरतों की लागत जोड़ते हुए ग़रीबी रेखा के निर्धारण का प्रयास पिछले दिनों किया है। भोजन, इलाज, कपड़े, घर, ईंधन, बिजली एवं अन्य विविध ख़र्चों को न्यूनतम स्तर पर जोड़ने से यह 840 रुपये प्रतिमाह प्रतिव्यक्ति आई। सरकार द्वारा तय की गई वर्तमान ग़रीबी रेखा से यह लगभग दुगुनी है। इस स्तर पर देश की 68.5 प्रतिशत कुल आबादी (और 84 प्रतिशत आबादी) ग़रीबी

रेखा के नीचे होती, जोकि सरकारी संख्या के ढाई गुने के लगभग है।

इस मामले में सबसे सीधा बयान एक और सरकारी आयोग से आया है। अर्जुन सेनगुप्ता की अध्यक्षता में बने असंगठित क्षेत्र के उद्यमों पर राष्ट्रीय आयोग ने बताया है कि देश की 77 प्रतिशत आबादी या 83 करोड़ लोग 20 रुपये रोज़ से कम पर गुज़ारा करते हैं। इसी को ग़रीबी का सबसे अच्छा आकलन मानना चाहिए।

अंतरराष्ट्रीय स्तर पर ग़रीबी के आकलन के लिए 1 या 2 डॉलर प्रतिव्यक्ति प्रतिदिन को ग़रीबी रेखा माना जाता है। विश्व बैंक ने अपने ताजा आकलन में 1 डॉलर की रेखा को सुधारते हुए सब डॉलर प्रतिव्यक्ति प्रतिदिन को ग़रीबी रेखा माना है। इसमें बताया है कि भारत में वर्ष 2005 में 41.6 प्रतिशत लोग या 45.6 करोड़ लोग ग़रीबी रेखा के नीचे थे और दुनिया में सबसे ज़्यादा ग़रीब लोग भारत में ही रहते हैं। दुनिया के कुल ग़रीबों की एक-तिहाई संख्या भारत में है। विश्व बैंक का यह आकलन भी भारत सरकार के आकलन से काफी ज़्यादा है। किंतु इसकी भी काफी आलोचना हुई और इसे ग़रीबी को कम बताने वाला माना गया है। अंतरराष्ट्रीय स्तर पर ग़रीबी का एक और आकलन एशियाई विकास बैंक ने किया है, जिसने 1,35 डॉलर प्रतिव्यक्ति प्रतिदिन को ग़रीबी रेखा माना है। इस आकलन के मुताबिक भारत में 62.2 करोड़ लोग ग़रीब हैं और यह एशिया का दूसरा सबसे ग़रीब देश है।

ग़रीबी, गैरबराबरी व बेरोज़गारी

ग़रीबी रेखा के निर्धारण के बारे में एक और आपत्तिजनक बात यह है कि इनमें इंसान की न्यूनतम ज़रूरतों को स्थिर मान लिया गया है। जैसे-जैसे राष्ट्रीय आय बढ़ेगी, उनकी ज़रूरतें व प्राथमिकताएं भी बदल सकती हैं, यह सोचा ही नहीं गया। बढ़ती हुई राष्ट्रीय आय का हिस्सा समान अनुपात में (या ज़्यादा अनुपात में) नीचे की आबादी को मिले, यह सोचने की ज़रूरत भी नहीं समझी गई। इसे इस तरह भी देखा जा सकता है। वर्ष 1973-74 में जब ग़रीबी रेखा का निर्धारण शुरू हुआ, ग़रीबी रेखा की आय, देश की औसत प्रतिव्यक्ति आय का 62 प्रतिशत थी। किंतु वर्ष 2005-06 में यह मात्र 17 प्रतिशत रह गई। ग़रीबी, गैरबराबरी

शेषांश पृष्ठ 66 पर

दोहा वार्ता के भविष्य और सार्थकता पर उठते सवाल

● योगेश कुमार

भारत सरकार की पहल पर गत 3 और 4 सिंतंबर, 2009 को विश्व व्यापार संगठन में शामिल महत्वपूर्ण 36 देशों के वाणिज्य मंत्रियों का एक लघु मंत्रीस्तरीय सम्मेलन दिल्ली में संपन्न हुआ। वहां तय हुआ कि 14 सिंतंबर को फिर मिलेंगे और दोहा चक्र की वार्ताओं को आगे बढ़ाएंगे। हांगकांग में वर्ष 2005 में आयोजित हुए मंत्रीस्तरीय सम्मेलन के चार साल बाद मृतप्राय विश्व व्यापार संगठन में वार्ताओं को दोबारा शुरू करने का यह एक प्रयास कहा जा सकता है। वैसे तो हर दो वर्ष के बाद विश्व व्यापार संगठन का मंत्री स्तरीय सम्मेलन होना चाहिए, लेकिन पिछले चार वर्ष से वार्ताओं में आए गतिरोध के चलते कोई मंत्रीस्तरीय सम्मेलन नहीं हो पाया। विश्व व्यापार संगठन के प्रमुख पास्कल लेमी लगातार यह प्रयास करते रहे हैं कि किसी तरीके से यह वार्ताएं दोबारा शुरू हो जाएं। इसके लिए कुछ समय पहले जेनेवा में एक लघु मंत्री स्तरीय सम्मेलन जुलाई 2008 में बुलाया गया था, जहां तत्कालीन वाणिज्य मंत्री कमलनाथ ने भागीदारी की थी। वहां भी वार्ताओं में गतिरोध जारी रहा, क्योंकि विकसित देश अपनी स्थिति से हटने के लिए तैयार नहीं थे। अब पुनः 30 नवंबर से लेकर 2 दिसंबर तक विश्व व्यापार संगठन का सातवां मंत्रीस्तरीय सम्मेलन जेनेवा में होने जा रहा है। वर्तमान में चल रहे प्रयास इसी सम्मेलन को सफल बनाने की कोशिश कहे जा सकते हैं।

क्या है गतिरोध का कारण?

विश्व व्यापार संगठन की स्थापना के समय जो समझौते हुए, उसमें विकसित देशों ने यह बादा किया था कि वे कृषि को दी जाने वाली अपनी सब्सिडी में भारी कमी करेंगे और

विकासशील देश अपने कृषि उत्पादों को विकसित देशों में बेच पाएंगे। भारत सरकार द्वारा भी यह प्रचारित किया गया था कि भारत के फूल-फल, सब्जियां और अन्य नकदी फ़सलें विदेशों में बेचने से भारत के किसानों को भारी फ़ायदा होगा। व्यापार समझौतों में कुछ लेना और कुछ देना होता है। इसलिए हमें अपने पेटेंट कानून बदलने होंगे और इससे महंगी दवाओं का दर्द किसानों की खुशहाली से कम हो सकेगा, लेकिन पिछले 15 वर्षों का अनुभव यह बताता है कि भारत के किसानों को विश्व व्यापार संगठन से कोई लाभ नहीं हुआ। विकसित देशों ने अपनी सब्सिडी घटाने के बजाय चार गुना बढ़ा दी। विश्व व्यापार संगठन के समझौतों को धृता दिखाते हुए अपनी 80 प्रतिशत से अधिक सब्सिडी को ग्रीन बॉक्स नाम की श्रेणी में डाल दिया, ताकि उन पर नियमों का उल्लंघन करने का दोष न लगे। दूसरी ओर मुक्त व्यापार और तथाकथित नियम आधारित अंतरराष्ट्रीय व्यापार के नाम पर ‘व्यापार संबंधित बौद्धिक संपदा समझौते’ (ट्रिप्स) के क्रियान्वयन पर ज़ोर देते हुए भारत सहित दुनियाभर के सभी देशों के पेटेंट कानूनों को बदलवा दिया गया है। नये कानूनों से जनस्वास्थ्य की भारी हानि हुई है, क्योंकि विश्व व्यापार संगठन दवा निर्माता कंपनियों के लाभों को तो संरक्षित करता है, लेकिन साथ ही सरकारों से अपने-अपने देश में जनस्वास्थ्य की रक्षा का अधिकार छीन लिया गया है और लाखों लोग दवा के अभाव में दम तोड़ने को विवश हो रहे हैं। ऐसा इसलिए हुआ है कि अब विकासशील देशों की दवा कंपनियां नियम आधारित अंतरराष्ट्रीय व्यापार व्यवस्था के कारण सस्ती ‘जेनेरिक’ दवाएं नहीं बना सकतीं।

विकासशील देशों में विश्व व्यापार संगठन के समझौतों को उनकी कृषि की बदहाली का मुख्य कारण माना जाता रहा है। यही कारण है कि विश्व व्यापार संगठन के पिछले चार मंत्री स्तरीय सम्मेलनों में विकसित देशों को विकासशील देशों की सरकारों का ही नहीं, बल्कि जनसंगठनों का भी भारी विरोध झेलना पड़ा है। सिएटल में तीसरे मंत्रीस्तरीय सम्मेलन के शुरू होते ही विरोध प्रदर्शनों ने हिंसक रूप ले लिया और सिएटल सम्मेलन को रद्द करना पड़ा। इसके बाद दोहा में भारत सहित विभिन्न विकासशील देशों ने विश्व व्यापार संगठन के पूर्व में हुए समझौतों के दुष्प्रभावों पर खुलकर चर्चा की। विकसित देशों की यह मांग थी कि व्यापार समझौतों में श्रम और पर्यावरण सरीखे मुद्दों को शामिल किया जाए। सरकारी खारीद-निवेश इत्यादि मुददे भी शामिल करने की उनकी मांग थी। विकासशील देशों ने इन मांगों की स्वीकार नहीं किया और साथ ही विकासशील देशों ने यह मांग की कि विकसित देशों द्वारा अपनी कृषि को दी जाने वाल सब्सिडी को कम किया जाए, ताकि विकासशील देशों को अपने कृषि उत्पादों को विकसित देशों में बेचने का अवसर मिले और प्रतियोगिता न्यायसंगत हो।

कानकुन (मैक्सिको) में आयोजित हुए पांचवें मंत्रीस्तरीय सम्मेलन में विकसित देशों को भारी विरोध का सामना करना पड़ा और वह सम्मेलन बिना किसी नतीजे पर पहुंचे समाप्त हो गया। छठा मंत्रीस्तरीय सम्मेलन जो हांगकांग में संपन्न हुआ, उसमें भी कोई ठोस निर्णय नहीं हो सके और उसके बाद तो लगभग तीन वर्ष तक विश्व व्यापार संगठन की वार्ताएं थम-सी गई और पास्कल लेमी के इन वार्ताओं को पुनः

जीवित करने के तमाम प्रयास असफल साबित हुए।

वार्ता से ज्यादा जरूरी है किसान का हित

भारतीय परिप्रेक्ष्य में देखा जाए तो दोहा दौर की वार्ता को लेकर जो सबसे बड़ी चिंता है, वह किसानों के हितों को लेकर है। ऐसे में इस वार्ता के प्रति सरकार की बड़ी जिम्मेदारी है। जब तक अमरीका जैसे विकसित देश कृषि उत्पादन पर सब्सिडी कम नहीं करते, भारत को भी आयात शुल्क घटना नहीं चाहिए। साथ ही सरकार को चाहिए कि वह आउटसोर्सिंग के मुद्दे पर अमरीका जैसे देशों के साथ बात करे। ये मुद्दे भारत के लिए अहम हैं और सरकार को विकसित देशों के सामने ढूढ़ता से इन्हें उठाना चाहिए। यूरोप, अमरीका और जापान में कृषि उपज पर दी जाने वाली भारी सब्सिडी का जो मसला विकासशील देश उठाते रहे हैं, उस पर भी कोई आश्वासन नहीं मिला है और औद्योगिक सामानों के लिए सीमाएं खोलने के आग्रह पहले की ही तरह जारी हैं।

ऐसे में देश में कृषि क्षेत्र से जुड़े लोगों की चिंता वज़िब है। काली मिर्च, कॉफी, चाय और नारियल की खेती से जुड़े किसान दक्षिण-पूर्वी एशिया से आ रहे सस्ते जिसों की मार से तबाह हो चुके हैं। रोज़मर्रा के इस्तेमाल वाली वस्तुएं, अनाज, दलहन और तिलहन के दामों में हुई बढ़ोतरी से आम आदमी परेशान हो गया है। साथ ही मानसून के कारण जो हालात पैदा हुई है, वह उपभोक्ताओं को परेशानी में ही डाल रही है और किसानों को भी कंगाल बना रही है। अगर बाजार को यूरोपीय और अमरीकी जिसों के लिए भी खोल दिया गया तो खेतों में हमारी रसोई के लिए क्या बचेगा? इसलिए सरकार और भारतीय वार्ताकारों को अपने हितों को ठीक से समझ लेना चाहिए।

कांटों भरी व्यापार विकास की राह

विश्लेषकों की मानें तो दोहा दौर की बहुसंस्तरीय व्यापार वार्ता का नाकामयाब होना एक बहुत बड़ा झटका है। उनके मुताबिक एक साथ जुड़ने के कई फ़ायदे होते हैं, भले ही वह फ़ायदे किसी एक मुल्क को ज्यादा मिलें और दूसरे मुल्क को कम। हालांकि, कई विश्लेषक ऐसे भी हैं, जिनके मुताबिक दोहा दौर की बैठक का यहीं अंजाम होना था। उनके मुताबिक यह उतनी दूर पहुंच चुका था, जहां तक काबू रख पाना उसके लिए नामुमकिन हो चुका था। अंतरराष्ट्रीय कारोबार के नये-नये क्षेत्रों पर काबू

करने की इसकी ख़ाहिश अलग-अलग मुल्कों के बीच विवादों को पार नहीं कर सकती। इन देशों को इसकी यह कोशिश अपने उस सार्वभौम अधिकारों का हनन लगा, जिसके मुताबिक उन्हें अपने हितों की रक्षा करने का अधिकार है।

इस बात में कोई शक नहीं है कि दोहा दौर की बैठक वर्ष 2001 में शुरू होने के बाद से दुनिया के बाजार में भारतीय अर्थव्यवस्था की अहमियत में भारी इजाफ़ा हुआ है। इस बजह से तो दुनिया के बाजार में हिंदुस्तान की मोल-भाव करने की ताक़त में भी काफ़ी इजाफ़ा हुआ है। हालांकि, हमारे साथ सबसे बड़ी दिक्षित हमारे उन कामगारों की भारी तादाद है, जो आज भी कमाई के लिए खेती पर निर्भर हैं। हालांकि, जीड़ीपी में खेती के हिस्से में काफ़ी गिरावट आई है, फिर भी हम इस तादाद में कमी नहीं कर सके हैं। आज जीड़ीपी का क़रीब 17 फीसदी ही खेती से आता है, लेकिन इस क्षेत्र में कम-से-कम हमारे 57 फीसदी लोग काम करते हैं वैसे मुल्क के अलग-अलग हिस्से में खेती में उत्पादन और प्रतिद्वंद्विता में भारी अंतर है, लेकिन इसके आस पास चल रही राजनीति को नज़रअंदाज नहीं किया जा सकता है। ऐसे हालात में नयी दिल्ली की कृषि आयात से सेफगार्डों की मांग मुक्त व्यापार के फायदों के खिलाफ़ हो सकती है। इसका मतलब यह हुआ कि अपने मुल्क के अंदर और बाहर अलग-अलग समूहों को दोहा दौर की बैठक से जो फायदा होने वाला था वह अब नहीं होगा। लेकिन विकास की इस अवधारणा में कमाई की एक न्यूनतम गारंटी भी होती तो हिंदुस्तान की स्थिति को विकास विरोधी नहीं समझा जाता। हालांकि, यह अलग बात है कि ऐसी हालात में भारत की स्थिति एक ऐसे असफल राष्ट्र की हो जाती, जो लाख कोशिशों के बावजूद लोगों को खेतों से खींचकर उद्योग और सेवा क्षेत्र तक नहीं ला पाया।

दोहा की असफलता और आगे का स़फ़र

जेनेवा में कोई 30 देशों के वाणिज्य मंत्रियों की बातचीत की नाकामी के बाद विश्व व्यापार संगठन डब्ल्यूटीओ किस राह पर जाएगा? इस सवाल का जवाब तलाशने से पहले यह ध्यान में रखना जरूरी है कि जेनेवा में डब्ल्यूटीओ के सदस्य देशों में से बहुत थोड़े से देशों को ही बुलाया गया था और दोहा व्यापार वार्ता के जो बहुत से विवादास्पद मुद्दे हैं, उनमें से कुछ

ही पर यहां बातचीत हुई। इस तरह की सीमित वार्ता आयोजित करने का मकसद यह था कि कम-से-कम कुछ बड़े मुद्दों पर आम सहमति बना कर व्यापार वार्ता के 'दोहा विकास दौर' को पटरी पर लाने का माहौल बनाया जाए।

जेनेवा में वे सभी उलझनें सामने आईं, जिनके चलते सात वर्ष से दोहा वार्ता अटकी रही है। बातचीत नौ दिन तक चलती रही, जिसका फ़ोकस कृषि और औद्योगिक उत्पादों के व्यापार के लिए नये नियम तय करने पर था। सबाल यह था कि विकसित देश (ख़ासतौर से अमरीका) अपने किसानों को दी जाने वाली भारी सब्सिडी में कितनी कटौती करें और उसके बदले में विकासशील देश अपने बाजार कितना खोलें। गैरतलब है कि अमरीका अपने किसानों को जर्दर्स्ट सब्सिडी देकर दाम गिरा देता है और विकासशील देशों को बाजार में टिकने नहीं देता। कृषि उपज के लिए अपने बाजार खोलने का मतलब है स्थानीय किसानों की बर्बादी। इसलिए भारत समझौते के लिए राजी नहीं हुआ। विकसित देशों के नुमाइंदों ने जब देखा कि उनके द्वारा तय एजेंडे को विकासशील देश नहीं पचा पा रहे हैं तो उनके शीर्ष नेताओं से सीधा संपर्क करके दबाव डालने की कोशिश भी की गई। लेकिन इसके बावजूद सीमित संख्या में देश सीमित मुद्दों पर भी सहमति नहीं बना सके।

दूसरी अहम बात यह है कि अगर जेनेवा में इन मुद्दों पर सहमति हो जाती, तो भी इससे बाहर रखे गए ऐसे कई मुद्दे हैं जो विकासशील देशों की नज़र से बेहद संवेदनशील हैं। इन्हें लेकिन काफ़ी विवाद भी रहा है। इन मुद्दों में बौद्धिक अधिकार तथा पेटेंट, निवेश और सरकारी खरीद शामिल हैं। दोहा विकास एजेंडे को एक समग्र रूप में पेश किया गया है, जिसका मतलब यह है कि एक-दो मुद्दों पर अलग से सहमति बनने से भले ही माहौल बन जाए, लेकिन आखिरकार डील पूरे पैकेज पर हासिल करनी होती। पूरे एजेंडे से सभी सदस्य देशों को सहमत होना होता और उनमें से एक की भी असहमति से बातचीत टूट जाती।

जिन्होंने जेनेवा में नौ दिनों की हलचल को गौर से देखा है, उनके लिए यह यकीन करना मुश्किल है कि इससे कहीं व्यापक मुद्दों पर इससे कहीं ज्यादा देशों की रजामंदी मुमकिन हो पायी। यानी जेनेवा में नहीं, तो उसके बाद दोहा राउंड का अंत होना ही था। विकसित

देशों ने सहमति बनाने की विश्वा में एक दंव यह खेला था कि चंद बड़े विकासशील देशों को उनके हिसाब से कुछ फायदे देकर अपने साथ मिला लिया जाए। इसके तहत अमरीका और यूरोपीय संघ ने ब्राजील और भारत को मिलाकर जी-4 बनाया, लेकिन यह ज्यादा दिनों तक टिक नहीं सका। वैसे ब्राजील ने काफी हद तक अमीर देशों से गुपचुप समझौता करने के संकेत दिए थे, जबकि भारत की तरह उसे विकासशील देशों का नेता माना जाने लगा है।

अपनी रणनीति तैयार करने में विकसित देश यह भूल गए कि विश्व व्यापार के मसले पर पिछले 15-20 वर्षों के दौरान विकासशील देशों के रुख में काफी बदलाव आया है। जब गैट की जगह पर वर्ल्ड ट्रेड ऑर्गनाइजेशन की स्थापना हो रही थी, उस वक्त कृषि समझौते और पेटेंट कानून जैसे मुद्दों पर विकासशील देशों के लिए बहुत नुकसानदेह फैसले लिए गए। तब इसका आम लोगों द्वारा कोई बड़ा विरोध नहीं हुआ क्योंकि नये तथ्यों की जानकारी बहुत कम थी। उस समय इस तरह की चर्चा कुछ जानकारों तक ही सीमित थी। आम लोग जागरूक होते, इससे पहले ही नया नियम लागू हो गया। उस वक्त तो कुछ सरकारों को भी कानूनी और तकनीकी पेचीदगी की ज्यादा समझ नहीं थी।

लेकिन धीरे-धीरे इनके असर दिखने लगे, जब बढ़ते आयातों के कारण खेती-किसानी को धक्का लगा या सरकारी नीतियां बदलने लगीं। देखा गया कि डब्ल्यूटीओ के क्रायदां से बंधी सरकारें मनमाफिक कदम उठाने लायक नहीं रह गई हैं। तब विभिन्न संगठनों ने सरकारों पर दबाव बनाना शुरू किया कि वे अपने हिन्हों की हिफ़ाजत के लिए डब्ल्यूटीओ में ज्यादा सक्रिय और सजग हों। विकासशील देशों की लोकतांत्रिक सरकारों को भी अच्छी तरह समझ आ गया है कि अगर उन्होंने कमज़ोरी दिखाई, तो उनकी जनता को काफी नुकसान उठाना पड़ सकता है। ज्यादा आयातों के कारण होने वाली बेरोज़गारी या पेटेंट कानूनों में बदलाव के चलते ज़रूरी दवाओं की क़ीमत में उछाल ऐसे मुद्दे हैं जो जनमत को बहुत तेज़ी से प्रभावित करते हैं। इसलिए अब अपनी मनमानी करना विकसित देशों के लिए पहले की तरह आसान नहीं है। सहमति बनाने का एक तरीक़ा यह है कि अमीर देश अपने स्वार्थों को छोड़ने के

लिए तैयार हों और विकासशील तथा अरीब देशों की दिक्कतों को देखते हुए विश्व व्यापार को उदार दिशा देने की कोशिश करें। बड़े और अपेक्षाकृत बेहतर स्थिति वाले विकासशील देशों को भी इसी भावना के साथ काम करना होगा।

लेकिन जेनेवा में देखा गया कि अमीर देश फिलहाल अपने स्वार्थों से बाहर निकलने के लिए तैयार नहीं हैं। दरअसल, अमरीका दुनिया का चौथरी तो माना जाता है, लेकिन उस पर लगभग 90 खरब डॉलर का कर्ज़ है। वह व्यापार के नियमों को अपने पक्ष में बनाए रखना चाहता है। यूरोपीय संघ की स्थिति बेहतर होते हुए भी उसका नज़रिया ज्यादा अलग नहीं है। दोहा दौर नये रूप में देर-सवेर शुरू होगा, लेकिन अगर अमीर देश अपना रखैया नहीं बदलेंगे, तो उसका अंजाम भी यही होगा। कामयाबी की चाबी उन्हीं के हाथ में है।
अपने रुख पर विचार करे भारत

वैश्विक स्तर पर बढ़ते संरक्षणवाद को देखते हुए दोहा विकास के दौर डीडीआर का भविष्य और बहुपक्षीय व्यापार व्यवस्था एमडीआर की मज़बूती वाणिज्यमंत्री की उच्च प्राथमिकता में शामिल होगी। दिसंबर से डीडीआर सुस्त पड़ा हुआ है और इससे पहले कि यह गहन आपात चिकित्सा की तरफ चला जाए, इसे पुनर्जीवित करना काफी उपयोगी होगा। भारत के लिए बिना किसी सौदेबाजी की क़ीमत पर और ख़राब सौदेबाजी को विस्तृत रूप से पारिभाषित करते हुए मंत्री को देशहित में इसके मूल्यांकन की बाबत पूछना होगा। इससे पहले कि यह फंस जाए, उन्हें अपना विचार मनवाना होगा कि क्या मज़बूत बहुपक्षीय व्यापार व्यवस्था भारत के हित में है, खासतौर से उभरते वैश्विक मंच पर, जिसमें भारत अपने आपको नेतृत्व की भूमिका में देख रहा है। भारत एक साल के भीतर कामयाब बहुपक्षीय व्यापार व्यवस्था की ख़ातिर सकारात्मक रुख अपनाने के लिए प्रेरित होगा।

अब यह धारणा कि डब्ल्यूटीओ सिफ़्र अमीर देशों का हित साधते हैं, छोड़ दी गई है। डब्ल्यूटीओ के सदस्यों की संख्या में भारी इज़ाफ़ा और विश्व व्यापार में उभरती हुई अर्थव्यवस्था की बढ़ती भागीदारी बताती है कि यह सही नहीं है। दुनिया अब अमरीका की ही नहीं रह गई है क्योंकि वैश्वीकरण ने विश्व व्यापार व तकनीक के प्रवाह में हमारी अर्थव्यवस्था को जोड़ दिया है। यह साफ़ हो गया है कि विवाद के निपटान की ख़ातिर

फैसला लागू करने के मामले में डब्ल्यूटीओ की साख, वैधता और क्षमता तभी काम करेगी जब डीडीआर को छोड़ दिया जाएगा। क्वाड के सदस्य के तौर पर भारत की जिम्मेदारी यह सुनिश्चित करने की है कि डब्ल्यूटीओ किस्मत के इस दौर से न गुजरे। ऐसे में हमें क्वाड से बाहर यह विकल्प चुनना होगा कि डीडीआर की रक्षा या डब्ल्यूटीओ इस बक्त हमारे हित में है या नहीं। फिर हमें स्वीकार करने योग्य समझौता करने के लिए तैयार रहना होगा कि वर्तमान तस्वीर प्रक्षेपित करने में हम क्रामयाब रहे हैं क्योंकि यह सिफ़्र भारत के लिए ही नहीं है बल्कि और भी हैं जो समझौते की राह में हैं।

जो द्विपक्षीय व क्षेत्रीय मुक्त व्यापार समझौते में होता है उसके मुकाबले कोई भी तर्क नहीं देता कि हम मज़बूत और उदार एमटीआर के साथ अच्छी स्थिति में हैं। हर द्विपक्षीय समझौते के साथ ख़तरा यह है कि यह संकीर्ण घरेलू हितों में फंस जाता है और इसका धीमापन कारोबार को अंधकारमय बना देता है और इसे व्यवस्थित करना आसान नहीं होता।

अब हम संक्षेप में इस बात की जांच करते हैं कि संभावित डीडीआर समझौते से हमारे सेक्टर के हित पर क्या प्रभाव पड़ेगा क्योंकि जुलाई 2008 में यह अंतिम दौर में पहुंचने के क़रीब था। एनएमए के तहत आने वाले क्षेत्रों पर स्विस फार्मले के आधार पर बाध्यकारी शुल्क को कम करके 15 फीसदी पर लाने की बात हो सकती है। हमारी औसत प्रभावी दर पहले से ही कम है और वाहन जैसे क्षेत्र, जहाँ ऊंची दर लागू है, की विशेष उत्पाद व्यवस्था के तहत रक्षा की जाएगी। इसके बदले हम आधुनिक देश के बाजारों में महत्वपूर्ण निर्यात मसलन कपड़ा और चमड़े को ऊंची दर से 7 फीसदी तक लाने में कामयाब हो जाएंगे। इससे हमारा राष्ट्रीय हित सधेगा।

सेवा क्षेत्र में हमें तुलनात्मक और प्रतिभागी लाभ मिला हुआ है और कुछ क्षेत्र मसलन कानूनी सेवा, लेखा और मीडिया के उदारीकरण की दरकार है ताकि वे अपनी पूर्ण क्षमता का दोहन कर सकें। वित्तीय सेवा में स्थिति अस्पष्ट है और संकट को देखते हुए और बैंकों के हालात को देखते हुए यह भारी मांग पैदा नहीं करेगा। ऐसे में हमारे राष्ट्रीय हितों के साथ समझौता किया गया है।

अंततः: हम कृषि पर नज़र डालते हैं। कृषि

और किसानों को अंतरराष्ट्रीय व्यापार से लाभ पाने का अधिकार है और इसे सरकारी हस्तक्षेप से आज्ञाद कर दिया जाना चाहिए। कृषि पर हुई वार्ता के बाबत तीन तर्फ़ दिए जा सकते हैं। पहला, इस दौर में नियांत सब्सिडी में कटौती, घरेलू समर्थन और आयात टैरिफ़ के ज़रिये कृषि को ज्यादा से ज्यादा खोलने और वैश्विक स्तर पर कारोबार के लिहाज़ से पहला क़दम हो सकता है। इसके लिए विश्वास पैदा करने और घरेलू समूह को यह आश्वासन देना होगा कि खाद्य सुरक्षा के महत्वपूर्ण हित के साथ किसी भी सूरत में समझौता नहीं किया जाएगा। दूसरा, छोटे और सीमांत किसानों को सब्सिडी वाले आयात से प्लावित नहीं होने दिया जाएगा और खास व्यवस्था बनाकर इनके हितों की रक्षा की जाएगी और आगे आयात में इजाफ़ा होता है तो सदस्यों को ऊंचा शुल्क लगाने की इजाज़त होगी। इस पर सवाल नहीं उठाया जा सकता है कि हमारे ग्रामीण किसान अमरीकी खजाने या यूरोपीय बाजार से प्रतिस्पर्धा करने की क्षमता रखते हैं अथवा नहीं। तीसरा, हमारे छोटे व मझोले किसानों की दुर्दशा वैश्विक व्यापार व्यवस्था से ज्यादा घरेलू नीतिगत बाधाओं से है। कृषि पर बातचीत के बाद सरकार कृषि मंत्रालय को ज़रूरी सुधार करने की ओर आगे बढ़ाएगी। हमारे किसानों को सब्सिडी वाले आयात में बढ़ोतरी के मुक़ाबले अपर्याप्त बिजली, नये बीज का अभाव और बैंक क्रेडिट व बाजार तक पहुंच नहीं होने का ख़ामियाजा भुगताना पड़ता है।

भारत का नरम रुख

भारत ने अंतरराष्ट्रीय कूटनीति के पेंच की बारीकियां समझे बगैर ही एक तरह से अपने पते खोल दिए हैं। विश्व व्यापार संगठन में दोहा वार्ता दुबारा शुरू होने पर भारत का रुख कैसा होगा, इस सवाल पर भारत का जवाब है कि नयी दिल्ली कुछ लेकर और कुछ देकर बातचीत में आगे बढ़ने को तैयार है। इस तरह हमने अपनी पिछली शर्तों को सामने रखे बगैर ही अपने पते खोल दिए।

पिछले दिनों अमरीका रवाना होने से पहले विणिज्य मंत्री ने कहा था कि भारत व अमरीका के बीच गतिरोध समाप्त हो गया है। इसके बाद वाशिंगटन से खबर आई कि भारत ने यह संकेत दिया है कि दोहा वार्ता को आगे बढ़ाने के लिए विदेशी कृषि उत्पादों को अपने बाजार में प्रवेश देने के मुद्दे पर भारत अपनी शर्तों में

नरमी ला सकता है। डब्ल्यूटीओ पर भारत के यू-टर्न के परिणामों पर चर्चा करने से पहले हमें इससे जुड़ी राजनीति को समझना होगा, जिसके कारण भारत के रुख में नरमी आई। नयी दिल्ली में दोहा वार्ता आगे बढ़ाने और विकास के मुद्दे पर 13 मार्च, 2007 को तत्कालीन वाणिज्य मंत्री कमलनाथ ने धनी और औद्योगिक देशों के साथ भारत की भागीदारी बढ़ाने में भारत की दिलचस्पी के संकेत दिए थे। भारत के कथित यू-टर्न पर श्री कमलनाथ का कहना था कि यह वार्ता (नयी दिल्ली में आयोजित) बाधाएं दूर करने के लिए नहीं है बल्कि उन बिंदुओं को कम करना है जिनसे क्रीमतों में कृत्रिम तेज़ी आ सकती है। उस समय दि इकोनॉमिस्ट द्वारा आयोजित एक कार्यक्रम में प्रधानमंत्री डॉ. मनमोहन सिंह ने भी कहा कि भारत दोहा वार्ता सफल बनाने के लिए प्रतिबद्ध है। इससे भारत के रुख का स्पष्ट संकेत मिल जाता है।

शुरू के दौर में कमलनाथ ने भारत का मुद्दा दोहा वार्ता में काफी मज़बूती से उठाया था। अब डब्ल्यूटीओ की सातवें दौर की वार्ता 30 नवंबर से दो दिसंबर के दौरान जेनेवा में होने जा रही है। लोगों का मानना है कि पिछले वर्ष जुलाई में हुई वार्ता भारत द्वारा प्रस्तावों पर अंडियल रुख अपनाने से विफल रही। उसने एक प्रस्ताव मानने से इंकार कर दिया था। सवाल है कि क्या इसमें ग्रामीण किसानों को कृषि आयात की भरमार होने पर स्पेशल सेफेगार्ड डियूटी के ज़रिये बचाने की कोशिश थी या फिर चालाकी से अमरीकी कृषि को बचाव का हथियार दिया जा रहा था। दरअसल, भारत और चीन द्वारा अपने किसानों के हितों के बचाव के प्रयास से यह वार्ता विफल रही क्योंकि अमरीका अपने यहां कृषि, खासकर कपास पर दी जाने वाली सब्सिडी घटाने को तैयार नहीं था। यह कदम अमरीका के लिए राजनीतिक रूप से आत्मघाती होता।

भारत और चीन दोनों ने ही यूरोपीय संघ के प्रस्तावों को थोड़े-बहुत बदलावों के साथ स्वीकार कर लिया था। उनकी चिंताओं को दूर किया जा सकता था लेकिन नये प्रस्ताव में लेमी प्रस्ताव के अनुरूप 10 फीसदी शुल्क की शर्त के बजाय ऐसी व्यवस्था की गई है जिससे भारत अपना किसी तरह बचाव नहीं कर सकता है। इससे विकासशील देशों की खाद्य सुरक्षा, रोज़गार संबंधी चिंताओं और ग्रामीण विकास

को नुकसान हो सकता है। नये प्रस्ताव पर बातचीत हो रही है लेकिन कहा जा सकता है कि भारत ने अमरीका और यूरोप के साथ समझौते की रूपरेखा बना ली है। समझौते की घोषणा होना बाकी रह गया है।

किसानों की सुरक्षा पर समझौता नहीं

जेनेवा पिट्सबर्ग में आयोजित जी-20 समूह की बैठक के पूर्व दोहा दौर की वार्ता को एक निश्चित समय सीमा के भीतर ठोस नतीजे तक पहुंचाने के लिए विश्व व्यापार संगठन के 36 सदस्य देशों के व्यापार मंत्रियों की हाल ही में नयी दिल्ली में संपन्न बैठक में भारत किसानों की आजीविका और खाद्य सुरक्षा के मसले पर अपने पूर्व रुख पर कायम रहा। आठवें दौर में पहुंच चुकी इस वार्ता में अमीर और ग्रामीण देशों के बीच कृषि सब्सिडी, मुक्त बाजार और कुछ चुनिदा उद्योगों को संरक्षण दिए जाने के मामले को लेकर अवरोध जारी है। पर अब इस पर जल्द-से-जल्द सुलह की तैयारी है।

राजनीतिक हालात का दबाव भी इसकी एक वजह बन रहा है। अमरीका में 2010 में मध्यावधि चुनाव, ब्राजील में राष्ट्रपति चुनाव और यूरोपीय संघ की लिस्बन संधि के लागू होने की उमीदों को देखते हुए वार्ता को ठोस नतीजे तक पहुंचाने की गतिविधियां तेज़ हो गई हैं।

ग्रामीण किसानों को संरक्षण दिए जाने के मसले पर भारत और अमरीका के बीच उभरे तीखे मतभेदों के कारण जुलाई में आयोजित व्यापार मंत्रियों की नौ दिवसीय बैठक बेनतीज़ा रही थी। केंद्रीय विणिज्य एवं उद्योग मंत्री आनंद शर्मा ने कहा है कि इन मतभेदों को बातचीत के जरिये दूर करने की कोशिश की जाएगी लेकिन मंत्रालय के एक शीर्ष अधिकारी के मुताबिक भारत ग्रामीण किसानों की आजीविका और खाद्य सुरक्षा के मसले पर किसी तरह का समझौता नहीं करेगा। जेनेवा में अमरीका के दूत रह चुके पीटर एलजिय के मुताबिक तमाम राजनीतिक कोशिशों के बावजूद दोहा वार्ता बेनतीज़ा रहने के पीछे सदस्य देशों के बीच सामंजस्य की कमी है। वार्ता की शुरुआत सकारात्मक होती है लेकिन अखिर में सभी पक्ष अपनी बात पर अड़ जाते हैं। उधर गंभीर आर्थिक तंगी से जूझ रही अमरीकी सरकार के रखैये में भी किसी बदलाव की उमीद नहीं दिख रही। वार्ता में अमरीका के व्यापार हितों के अनुरूप न होने पर उसकी सहमति संभव नहीं दिखती। ओबामा प्रशासन की ओर से दोहा

वार्ता के लिए रान किंक की अध्यक्षता में गठित प्रतिनिधिमंडल में किसी तरह का बदलाव नहीं किया जाना इसका बड़ा संकेत है।

संरक्षणवाद से विश्व व्यापार को नुकसान

दुनिया में अर्थिक मंदी के चलते बढ़ती बेरोजगारी के मद्देनजर विश्व व्यापार संगठन को संरक्षणवाद को लेकर अपनी निगरानी कड़ी रखनी होगी। नयी दिल्ली में दोहा दौर के विषय पर 36 देशों की अनौपचारिक बैठक से पहले विश्व व्यापार संगठन के अध्यक्ष पास्कल लेमी ने इस मामले पर अपनी राय रखी। श्री लेमी के अनुसार मंदी के दौर में कई देशों ने व्यापार संगठन के नियमों की सीमा में रहकर व्यापारिक बाधाओं की सीमा बढ़ा दी थी। लेकिन इस दौरान 'जैसे को तैसा' वाली प्रतिक्रिया देखने को नहीं मिली, हालांकि व्यापार पर कुछ असर तो पड़ा ही है। भारतीय वाणिज्य संघ (फिक्की) की बैठक में श्री लेमी ने कहा कि दोहा दौर की वार्ताओं को पूरा करने से संकट और संरक्षणवाद पर काबू पाया जा सकता है और आठ साल से चल रही ये वार्ताएं अपने अंतिम दौर में पहुंच चुकी हैं।

नयी दिल्ली में हुई व्यापार मंत्रियों की अनौपचारिक बैठक में भारत की पहल पर दोहा वार्ताओं को नयी दिशा देने की कोशिश की गई ताकि 2010 में जेनेवा में इन वार्ताओं को अंजाम दिया जा सके। लेमी के अनुसार विश्व के नेताओं ने वर्ष 2010 तक की समय सीमा दी है और मौजूदा परिस्थितियों में देखना होगा कि बैठक और किचन के बीच बेहतर सामंजस्य कैसे बैठाया जाए। यूरोपीय संघ की कृषि आयुक्त मारियान फिशर ब्योल ने भी उम्मीद जताई कि वर्ष 2010 के अंत तक कोई सहमति बन पाएगी। साथ ही उन्होंने यह भी कहा कि यूरोपीय संघ मौजूदा शर्तों पर अपने

कृषि बाजार को पुनः खेलने के लिए राजी नहीं हो रहा है लेकिन संघ इस समय कुछ भी देने की हालत में नहीं है।

लेमी के मुताबिक व्यापार इन सब का शिकार है न कि संकट का कारण। इसीलिए अनुमान है कि इस साल कम होती मांग और संरक्षणवाद के कारण विश्व व्यापार में 10 प्रतिशत की कमी आएगी। इसमें भारत की बढ़ती भूमिका की प्रशंसा करते हुए लेमी ने कहा कि पिछले पांच वर्षों में देश में 1 करोड़ 14 लाख नयी नौकरियां खुली हैं। पिछले साल ऐसा प्रतीत हो रहा था कि दोहा वार्ताएं संपन्न हो जाएंगी लेकिन अमरीका और भारत के बीच सहमति नहीं बन पाई। इसी मामले पर विकासशील और विकसित देशों के बीच भी असहमति बढ़ने लगी। लेमी का कहना है कि यह उत्तर-दक्षिण विवाद नहीं है क्योंकि थाइलैंड और परागुआ जैसे खाद्य निर्यातक देश, भारत और इंडोनेशिया के सुरक्षा प्रस्तावों को मंजूर नहीं कर रहे।

अड़चनें हटाने की कोशिश

भारत और अमरीका विश्व व्यापार संगठन डब्ल्यूटीओ की बातचीत को वापस पटरी पर लाते दिख रहे हैं। पिछले साल जुलाई में बातचीत टूटने के लिए प्राथमिक तौर पर इन्हीं दोनों देशों को जिम्मेदार माना गया था। अमरीकी उप-व्यापार प्रतिनिधि डेमेट्रियास मरानतिस भारत के दौरे पर आए थे। एक सरकारी अधिकारी ने जानकारी दी थी कि दोहा दौर की वार्ता पर भारत के साथ विवादित मुद्दों को सुलझाने के लिए मरानतिस यहां आए हैं। अधिकारी ने बताया, "भारत और अमरीका, दोनों दोहा दौर की वार्ता को कमज़ोर करने वाले देशों के रूप में चिह्नित नहीं होना चाहते हैं। द्विपक्षीय वार्ता में ग़ारीब किसानों को सब्सिडी सुरक्षा और

खास औद्योगिक वस्तुओं पर शुल्क खत्म करने जैसे मुद्दों पर जारी गतिरोध को खत्म करने की कोशिश होगी। इससे भारत में होने वाली मंत्रियों की अनौपचारिक बैठक से परिणाम निकलने की कुछ उम्मीद बनी है। भारत में बैठक के बाद में पिट्सबर्ग में जी-20 नेताओं की बैठक होगी। इसके बाद, डब्ल्यूटीओ नवंबर के अंत में सभी 153 सदस्य देशों के व्यापार मंत्रियों की औपचारिक बैठक आयोजित करेगा। इसमें सदस्य देश दोहा दौर को सफल अंत देने के लिए तेज़ी से जुट जाएंगे। इस बातचीत को शुरू हुए आठ साल हो गए हैं।

अधिकारी ने बताया कि मरानतिस ने अपनी यात्रा के दौरान वाणिज्य एवं उद्योग मंत्री आनंद शर्मा तथा वाणिज्य, वित्त और कृषि मंत्रालयों के वरिष्ठ अधिकारियों से मुलाकात की। कृषि आयात बढ़ने से ग़ारीब किसानों को बचाने के लिए विशेष सुरक्षा के स्तर पर अमरीका और भारत में विवाद को पिछले साल जुलाई में जेनेवा में बातचीत टूटने की कई बजहों में एक माना गया था। इसके अलावा चुनिंदा औद्योगिक क्षेत्र से जुड़ी कर प्रणाली को खत्म करने को लेकर क्षेत्रवार बातचीत को अनिवार्य बनाने संबंधी मुद्दों पर भारत और अमरीका के बीच असहमति है। भारत क्षेत्रवार बातचीत में स्वेच्छा से शामिल होने की शर्त रखना चाहता है और इसे अनिवार्य करने का पक्षधर नहीं है। इन प्रमुख मुद्दों के अलावा भी कई ऐसे मुद्दे हैं जिन पर भारत और अमरीका में सहमति नहीं बन पा रही है। इनमें अमरीका द्वारा कपास पर दी जा रही सब्सिडी को तेज़ी से खत्म करने और कम विकसित देशों द्वारा कुछ खास क्षेत्र से जुड़े शुल्क को तेज़ी से ख़त्म करना शामिल है। □

(लेखक स्वतंत्र पत्रकार हैं।)

ई-मेल : yogesh.sahkarita@gmail.com)

अपने लेख हमें ई-मेल करें

आप हमें अपने लेख और पत्र ई-मेल भी कर सकते हैं। ई-मेल करने इसके लिए कृतिदेव फांट इस्टेमाल करें और वर्ड ओपन फाईल exeed.yojoana@gmail.com अथवा yojanahindi@gmail.com पर भेजें। एक से अधिक लेखकों के नाम केवल विशेष शोध लेखों पर ही दें। जिन रचनाओं के साथ मौलिकता का प्रमाणपत्र संलग्न नहीं होगा वे स्वीकार नहीं की जा सकेंगी। रचना के प्रकाशन के संबंध में किसी प्रकार का पत्र-व्यवहार अथवा फोन न करें। विशेष अवसरों के लिए लेख तीन माह पूर्व प्राप्त हो जाने चाहिए। रचनाओं के साथ यथासंभव प्रासांगिक चित्र भी भेजें। डाक से भेजे जाने वाले लेखों की एक प्रति सीड़ी में भी भेजें। वापसी के लिए कृपया टिकट लगा और पता लिखा लिफाफ़ा संलग्न करें।

- वरिष्ठ संपादक

विकलांगों के लिए सहायक उपकरण एवं प्रौद्योगिकी

● विनोद कुमार मिश्र

वि

श्व के सभी भागों में व सभी स्तरों पर संख्या बढ़ती ही जा रही है। मनुष्य की औसत आयु भी बढ़ रही है और इस कारण भी विकलांगता की समस्या में वृद्धि देखने को मिल रही है।

परंतु प्रसन्नता का विषय यह है कि प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में भी बहुत तेजी से प्रगति हुई है और इसका लाभ विकलांगों सहित समाज के सभी वर्गों को मिल रहा है। आधुनिक प्रौद्योगिकी पर आधारित नवीनतम उपकरणों के उपयोग से विकलांगों की गतिशीलता व कार्य क्षमता दोनों में वृद्धि हो रही है।

संयुक्त राष्ट्र संघ ने भी विश्व के सभी सदस्य राष्ट्रों को इस दिशा में आगे बढ़ने के लिए प्रेरित किया है। समय-समय पर

जारी घोषणापत्रों में सहायक उपकरणों, युक्तियों व उनके निर्माण में प्रयुक्त

प्रौद्योगिकी के विकास को प्राथमिकता के आधार पर लेने का आह्वान किया है। इसका मुख्य उद्देश्य यह माना गया है कि ये चीज़ें विकलांगों को कम कीमतों पर उपलब्ध हों ताकि वे इसे बहन कर सकें।

सदस्य राष्ट्रों से अपील की गई है कि वे ऐसी व्यवस्था का निर्माण करें ताकि ये चीज़ें हर प्रकार के विकलांग व्यक्ति को उपलब्ध हो सकें तथा इनके प्रयोग से वह अपने जीवन की गुणवत्ता बढ़ा सकें।

आज विकलांगों को बराबरी का अवसर देने की ज़ोरदार बकालत की जा रही है। यह प्रयास किया जाता रहा है कि विकलांगजन भी अन्य लोगों की भाँति ही शिक्षा प्राप्त करें और रोज़गार में लगें। वे अपने कार्य स्वयं करें तथा दूसरों के साथ सहजता से संवाद कर सकें। वे अपनी भावनाओं व विचारों को व्यक्त कर सकें और आम आदमी की ही भाँति जीवन का आनंद ले सकें।

बदली परिभाषा

सहायक उपकरण तो लंबे समय से लोगों के उपयोग में आते रहे हैं और ये तत्कालीन प्रौद्योगिकी पर आधारित होते थे। परंतु पूर्व की मान्यता के अनुसार, इसका उत्पादन इस आधार पर होता था कि ये विकलांगता के कारण उत्पन्न कमी को पूरा कर सकें।

पर अब सोच में बदलाव के साथ परिभाषा में भी बदलाव आया है। आज सहायक उपकरणों का उद्देश्य विकलांगजन के जीवन की गुणवत्ता बढ़ाना तथा उन्हें जीवन के लिए सामान्य परिस्थितियां उपलब्ध कराना हो गया है। यह माना जाने लगा है कि इसके प्रयोग से विकलांगजन स्वतंत्र तथा सक्रिय जीवन व्यतीत करेंगे और यह सुरक्षित भी होगा।

3 दिसंबर, विश्व विकलांग दिवस पर विशेष

उचित प्रौद्योगिकी की तलाश

आज सहायक उपकरणों के लिए उचित प्रौद्योगिकी की तलाश की जा रही है। यह माना जाता है कि सहायक उपकरणों के निर्माण में यथासंभव स्थानीय सामग्रियों का ही उपयोग होना चाहिए। इसमें स्थानीय सामाजिक-आर्थिक स्थिति तथा सांस्कृतिक पहलुओं का भी विशेष ध्यान रखा जाना चाहिए। साथ ही कीमत इतनी होनी चाहिए कि प्रयोग करने वाला व्यक्ति इसे आसानी से बहन कर सके। इन उपकरणों के आयात को हतोत्साहित किया जाना चाहिए और देश में अनुसंधान, डिज़ाइन तथा विनिर्माण की व्यवस्था होनी चाहिए। इससे इस क्षेत्र में रोज़गार संभावनाओं का भी विस्तार होगा।

सांस्कृतिक पहलुओं से तात्पर्य यह है कि भारत सहित अनेक एशियाई देशों में घर के अंदर व्हीलचेयर का अधिक उपयोग नहीं हो पाता है क्योंकि लोग भोजन करने से लेकर अनेक कार्य फ़र्श पर बैठकर करते हैं। अतः

यदि इसके स्थान पर नीची ट्रॉली का विकास हो तो विकलांगजन अन्य सभी के साथ बैठकर अपना काम कर पाएंगे।

इस संबंध में कुछ नये तथ्य इस प्रकार हैं :

- उचित प्रौद्योगिकी वह मानी जाएगी जो सशक्त जैव यांत्रिक सिद्धांतों के आधार पर ऐसे सहायक उपकरणों व युक्तियों के निर्माण में प्रयुक्त होंगी जो विकलांगों के लिए पूरी तरह फिट होंगे। ये उपकरण उपयुक्त कीमत प्रभावी होने चाहिए।
- उचित प्रौद्योगिकी के उपयोग द्वारा विकलांग जन अपनी आर्थिक स्थिति के अनुसार अपनी सभी भौतिक आवश्यकताओं की पूर्ति कर सकेंगे।
- स्थानीय उपलब्ध सामग्री से ही पुर्जों आदि का निर्माण किया जाना चाहिए।

● इस उद्देश्य के लिए विभिन्न तरीकों, प्रक्रियाओं व सामग्रियों का उपयोग होना चाहिए और इसके लिए आवश्यक जांच, परीक्षण, मूल्यांकन आदि को प्रोत्साहन दिया जाना चाहिए।

- उचित उपयोग (प्रौद्योगिकी तथा सामग्री) से संबंधित अनुभवों को उचित दस्तावेज़ों जैसे— शोधपत्र, लेख, पुस्तक आदि में दर्ज किया जाना चाहिए और इन्हें दूसरों के उपयोग हेतु भी खुला छोड़ा जाना चाहिए।
- आवश्यकता पड़ने पर इन्हें ज़रूरतमंदों को भी निःशुल्क दिया जाना चाहिए।

विकासशील देशों की आवश्यकताएं

आज पूरे विश्व में 60 करोड़ से अधिक लोग किसी-न-किसी रूप में विकलांगता के शिकार हैं। इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि लगभग दस प्रतिशत जनसंख्या विकलांगता का शिकार है। इसका 80 प्रतिशत विकासशील देशों में निवास करते हैं तथा एक ओर तो ये भव्यकर गरीबी के शिकार हैं तथा दूसरी तरफ उपयुक्त स्वास्थ्य सेवाएं व अन्य पुनर्वास सेवाएं

इनकी पहुंच से दूर है।

इन देशों में बढ़ती आबादी, बढ़ता शहरीकरण, सुविधाओं का अभाव, आतंकवाद, दुर्घटनाएं, कुपोषण तथा लंबी बीमारियों के कारण विकलांगता की समस्याएं भी बहुत तेजी से बढ़ रही हैं।

दूसरी ओर इस आबादी का मात्र दो से पांच प्रतिशत ही स्वास्थ्य व पुनर्वास सेवाओं तक पहुंच पाता है। इस कारण जो पुनर्वास सेवाएं जिनमें सहायक उपकरण भी शामिल होते हैं, यदि विकसित भी होती हैं, उनका पूरा उपयोग नहीं हो पाता है। इन देशों में निजी क्षेत्र द्वारा विकसित सेवाएं बहुत महंगी होती हैं। जिन विकलांगजनों को सहायक उपकरणों की आवश्यकता होती है उनमें से 5 से 15 प्रतिशत ही उन सुविधाओं का लाभ उठा पाते हैं।

यह भी सत्य है कि जो विकलांगजन सहायक उपकरण प्राप्त कर लेते हैं तथा उनका उचित उपयोग करते हैं, उनमें गरीबी से ऊपर उठने की क्षमता विकसित हो जाती है। उनकी गतिशीलता व कार्यक्षमता में वृद्धि होती है। इससे रोजगार में सफल होने की संभावना बढ़ती है तथा अन्य परिवारों या अन्य किसी पर उनकी निर्भरता में कमी आती है।

वृद्धजनों की गतिशीलता, दृष्टि, श्रवण क्षमता आदि में भी सहायक उपकरणों के प्रयोग से विकास होता है। कई बार इनकी सीखने-समझने की शक्ति भी कम हो जाती है। इस कारण उन्हें इनका प्रयोग व उपयोग समझाना भी एक समस्या बन जाती है।

अनेक विकासशील देशों में विकलांगों के लिए ऐसे उपकरणों के उत्पादन हेतु सुविधाएं बहुत कम हैं तथा उपलब्ध सेवाएं चंद स्थानों पर ही केंद्रीकृत हैं, साथ ही निम्न समस्याएं भी हैं :

- उत्पादन का कम होना।
- तैयार सहायक उपकरणों की गुणवत्ता का कमज़ोर होना।
- इस कार्य हेतु प्रशिक्षित कर्मियों की कम संख्या।

कई देशों में सहायक उपकरणों के लिए अनुदान के रूप में राशि उपलब्ध कराई जाती है। इससे उनके सामने समस्याएं नहीं आतीं। परंतु यदि धन की कमी हो तो सहायक उपकरणों के उत्पादन व वितरण में भारी समस्याएं खड़ी हो जाती हैं। कोई भी व्यावसायिक संस्थाएं उन्हें सहायक उपकरणों का उत्पादन करती हैं जिनकी बिक्री हो सके।

सहायक उपकरणों की उपलब्धता अकेले

इस समस्या का निवारण नहीं कर सकती है। विकलांगों के लिए सुगमता, समान अवसर, मानवाधिकार तथा गरीबी उन्मूलन भी आवश्यक हैं। परंतु इतना अवश्य है कि सहायक उपकरणों से परिवर्तन दिखाई देने लगता है। इसकी सहायता से विकलांगजन चलते-फिरते कार्य करते हुए समाज में सक्रिय योगदान करते दिखाई देने लगते हैं।

क्रीमत एक बड़ी समस्या

संयुक्त राष्ट्र संघ ने सहायक उपकरणों का दायित्व सरकारों को उठाने के लिए कहा है। परंतु पूरे विश्व में ऐसा एक समान तरीके से नहीं हो पा रहा है। अनेक देशों में निजी क्षेत्र इस मामले में आगे बढ़े हैं जबकि बाकी देशों में सरकारी अनुदान से ही ये काम चलाया जा रही है। ज्यादातर देशों में यह कार्य दक्षतापूर्वक संपन्न नहीं हो पा रहा है। कुछ स्थानों पर तकनीकी समस्याएं हैं जबकि ज्यादातर स्थानों में वितरण संबंधी समस्याएं आती हैं।

विकसित देशों में अपनाए गए तरीके

विकसित देशों में दैनिक जीवन में उपयोग आने वाले सहायक उपकरणों का निर्माण निजी क्षेत्रों में होता है और इसकी लागत ऊँची होती है। अनेक मामलों में इनका अधिकांश ख़र्च या तो बीमा कंपनियां उठाती हैं या समाज/सरकार उठाती हैं। स्वीडन जैसे देश में सामाजिक बीमा कार्यक्रम की सहायता के बिना ख़र्च उठाना संभव नहीं है।

अनेक मामलों में दान देने वाली संस्था ख़र्च उठाती है। इसके लिए वह संस्था सीधे उपकरण आयात भी करती है। पर यह उपाय वहीं कारगर है जहां विकलांगों की संख्या कम होती है।

पुनः प्रयोग की संभावना

विकसित देशों में सहायक उपकरण थोड़े दिनों तक प्रयोग करने के पश्चात पुराने कपड़ों की भाँति त्याग दिए जाते हैं। अनेक मामलों में अल्पकालिक उपयोग के पश्चात अस्पतालों में पुराने उपकरणों की बड़ी मात्रा एकत्रित हो जाती है। केवल विकासशील देशों तक लाने की लागत पर इन्हें उपलब्ध कराया जा सकता है। पर इनका रखरखाव, मरम्मत, दोबारा फिटिंग एक बड़ी समस्या होती है और निश्चित रूप से यह अच्छा विकल्प नहीं है। इसका एक कारण यह भी है कि इनके लिए नये पुर्जे बहुत महंगे मिलते हैं। इनकी मरम्मत करने वाले भी नहीं मिल पाते हैं।

उदाहरण के तौर पर पुनः प्रयोग होने वाली

व्हीलचेयर अक्सर यातायात में टूट जाती है। दूसरी ओर ये रेतीली ज़मीन पर चल नहीं पातीं। ग्रामीण इलाक़ों की उबड़-खाबड़ ज़मीन के लिए भी यह अनुपयुक्त होती है, केवल स्थानीय व्हीलचेयर ही काम आ पाती हैं।

अनेक मामलों में किसी सहायता योजना के अंतर्गत बड़ी संख्या में सहायक उपकरण उपलब्ध हो जाते हैं और इस कारण स्थानीय निर्माताओं का उद्योग चौपट हो जाता है। जब तक सहायता योजना समाप्त होती है और मांग बढ़ती है तब तक वे दिवालिया हो चुके होते हैं। स्थानीय उत्पादन ही समाधान

उपर्युक्त समस्याओं का निदान स्थानीय सुविधाओं व कच्ची सामग्री की सहायता से स्थानीय उत्पादन द्वारा ही किया जा सकता है। इन उत्पादन इकाइयों में निरंतरता रहती है तथा उपयोग में आने वाले सहायक उपकरणों की मरम्मत व रखरखाव में सुविधा होती है। इसमें स्थानीय श्रम का उपयोग होता है तथा देश का धन देश में ही रह जाता है।

इन कारखानों में विकलांग व्यक्तियों को रोजगार दिया जा सकता है। इससे विकलांगजनों के लिए न केवल रोजगार के अवसर खुलते हैं वरन् विकलांगजन अपने अनुभवों का भरपूर उपयोग भी कर सकते हैं। इससे उत्पादन प्रक्रिया में भी विकास देखने को मिलता है और विकलांगजनों को समाज में सम्मानीय स्थान पाने का अवसर भी मिलता है।

परंतु इसमें भी समस्याएं कम नहीं हैं। अनेक कारखानों में विकलांग के लिए विशिष्ट एवं आधुनिक कंप्यूटराइज़ड व्हील चेयर का निर्माण तो किया जाता है पर इनको बेचना कठिन होता है। उच्च प्रौद्योगिकी तथा कम मांग के कारण इनकी क्रीमत अधिक होती है। कई बार उच्चस्तर की सेवा उपलब्ध कराने में कठिनाइयां आती हैं।

परंतु इनके हल निकाले जा सकते हैं। उदाहरण के तौर पर सरकार इन उपकरणों को ख़रीद सकती है तथा रियायती दर पर आगे बांट सकती है। अनेक एनजीओ जिन्हें राष्ट्रीय व अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर अच्छी सहायता मिलती है, इन्हें ख़रीदकर आगे बांट सकते हैं। ऐसे करने से इस उद्योग में नये उत्साह का संचार होगा तथा वह बेहतर उत्पाद तैयार करने पर ध्यान देगा। स्थानीय संगठन यह आकलन भी कर सकते हैं कि उपभोक्ता कितनी लागत वहन कर सकते हैं तदनुसार वे सहायता की व्यवस्था

कर सकते हैं।

चंद सहायक उपकरणों का विवरण नीचे दिया जा रहा है:

चलने में सहायक उपकरण : विकलांगजनों को उनकी विकलांगता के अनुसार सहायक उपकरणों की आवश्यकता होती है। इनमें प्रमुख हैं—छड़ी, बैसाखी, फ्रेम वॉकर आदि। ये सभी चीज़ों स्थानीय स्तर पर उपलब्ध सामग्रियों जैसे—लकड़ी, धातु के ट्यूबों, प्लास्टिक आदि की सहायता से बनाए जा सकते हैं। इस कारण इनमें स्थानीय झलक भी दिखाई देती है। इनकी सहायता से विकलांगजन अपने घर के अंदर व निकट स्थलों पर स्वतंत्रापूर्वक आ-जा सकते हैं।

विशेष वाहन : विशेष वाहन की सहायता से विकलांगजन कहीं भी आ-जा सकते हैं। इससे उनमें आत्मनिर्भरता का भाव उत्पन्न होता है और अकेलापन भी दूर होता है। सुरक्षा की भावना व स्वाभिमान का भी संचार होता है। व्यक्तिगत संपर्क व सामाजिक क्रिया-कलाओं से विकलांगजनों का मानसिक स्वास्थ्य सुधरता है।

ये वाहन तिपहिया या चौपहिया हो सकते हैं तथा इनसे इन वरिष्ठ नागरिकों को विशेष लाभ होता है जो घुटनों आदि का महंगा ऑपरेशन न करा पाने के कारण विकलांग हो जाते हैं। स्थानीय रूप से उत्पादित ये वाहन सस्ते होते हैं तथा क्रीमत की तुलना में लाभ अधिक होता है।

व्हील चेयर : विकलांगजनों के अतिरिक्त इसका उपयोग अस्पतालों में बहुतायत से हो सकता है तथा इनका निर्माण स्थानीय रूप से उपलब्ध सामग्री के प्रयोग द्वारा हो सकता है।

श्रवण में सहायक उपकरण : विश्व के कम ही देश हैं जहां इनका स्थानीय उत्पादन हो पाता है। दूसरी ओर अच्छे श्रवण सहायक उपकरणों के अभाव में श्रवणहीनता भयंकर अकेलापन उत्पन्न करती है। कई ऊंचा सुनने वाले लोग इनके अभाव में श्रवणहीन ही मान लिए जाते हैं। श्रवण सहायक उपकरणों के दीर्घकालिक उपयोग हेतु अच्छी बैटरियों की उपलब्धता अवश्य सुनिश्चित की जानी चाहिए। सौर ऊर्जा द्वारा चार्ज की जाने वाली बैटरियों अभी भी चुनौती बनी हुई हैं।

अल्प दृष्टि वालों के लिए सहायक उपकरण : अच्छे चश्मों व विशालक शीशों के उपयोग द्वारा अल्प दृष्टिवान व्यक्ति अपने अधिकांश कार्य सरलता से कर सकते हैं। इनमें से अनेक उत्पादों का स्थानीय रूप से उत्पादन हो जाता है और अनेक का नहीं हो पाता है।

अल्प दृष्टिवानों के लिए अच्छी प्रकाश व्यवस्था अनिवार्य होती है। 60 वर्ष की आयु के व्यक्ति को उतना ही देख पाने के लिए 20 वर्ष की आयु के व्यक्ति की तुलना में तीन गुना अधिक प्रकाश की आवश्यकता होती है। आयु संबंधित आंखों की समस्याओं को टालने के लिए यह आवश्यक है कि चश्में सही समय पर उपलब्ध कराए जाएं। साथ ही चश्मों का नंबर भी सही हो। नेत्रहीनों के लिए धूमने-फिरने व अन्य कार्य करने के लिए सफेद छड़ी आवश्यक होती है तथा इसका उत्पादन स्थानीय स्तर पर हो जाता है।

सफाई व पट्टी आदि के लिए सामग्री कुछ विकलांगों को ज़ख्मों की सफाई व पट्टी आदि की आवश्यकता लगातार पड़ती रहती है। ये उत्पाद भी स्थानीय स्तर पर ही तैयार हो जाते हैं।

उपर्युक्त वर्णित सहायक उपकरण मात्र उदाहरण हेतु ही हैं। इनमें से अनेक का उत्पादन स्थानीय स्तर पर या राष्ट्रीय स्तर पर हो जाता है। बच्चों को बिठाने और उनको बोलना सिखाने के लिए संवाद उपकरण, सीखने या बौद्धिक विकलांगता से पीड़ित बच्चों को सिखाने के लिए चित्र युक्त सामग्री भी स्थानीय तौर पर ही उपलब्ध हो जाती है।

पर जहां पर भी अत्याधुनिक प्रौद्योगिकी पर आधारित सुसज्जित सहायक उपकरण की आवश्यकता होती है, वहां पर कठिनाइयां आती हैं। ऐसे में इनके सरलतम स्वरूप को तैयार करने का प्रयास तो होना ही चाहिए। इसी तरह विशिष्ट स्थिति के लिए आवश्यक परिवर्तन के प्रयास भी होने चाहिए।

भविष्य में निर्धन देशों के लिए नवीन सूचना व संचार प्रौद्योगिकी की आवश्यकता होगी। आज इस प्रौद्योगिकी की अहम भूमिका है और इससे विभिन्न सुविधाओं के विकास में सहायता मिल रही है। स्कूलों, अन्य शिक्षण संस्थानों, रोजगार स्थलों, सास्कृतिक कार्यक्रमों, जनसूचनाओं आदि के क्षेत्रों में इससे नये-नये मार्ग खुल रहे हैं।

स्थानीय उत्पादन के लिए पेशेवर कर्मियों को प्रशिक्षित करना

उपर्युक्त उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए नये पेशेवर कर्मी तैयार करना और पुराने कर्मियों को प्रशिक्षित करना अनिवार्य है। सहायक उपकरणों के स्थानीय उत्पादन के लिए प्रशिक्षण कार्यक्रम, सेमीनार तथा सूचना सेवा सभी को

सशक्त करना आवश्यक है। ये प्रशिक्षण कार्यक्रम तकनीकी पहलुओं पर भी होने चाहिए और प्रबंधन संबंधी पहलुओं पर भी। साथ ही आर्थिक पहलुओं की भी पूरी जानकारी दी जानी चाहिए। नियोक्ताओं को इस संबंध में विशेष प्रयास करने चाहिए ताकि कामगारों की योग्यता बढ़ती रहे। विकासशील देशों में इस संबंध में विशेष प्रयास करने की आवश्यकता है।

साथ ही इस क्षेत्र के तकनीशियनों व प्रोफेशनलों को भी संगठन बनाकर इस क्षेत्र में उपलब्ध ज्ञान को आत्मसात करने व इसे प्रयोग में लाने के लिए उपाय करने चाहिए। अफ्रीकी देशों में इस प्रकार के प्रयास सफल रहे हैं। वहां की बड़ी आबादी विकलांगता की शिकार है और तकनीशियनों ने मिलकर अपने-अपने देशों में सहायक उपकरणों के निर्माण हेतु व्यवस्था की है। इस कार्य में अफ्रीकी देशों में बोली जाने वाली अलग-अलग भाषाएं बाधा बन गई हैं।

अतः यह आवश्यक है कि इस क्षेत्र के तकनीशियों के राष्ट्रीय स्तर पर संघ बनाए जाएं। इससे निम्न लाभ होंगे :

- तकनीशियन अपने कार्यशाला में अलग-थलग रह जाने के स्थान पर नये-नये विकासों की जानकारियां एकत्रित कर सकेंगे।
- इस संबंध में शिक्षा के विशेष प्रावधान किए जाने चाहिए।
- इन विषयों पर पुस्तकों व पत्र-पत्रिकाओं की उपलब्धता सुनिश्चित की जानी चाहिए।
- इस क्षेत्र के तकनीशियनों को उचित मान्यता दी जानी चाहिए। अनेक देशों में इन्हें मात्र कारीगर मान लिया जाता है।
- कार्यशालाओं के प्रबंधकों को चाहिए कि वे तकनीशियनों को इतना व्यस्त न कर दें कि नयी आवश्यकताओं व विकास की ओर ध्यान ही न दे सकें।
- तकनीशियनों के आपसी संपर्क, आदान-प्रदान को हर संभव बढ़ावा दिया जाना चाहिए।
- इस संबंध में राष्ट्रीय स्तर का नेतृत्व विकसित किया जाना चाहिए।
- सूचनाओं के प्रसार हेतु वेबसाइट व न्यूज़ लेटर की व्यवस्था होनी चाहिए।
- क्षेत्र में उपलब्ध विशेषज्ञों के संबंध में आंकड़े विकसित किए जाने चाहिए।
- अतिरिक्त प्रशिक्षण हेतु क्षेत्रों के दौरे व सेमीनारों की व्यवस्था की जानी चाहिए। □
(लेखक विकलांगजन निवारण और सशक्तीकरण पर अनेक पुस्तकों के प्रणेता हैं)

IAS



2010

कक्षाएं प्रारम्भ / नामांकन जारी

इतिहास

द्वारा
सुजीत सिंह

- 2009 के P.T. में 91 प्रश्न सिर्फ Class Notes से।
- Mains 2009 में लगभग सभी प्रश्न Class Notes+ Crash Course से।

सा. अध्ययन

द्वारा
सुजीत सिंह, अनिल श्रीवास्तव
एवं टीम

हिन्दी साहित्य

द्वारा
रवीन्द्र मिश्रा

व्याख्या वाले
प्रश्नों (120 Marks)
पर विशेष तकनीक के
द्वारा तैयारी कराने वाला
एकात्म संस्थान

नोट : UPPCS एवं अन्य राज्य सिविल सेवा परीक्षाओं के लिए विशेष तैयारी

Ph. : 011-27652138
9540158227, 9310262701

A-18, (BASEMENT) Young Chamber, (Behind Batra Cinema), Dr. Mukherjee Nagar, Delhi - 9

IAS संस्कृत की तैयारी हेतु समर्पित भारत का गौरवमय संस्थान PCS

PANINI CLASSES

◆ Under - Mini Chandani

संस्कृत

द्वारा
साहित्य
कैलाश बिहारी एवं एस. कुमार

कक्षागत विशेषताएँ

- प्रारंभिक चरण से व्याकरण की संपूर्ण तैयारी।
- नियमित रूपेण संस्कृत अनुवाद का अभ्यास।
- संस्कृत-निबंध लेखन का आत्मनिष्ठ प्रयास।
- संस्कृत व्याख्या लेखन की नयी वैज्ञानिक पद्धति।
- प्रतिखण्ड पृथक्-पृथक् साप्ताहिक टेस्ट परीक्षा।
- सम्पूर्ण पाठ्यक्रम का संशोधित अध्ययन सामग्री।
- अनदेखा पाठोंश (Unseen Passage) का सतत् अभ्यास।
- संभावित बदलती प्रश्नों की प्रवृत्ति पर कक्षा में विशेष परिचर्चा।

प्रातःकालीन
9 Dec.
7.30 AM

शीतकालीन
कक्षारम्भ

सायं कालीन
19 Dec.
7.30 PM

नोट: संस्कृत अध्यर्थी के परेशानियों को देखते हुए, विगत वर्षों के प्रश्नपत्र (IAS) पाठ्यक्रम में नियारित सभी पुस्तकें और नियंत्रिका पुस्तिका (IAS Guide Line) "पाणिनि संस्थान" में उपलब्ध, अब बाहर से कुछ भी खरीदने की आवश्यकता नहीं।

अन्य कक्षाएँ **NET/JRF, DSSSB, PGT, KVTGT** वैच प्रारम्भ

सम्पादक अथवा किसी कारणवश जो PANINI CLASSES में नहीं आ सकते, वे पत्राचार के माध्यम से नवीन अध्ययन सामग्री प्राप्त कर सकते हैं, इसके लिए दिल्ली में शुगातान योग्य अपेक्षित राशि (6000/-) का बैंक ड्राफ्ट "MINI CHANDANI" के नाम भेजे। साथ ही वो फोटों एवं जन्म तिथि सहित पूरा पता।

Contact

09312100162
09958122675
09311724189

PANINI CLASSES

बच्चों के लिए हानिकर खाद्य व्यापार

● प्रशांत भोई

‘बच्चों के लिए हानिकर खाद्य-व्यापार’ शीर्षक निबंध प्रतियोगिता में पहले, दूसरे और तीसरे पुरस्कारों के लिए चयनित निबंधों को एक-एक कर हम योजना के अंकों में प्रकाशित कर रहे हैं। इस कड़ी में यहां प्रस्तुत है तृतीय पुरस्कार प्राप्त प्रविष्टि

व्यक्ति के जीवन का सबसे सुखद एवं अविस्मरणीय क्षण उसका बचपन होता है। न परिवार की चिंता, न समाज के प्रति कोई जिम्मेदारी, न देश-दुनिया से कोई मतलब। जो मिला उसके साथ खेलने लगे, कोई चीज़ पसंद आ गई तो उसको पाने की ज़िद करने लगे, किसी ने डांट-डपट दिया तो उससे रूठ गए। और रुठना भी पलभर के लिए, अगले ही पल पुनः खेलने में व्यस्त। इस प्रकार क्रोध, घृणा, ईर्ष्या, द्वेष, शत्रुता, शोक इत्यादि से रहित दुनिया में बाल मन विचरण करता है। परंतु आज यह बचपन कई तरह की समस्याओं से ग्रसित हो चुका है और यह प्रक्रिया जारी है। समस्याएं शारीरिक और मानसिक दोनों तरह की हैं।

आजकल शहरों में मोटापा के शिकार बच्चों को अक्सर देखा जा सकता है। यही मोटापा उनकी निष्क्रियता के लिए भी जिम्मेदार है। बच्चे मानसिक रूप से चिड़िचिड़े, गुस्सैल तथा एकाकीपन के शिकार हो रहे हैं। इसके अतिरिक्त अपच, नेत्र, त्वचा एवं हड्डी संबंधी रोग, गंजाम, एलर्जी, शीघ्र थकान इत्यादि का प्रकोप भी बढ़ रहा है। बच्चे घर के बाहर खुले मैदान में खेलने की जगह घर के अंदर बैठकर टीवी, कंप्यूटर या अन्य इलेक्ट्रॉनिक उपकरण के साथ समय बिताना ज्यादा पसंद कर रहे हैं।

अतः यह प्रश्न उठता है कि आखिर बच्चों में ये समस्याएं क्यों बढ़ रही हैं? क्या यह हमारे विकास की दिशा और तेज़ी से बदल रही जीवनशैली पर प्रश्नचिह्न नहीं है? बच्चे देश के भविष्य होते हैं तो क्या यह देश के भविष्य के सामने प्रश्नचिह्न खड़ा नहीं करता?

बच्चों में बढ़ रहे शारीरिक एवं मानसिक रोगों के लिए कई कारक जिम्मेदार हो सकते हैं परंतु सबसे स्पष्ट एवं ठोस कारक वर्तमान में तेज़ी से बढ़ रहे हानिकर खाद्य व्यापारों को माना जा सकता है। आजकल बच्चे जो ग्रहण कर रहे हैं उनमें विकृति आ गई है। हानिकर खाद्य व्यापार के अंतर्गत उन पदार्थों के व्यापार को लिया जा सकता है जो आज की तेज़ी जीवनशैली में हमारे आहार में लोकप्रिय होता जा रहा है। इनको पकाने में न ज्यादा समय लगता है और न ही ज्यादा परिश्रम। ‘फटाफट बनाओ, फटाफट खाओ’ से इन्हें परिभाषित किया जा सकता है। इन खाद्य पदार्थों में पिज्जा, नूडल्स, बर्गर एवं अन्य फास्ट फूड, शीतल पेय, आइसक्रीम, चॉकलेट इत्यादि शामिल हैं। इससे पोषण तो मिलता नहीं बल्कि इसमें संरक्षण के लिए प्रयुक्त किया जाने वाला रसायन हानिकारक होता है। यह सर्वविदित है कि बाल्यावस्था शारीरिक एवं मानसिक विकास

का समय होता है, यदि इस समय बच्चों को संतुलित आहार या पोषण से युक्त भोजन न मिले तो उसका सर्वांगीण विकास कैसे संभव होगा?

गैरतलब है कि आजकल बाजार में बनी-बनाई खाद्य वस्तुएं बड़ी आसानी से हर जगह उपलब्ध हो जाती हैं। यहां तक कि ‘घर पहुंचाने की सेवा’ भी सुलभ है और जनसंचार के साधनों में वृद्धि ने इसे और आसान बना दिया है। बाजार में मिलने वाले खाद्य पदार्थों में ज्यादा मुनाफ़े के लिए सस्ते से सस्ते सामग्रियों का प्रयोग किया जाता है। परंतु विभिन्न प्रचार माध्यमों द्वारा इसे बहुत आकर्षक ढंग से प्रस्तुत एवं प्रचारित किया जाता है। मसलन- इंटरनेट, मोबाइल, पत्र-पत्रिकाएं, पोस्टर इत्यादि द्वारा। इसके अलावा प्रसिद्ध कार्टून चरित्रों तथा फ़िल्मी हस्तियों से विज्ञापन कराकर बच्चों को आकर्षित कर उत्पादों की बिक्री बढ़ाई जाती है।

ऐसे कई विज्ञापन हैं जो बच्चों के मन-मस्तिष्क में एक कल्पनालोक का सृजन करते हैं। इसके अलावा विभिन्न उत्पादक आजकल अपने हर उत्पाद के साथ बच्चों से संबंधित कोई न कोई खिलौना मुफ़्त में देते रहते हैं, इन सब प्रयोजनों के पीछे उनका मकसद केवल अपने उत्पादों की बिक्री ही

होती है।

यदि ध्यान दिया जाए तो ऐसे खाद्य पदार्थों का प्रचलन पहले पश्चिमी देशों में हुआ, उसके बाद यह धीरे-धीरे विकासशील एवं अविकसित देशों में प्रचलित हुआ। इसी क्रम में इनकी बिक्री बढ़ाने के लिए पश्चिमी संस्कृति का भी प्रचार इन देशों में जोर-शोर से किया गया। इसका प्रभाव आजकल न केवल हमारे पहनावे, रहन-सहन, खान-पान के तरीकों में देखा जा सकता है, बल्कि भाषा में भी देखा जा सकता है। ‘हाय-हैलो’ की भाषा तथा विभिन्न प्रकार के पार्टीयों जैसे— बर्थ डे पार्टी, चिल्ड्रन्स डे, न्यू ईयर पार्टी इत्यादि के प्रचार एवं आयोजनों में वृद्धि हो रही है। ऐसी मानसिकता एवं व्यवहार करने वाले लोगों को आधुनिक कहा जाता है। ध्यातव्य है कि इन सब पार्टीयों के जरिये हानिकर खाद्य व्यापार बड़ी मात्रा में होता है।

युवावार्ग की मानसिकता में भी बदलाव हो रहा है। उनके अनुसार :

‘कहीं भी कुछ भी पहना जा सकता है कहीं भी कुछ भी खाया जा सकता है

कहीं भी कुछ भी किया जा सकता है।’ आखिर यह स्थिति क्यों पैदा हो रही है?

विषाक्त पदार्थों के प्रभाव छिपाने के लिए उत्पादक अपने उत्पाद की तुलना इसकी तुलना मां के दूध के साथ भी करते नज़र आते हैं; सिर्फ इतना ही नहीं एक विज्ञापन में तो यह भी

कहा गया कि मां के दूध में भी ज़हर होता है। ऐसे विज्ञापनों के कलाकारों को यह ध्यान रखना चाहिए कि मां का दूध बच्चे के लिए प्रकृतिप्रदत्त है। यह न केवल मानव के लिए अपितु प्रकृति के अन्य जीवों के लिए भी प्रकृति द्वारा प्रदान किया गया अनुपम उपहार है। थोड़े से पैसों के लिए ऐसे कलाकार इसानियत को भूल जाते हैं। ऐसी बातें भर्त्सना योग्य हैं।

कई बार अर्थशास्त्रियों द्वारा ऐसे खाद्य व्यापारों का समर्थन किया जाता है, खासकर भारत जैसे विकासशील देशों के लिए। तर्क दिया जाता है कि इससे आर्थिक क्रियाकलाप में वृद्धि होगी तथा इससे लोगों का जुड़ाव होगा, रोजगार में वृद्धि होगी, धन का प्रवाह होगा। परंतु इसका मतलब यह नहीं कि हानिकर खाद्य व्यापार को बढ़ावा दिया जाए। इसका विकल्प भी ढूँढ़ा जा सकता है। इसके लिए कृषि उत्पादों से निर्मित पदार्थों का प्रचलन बढ़ाया जाए। इससे एक तरफ तो बच्चों के स्वास्थ्य पर नकारात्मक प्रभाव नहीं पड़ेगा, दूसरी तरफ कृषकों की आमदनी में भी वृद्धि होगी।

अतः ऐसे खाद्य व्यापारों पर रोक आवश्यक है। इसके लिए न केवल हमारे देश के नेतृत्व को आगे आना होगा बल्कि परिवार एवं समाज को भी अपनी जिम्मेदारियों को समझना होगा। इसके लिए अग्रलिखित कुछ उपाय किए जा सकते हैं :

- परिवार में बच्चों को अकेला न होने दिया जाए। इसके लिए संयुक्त परिवार प्रथा को पुनः स्थापित करने की ज़रूरत है।
- स्कूल के टिफिन बॉक्स में घर में निर्मित पदार्थों को तरज़ीह दी जाए।
- माता-पिता को चाहिए कि वे अपने बच्चों को समय देकर बाज़ार में उपलब्ध खाद्य पदार्थों के गुण-दोष की जानकारी दें।
- बच्चों को खुले मैदान में खेलने के लिए प्रोत्साहित करें।
- सार्वजनिक स्तर पर ऐसे विक्रय स्थलों का बहिष्कार किया जाना चाहिए। इसके लिए मीडिया को जनजागरण हेतु प्रयास करना चाहिए। इसमें स्वसहायता समूह भी सहायक हो सकते हैं।
- सरकार को चाहिए कि कठोर शुल्क लगाकर ऐसे व्यापार को हतोत्साहित करें।
- अंतरराष्ट्रीय स्तर पर यूनीसेफ जैसी संस्थाओं को आगे आने की ज़रूरत है तथा विश्व व्यापार संगठन जैसी वैश्विक संस्थाओं को इसके खिलाफ कड़े कदम उठाने चाहिए।

स्पष्ट है कि विकलांग एवं कमज़ोर बचपन अंतः एक कमज़ोर देश को ही जन्म देगा। अतः समय रहते सचेत हो जाना आवश्यक है। ताकि बच्चा भी स्वस्थ एवं सुरक्षित रहे और देश का भविष्य भी स्वस्थ एवं सुरक्षित रहे। □

पृष्ठ 55 का शोषांश

और बेरोज़गारी के सवालों को बिल्कुल अलग-अलग कर दिया गया है। दूसरे शब्दों में, यह संभव है कि देश में गैरबराबरी बढ़ती जाए और ग़रीबों के आंकड़ों में कमी भी दिखाई दे। वास्तव में, भारतीय अर्थव्यवस्था दुनिया की सबसे ज्यादा गैरबराबर समाजों में से एक है, और यह गैरबराबरी बढ़ती ही जा रही है।

सरकार की आर्थिक नीतियों और विकास नीति से ग़रीबी का सवाल जुड़ा है। वर्ष 1991 से आई वैश्वीकरण और मुक्त व्यापार की नव उदारवादी व्यवस्था ने भी ग़रीबी को बढ़ाने का काम किया है। बेरोज़गारी, शोषण, गैरबराबरी, विस्थापन, जल-जंगल-ज़मीन से बेदखली, मुक्त व्यापार तथा साप्राज्यवाद का सीधा संबंध ग़रीबी से है। इन व्यापक प्रश्नों से ग़रीबी के सवाल को काटकर नहीं देखा जा सकता है।

ग़रीबी नहीं अमीरी रेखा हो

इसलिए ग़रीबी रेखा के इस भ्रमजाल को समझना और उससे बाहर आना ज़रूरी है। ज़रूरत इस बात की है कि जनकल्याण की जो भी योजनाएं और कार्यक्रम हों, वे देश की साधारण आम जनता के लिए होने चाहिए, सिर्फ ग़रीबी रेखा की सूची के परिवारों के लिए नहीं। जिस देश की 75-80 प्रतिशत आबादी ग़रीबी एवं अभावों में जी रही है और कोई छोटी अल्पसंख्यक संख्या ग़रीब नहीं है, वहां इसके अलावा कोई विकल्प नहीं है। इसके लिए साधनों की कमी का रोना रोने से समस्या का समाधान नहीं होने वाला। किंतु यदि अमीरों को दी जाने वाली मदद व करों में रियायत बंद कर दी जाए तथा काला धन जब्त कर लिया जाए तो कोई कमी नहीं रहेगी। आखिर क्यूंबा जैसा छोटा देश अमरीका

और उसके मित्र देशों का बहिष्कार झेलते हुए भी अपनी पूरी आबादी को सरकारी ख़र्च पर दुनिया का सर्वश्रेष्ठ स्वास्थ्य सुविधाएं, पोषण, शिक्षा और रोजगार उपलब्ध करा सकता है, तो भारत क्यों नहीं कर सकता? असली सवाल साधनों का नहीं, इच्छाशक्ति की है।

दूसरे शब्दों में, देश को एक ग़रीबी रेखा के बजाय अमीरी रेखा की ज़रूरत है। इस अमीरी रेखा की सूची के लोगों को सरकारी मदद व अनुदान से वर्चित किया जा सकता है। देश में ज़मीन की हदवंदी की ही तरह संपत्ति व आमदनी की एक ऊपरी सीमा बनाने पर भी गंभीरता से विचार किया जाना चाहिए। हम यह नहीं भूल सकते कि अमीरी और ग़रीबी एक ही सिक्के के दो पहलू हैं। □

(लेखक समाजवादी जनपरिषद नामक स्वयंसेवी संगठन के राष्ट्रीय अध्यक्ष हैं।
ई-मेल : sjpsunil@gmail.com)

ज़रूरी है संतुलित आहार

● सुनील कुमार खण्डेलवाल

भारत जैसे विशाल जनसंख्या वाले देश में कुपोषण की समस्याएं होना, जन स्वास्थ्य की चिंता का विषय है। ज्यादातर रोग असंतुलित आहार के कारण उत्पन्न होते हैं। कुपोषण दूर करने के लिए दैनिक आहार में मानव शरीर के लिए अनिवार्य सभी पोषक तत्व समुचित मात्रा में शामिल होने चाहिए।

आहार के माध्यम से जो पौष्टिक तत्व हमारे शरीर में जाते हैं उससे हमारे शरीर को ऊर्जा मिलती है। पोषक तत्व शरीर को पोषण देते हैं व शरीर के टूटे-फूटे ऊतकों की मरम्मत करते हैं।

शरीर के उचित पोषण और अद्वृनी क्रियाओं के उचित संचालन के लिए दैनिक आहार में पौष्टिक तत्व (कार्बोहाइड्रेट, प्रोटीन, वसा, विटामिन, खनिज लवण, पानी तथा रेशे) युक्त खाद्य पदार्थों का उचित मात्रा में होना आवश्यक है। केवल एक या दो खाद्य पदार्थों के सेवन से उक्त सभी पौष्टिक तत्व प्राप्त नहीं होते। अतः कुपोषण से बचाव के लिए संतुलित आहार आवश्यक है। संतुलित आहार के घटक इस प्रकार हैं:

कार्बोहाइड्रेट : कार्बोहाइड्रेट को कार्बोज़ भी कहते हैं। यह ऊर्जा प्राप्ति का अत्यंत सुलभ एवं कम ख़र्चीला साधन है। यह हमारे आहार का आवश्यक एवं महत्वपूर्ण तत्व है। कार्बोहाइड्रेट पके फल, सूखे मेवे, दूध, शहद, गन्ना, संतरा, अगूर, केला, नारियल पानी, शकरकंद, चुकंदर, किशमिश, मुनक्का, खाद्यान्न जैसे— गेहूं, चावल तथा ज्वार आदि में प्रचुर मात्रा में होता है। केला, शक्कर तथा गुड़ से प्राप्त कार्बोज़ शरीर को पुष्ट और सबल बनाता है। अच्छी तरह से चबाकर खाने से शरीर आहार में मौजूद अधिकतम कार्बोज़ का उपयोग कर पाता है। दैनिक आहार में कार्बोहाइड्रेट की कमी होने पर शरीर को पर्याप्त ऊर्जा नहीं मिल पाती। शरीर में कार्बोहाइड्रेट की अत्यधिक कमी होने पर प्रोटीन तथा वसा शरीर को ऊर्जा प्रदान करने का कार्य करते हैं।

जिससे शरीर की कार्यक्षमता कम हो जाती है। वजन कम हो जाता है और शरीर निर्बल एवं सुस्त हो जाता है। एक ग्राम कार्बोज़ से 4 किलो कैलोरी ऊर्जा प्राप्त होती है।

प्रोटीन : प्रोटीन शरीर के लिए अति महत्वपूर्ण तत्वों में से एक है। प्रोटीन अमीनो अम्ल से मिलकर बना एक जटिल यौगिक है। शरीर में प्रति किलोग्राम वजन पर प्रतिदिन एक ग्राम प्रोटीन ज़रूरी होता है। यह शरीर के नये ऊतकों के निर्माण और पुराने ऊतकों की मरम्मत के लिए ज़रूरी पोषक तत्व है। इसलिए शैशवकाल में जब बच्चे का शरीर तेज़ी से बढ़ता है, उस समय प्रोटीन का मिलना बहुत आवश्यक है। इसके अभाव में बच्चे का समुचित विकास नहीं हो पाता। प्रोटीन विभिन्न रोगों से भी शरीर की रक्षा करता है। बच्चों में प्रोटीन की कमी से क्वाशियोरकर व मेरास्मस नामक रोग हो सकते हैं। प्रोटीन की कमी से शरीर की मांसपेशियां कमज़ोर, मानसिक क्षमता एवं रोग प्रतिरोधक शक्ति में कमी आदि हो सकती है। वहाँ इसकी अधिकता यकृत और गुर्दों को कमज़ोर और बीमार बना देती है। जो लोग शारीरिक श्रम नहीं करते, उनको प्रोटीन युक्त खाद्य पदार्थों का अल्प मात्रा में ही सेवन करना चाहिए। यह सोयाबीन, दूध, मूंगफली, बादाम, नारियल, तिलहन, अखरोट, काजू, चने और चने की दाल में प्रचुर मात्रा में होता है जो सुपाच्य भी होता है। एक ग्राम प्रोटीन से 4.2 किलो कैलोरी ऊर्जा प्राप्त होती है।

वसा : यह दूध, मक्खन, घी, तेल आदि में पर्याप्त मात्रा में पाई जाती है। वसा युक्त खाद्य पदार्थ शरीर में ईंधन का कार्य कर ऊर्जा पैदा करते हैं। वसा से शरीर सुदर, सुडॉल और बलवान होता है बशर्ते इसका उपयोग संतुलित मात्रा में किया जाए। इसका अधिक मात्रा में उपयोग मोटापा बढ़ाता है। यह कई रोगों जैसे— मधुमेह, उच्च रक्तचाप तथा हृदय रोग आदि

का भी कारण बन सकता है। दैनिक आहार में घी, मक्खन, तेल आदि का अधिक सेवन करने से हृदय रोग की संभावना रहती है, क्योंकि ये रक्त में कोलेस्ट्रॉल की मात्रा बढ़ाते हैं जिससे हृदय से जुड़ी रक्त कोशिकाओं की भीतरी सतह पर कोलेस्ट्रॉल जमा होने लगता है, जिससे रक्त वाहिनियां संकरी हो जाती हैं। यह स्थिति एथेरोस्क्लरोसिस कहलाती है। नतीजतन रक्त वाहिनियों में रक्त का प्रवाह बाधित होता है और कभी-कभी रुक भी जाता है। परिणामस्वरूप अचानक हृदय गति रुक जाती है जिससे मृत्यु तक हो सकती है। रक्त में कोलेस्ट्रॉल का बढ़ना मधुमेह की बीमारी में भी हानिकारक होता है। इसलिए मधुमेह के रोगी को बहुत ही कम मात्रा में वसा का सेवन करना चाहिए। वसा के अधिक संचय के परिणामस्वरूप गुर्दों की सक्रियता में कमी आने लगती है जिससे गुर्दों की आवश्यक अपशिष्ट पदार्थों को शरीर से बाहर निकालने की क्षमता कम होने लगती है। गंभीर स्थिति में इसका दुष्प्रभाव हृदय एवं मस्तिष्क पर भी होने की संभावना होती है। आहार में वसा की कमी और अधिकता दोनों का ही हमारे शरीर पर दुष्प्रभाव पड़ता है। अतः हमें दैनिक आहार में संतुलित मात्रा में वसा लेना चाहिए। एक स्वस्थ व्यक्ति को दैनिक आहार में 40 से 60 ग्राम वसा का सेवन करना चाहिए। एक ग्राम वसा से 9.0 किलो कैलोरी ऊर्जा प्राप्त होती है।

विटामिन : विटामिन दो प्रकार के होते हैं। वसा में घुलनशील विटामिन (ए, डी, ई तथा के) एवं पानी में घुलनशील विटामिन (विटामिन बी कॉम्प्लेक्स समूह जैसे— बी1, बी2, बी3, बी5, बी6, बी12, फॉलिक अम्ल तथा विटामिन सी आदि)। विटामिन भोजन का एक महत्वपूर्ण हिस्सा है। शरीर के स्वस्थ और सुडौल रहने के लिए भोजन में विटामिनों का संतुलन होना अत्यावश्यक है क्योंकि ये शरीर की चयापचय

क्रियाओं का नियमन करते हैं। इसकी कमी से मानव शरीर में कई तरह की गंभीर बीमारियां जैसे— रत्नोंधी, स्कर्वी, बेरी-बेरी तथा पेलाग्रा आदि हो जाती है। इसलिए भोजन में कार्बोहाइड्रेट, प्रोटीन और वसा के साथ ही विभिन्न प्रकार के विटामिनों का समावेश भी ज़रूरी है। यहां यह बात ध्यान देने योग्य है कि अगर विटामिनों की पूर्ति दवाओं के बजाय प्राकृतिक तरीकों यानी पोषाहार से की जाए तो ज़्यादा बेहतर होगा। हमारे शरीर की पाचन प्रणाली अच्छी तरह कार्य करे तो सभी विटामिन और खनिज लवणों का निर्माण शरीर में होता रहता है और वे ही सर्वाधिक गुणकारी होते हैं। ये तत्व दूध, हरी सब्जियों, अंडे तथा मौसमी फलों आदि में प्रचुर मात्रा में पाए जाते हैं।

वसा में घुलनशील विटामिन ए (रेटनॉल) की कमी से आंखों के रोग जैसे— रत्नोंधी (रात को या अंधेरे में दिखाई न देना), फोटोफोटिया (आंखों तेज प्रकाश के प्रति संवेदनशील हो जाती है), जेराफथेलमिया (आंखों के कार्निया में सूजन और कार्निया की झिल्ली सूखना), किरेटोमलेसिया (दृष्टि खो देना यानी अंधा हो जाना) आदि हो जाते हैं। शारीरिक विकास का रुकना, यकृत की बीमारियां, खुरदरी-सूखी त्वचा (टोड स्किन या फीनोडर्मा) आदि रोग भी विटामिन ए की कमी के ही लक्षण हैं। शरीर में विटामिन डी (केल्सीफरोल) की कमी से हड्डियों एवं दांतों में विकृति, बच्चों में रिकेट्स (अस्थियों में कैल्शियम जमने की प्रक्रिया में बाधा), प्रौढ़ आयु में अस्थि दौर्बल्य औस्टियोमलेसिया या प्रौढ़ रिकेट्स होने की संभावना रहती है जिससे हड्डियां नरम पड़ जाती हैं। शरीर में विटामिन ई (टेकोफेरोल) की कमी से लाल रक्त कणिकाओं (आरबीसी) का क्षय होना, मांसपेशियों का ह्रास और शरीर के विकास में रुकावट आदि लक्षण उत्पन्न हो जाते हैं। शरीर में विटामिन के (फाइलोक्रिनॉन) की कमी से खून का थक्का बनने की प्रक्रिया के लिए आवश्यक तत्वों के निर्माण में रुकावट आने से रक्त जमने की प्रक्रिया अवरुद्ध हो जाती है जिससे रक्त जमने में अधिक समय लगता है।

पानी में घुलनशील विटामिन बी१ (थायमीन)की कमी से बेरी बेरी (आई एवं शुष्क) रोग, याददाश्त और भूख में कमी, पाचन क्रिया में गड़बड़ी, थकान, निराशा और उदासी, हाथ, पैर व जोड़ों में दर्द, अचानक कंधों में दर्द होना व खुद ब-खुद ठीक हो जाना, पिंडलियों

में ऐंठन व दर्द, एड़ियों में दर्द, स्वभाव में चिड़चिड़ापन आदि लक्षण उत्पन्न हो जाते हैं। शरीर में विटामिन बी२ (राइबोफ्लेविन) की कमी से मुंह के किनारों का फटना (चिलोसिस) और घाव, चक्कर आना, आंखों का थकना, पाचन गड़बड़ी आदि लक्षण उत्पन्न हो जाते हैं। विटामिन बी३ (नायसीन एवं विटामिन जी) की शरीर में कमी से पेलाग्रा रोग, भूख में कमी, सिर दर्द, डिप्रेशन, याददाश्त में गड़बड़ी, स्नायु संबंधी गड़बड़ी आदि लक्षण उत्पन्न हो जाते हैं। विटामिन बी६ (पाइरीडॉक्सीन) की कमी से अनिद्रा, भूख में कमी, जी मिचलाना, उलटियां होना, रक्ताल्पता, चक्कर आना आदि लक्षण पैदा हो जाते हैं। बच्चों के विकास पर बुरा असर पड़ता है। विटामिन बी९ (फोलिक एसिड एवं विटामिन एम) की कमी पाचनक्रिया में गड़बड़ी, शरीर की वृद्धि रुकना, अनिद्रा, लाल रक्त कणिकाओं की कमी (मेगालोब्लास्टिक एनीमिया) का कारण बन जाती है। विटामिन बी१२ (सायनोकोबालामिन) की शरीर में कमी से शरीर की वृद्धि पर बुरा प्रभाव, थकान, याददाश्त में कमी, खून की कमी, अंगुली व अंगूठे में संवेदनहीनता और मेरुदंड में विकृति होना, स्नायु कोशिकाओं का क्षरण आदि लक्षण उत्पन्न हो जाते हैं। शरीर में विटामिन सी (ऐस्कॉबिक एसिड) की कमी से स्कर्वी रोग, कमज़ोरी, थकावट, भूख न लगना, हाथ-पैरों में दर्द, दम फूलना, खून की कमी, मसूड़ों से खून आना आदि लक्षण दिखाई देने लगते हैं। शरीर की रोग प्रतिरोधक क्षमता कम होने से शरीर संक्रामक रोग की चपेट में आ जाता है तथा घाव हो जाने पर जल्दी नहीं भरता है।

खनिज लवण : हमारे शरीर की हड्डियों व दांतों का अधिकांश भाग खनिज लवणों से बना है। शरीर में पसीना, मूत्र, खखार आदि के माध्यम से खनिज लवण बाहर निकलते रहते हैं। अतः इनकी पूर्ति होना ज़रूरी है। विभिन्न खनिज लवण जैसे— सोडियम, पोटेशियम, मैग्नीशियम, कैल्शियम, लोहा, तांबा, आयोडीन, ज़िंक, कोबाल्ट इत्यादि की शरीर की चयापचय की क्रियाओं में प्रमुख भूमिका है। हरी सब्जियां तथा ताजे फलों में खनिज लवण पर्याप्त मात्रा में होते हैं। अतः इन खाद्य पदार्थों का प्रतिदिन सेवन किया जाए तो शरीर में इनकी कमी नहीं होती। कुछ खनिज लवण क्षार उत्पन्न करने वाले और कुछ अम्ल उत्पन्न करने वाले होते हैं। इनमें संतुलन बना रहना ज़रूरी है। हरे पत्ते वाली शाक-सब्जी और कंदमूल वाले शाक

क्षार प्रधान होते हैं और इनमें अम्लता कम होती है। दाल, बादाम, गेहूं, बाजरा व जौ में अम्लता अधिक पाई जाती है।

पानी : हमारे शरीर का लगभग दो-तिहाई भाग पानी से बना है। अतः शरीर में पानी का स्थान महत्वपूर्ण है। क्योंकि रक्त संचार, शरीर शुद्धि और अनेक तत्वों को शरीर में एक स्थान से दूसरे स्थान तक ले जाने का काम पानी के माध्यम से ही होता है। शरीर के तापमान को नियंत्रित रखना जल का ही काम है। यह शरीर के विषाक्त तत्व, विजातीय पदार्थ और विकार बाहर करता रहता है। शुद्ध जीवाणुरहित जल आहार का एक आवश्यक अंग है, अतः इसे पर्याप्त मात्रा में लेना चाहिए। जब भूख लगी हो उस समय और भोजन के तुरंत बाद जल पीना हानिकारक होता है। भोजन के मध्य में भी बहुत सारा पानी नहीं पीना चाहिए, अगर आवश्यकता हो तो अल्प मात्रा में सेवन करें। भोजन के 1-2 घंटे बाद पर्याप्त मात्रा में पानी पीना हितकर होता है। जल का ताजा, शुद्ध और प्राकृतिक रूप से ठंडा होना ज़रूरी है। एक वयस्क व्यक्ति को एक दिन में औसतन 2.5 से 3.0 लीटर पानी पीना चाहिए। कुछ बीमारियों जैसे दस्त लगने या उल्टी होने की दशा में शरीर से पानी निकल जाता है, उस समय रोगी को अधिक मात्रा में पानी पीना चाहिए।

रेशे : दैनिक आहार में रेशेदार पदार्थों का बहुत महत्व होता है। रेशेदार पदार्थ जैसे छिलके बाले फल, दाल, शाक, चोकर बाले आटे और तंतु युक्त वनस्पतियों के सेवन से शरीर में रेशे की पूर्ति होती है। छिलका न सिर्फ़ रेशे का स्रोत है, बल्कि इसमें प्रोटीन, विटामिन, खनिज लवण आदि पोषक तत्व भी विद्यमान रहते हैं। रेशेदार पदार्थ शरीर के पाचन संस्थान को क्रियाशील बनाए रखते हैं। शरीर से मल निष्कासन, आंतों और मलाशय की शुद्धि और चिकने तत्वों को बाहर निकालने का कार्य करते हैं। दैनिक आहार में इसकी कमी से शरीर की पाचन शक्ति दुर्बल पड़ जाती है और कब्ज़ की स्थिति बनी रहती है। रेशों की अधिकता का शरीर पर कोई हानिकारक प्रभाव नहीं पड़ता, क्योंकि रेशे शरीर में पचते नहीं हैं और स्वाभाविक रूप से मल के साथ बाहर निकल जाते हैं। परंतु यदि शरीर में कोई विकार, जैसे— आंतों में छिद्र या आमाशय में अल्पर हो तो इनका अधिक सेवन नुक्सानदायक हो सकता

है। ऐसी हालत में रोगी को इनका सेवन कम करना चाहिए।

संतुलित आहार को प्रभावित करने वाले कारक : संतुलित आहार विभिन्न कारकों, जैसे— उप्र, तिंग, स्वास्थ्य, क्रियाशीलता, जलवायु और मौसम तथा विशेष शारीरिक अवस्था आदि से प्रभावित होता है। इनका सक्षिप्त विवरण इस प्रकार है :

उप्र : उप्र से संतुलित आहार प्रभावित होता है। बच्चों को उनके शरीर के भार की तुलना में प्रौढ़ व्यक्तियों से अधिक भोज्य पदार्थों की आवश्यकता होती है। संतुलित आहार में ऊर्जा प्रदान करने वाले तत्व, निर्माणक तत्व व सुरक्षात्मक तत्वों की आवश्यकता मात्रा सम्मिलित होती है। बच्चों को ऊर्जा प्रदान करने वाले तत्वों की अधिक आवश्यकता उनके नये ऊतकों में ऊर्जा संग्रह के लिए होती है। सभी वृद्धि की अवस्थाओं में निर्माणक तत्वों (प्रोटीन एवं खनिज लवण) की आवश्यकता अधिक होती है। बाल्यावस्था तथा वृद्धावस्था में शरीर की संवेदनशीलता बढ़ जाने के कारण सुरक्षात्मक तत्वों (विटामिन एवं जल) की अधिक आवश्यकता होती है। वृद्धावस्था में शरीर के शिथिल हो जाने के कारण क्रियाशीलता कम हो जाती है। अतः ऊर्जा प्रदान करने वाले भोज्य तत्वों (कार्बोहाइड्रेट एवं वसा) की आवश्यकता कम होती है।

लिंग : स्त्रियों व पुरुषों के संतुलित आहार में अंतर होता है। पुरुषों की पोषक आवश्यकता स्त्रियों की अपेक्षा अधिक होती है। इसका कारण पुरुषों का शारीरिक आकार, भार और क्रियाशीलता का अधिक होना है। पुरुष के शरीर में ऊतकीय टूट-फूट अधिक होने के कारण निर्माणक तत्वों की आवश्यकता भी अधिक होती है। परंतु आयरन (लौह तत्व) की आवश्यकता पुरुषों की अपेक्षा स्त्रियों को अधिक होती है। स्त्रियों को कुछ विशेष अवस्थाओं जैसे गर्भावस्था व दुग्धपान करने के दौरान अधिक पोषक तत्वों की आवश्यकता होती है।

स्वास्थ्य : व्यक्ति का स्वास्थ्य भी पोषक तत्वों की आवश्यकता को प्रभावित करता है। अस्वस्थता की स्थिति में क्रियाशीलता कम होने के कारण एक स्वस्थ व्यक्ति की अपेक्षा बीमार व्यक्ति की ऊर्जा की आवश्यकता कम होती है, पर यदि दोनों व्यक्तियों की क्रियाशीलता समान हो तो अस्वस्थ व्यक्ति की आधारभूत

चयापचयी क्रिया (बीएमआर) अधिक होने के कारण निर्माणक व सुरक्षात्मक तत्वों की आवश्यकता भी अधिक होती है, पर पाचन क्रिया कमज़ोर हो जाने के कारण भोजन के रूप में अंतर होता है।

क्रियाशीलता : शारीरिक क्रियाशीलता के लिए ऊर्जा की आवश्यकता होती है। क्रियाशीलता अधिक होने के कारण शरीर में टूट-फूट भी अधिक होती है। अतः अत्यधिक क्रियाशील व्यक्ति को निर्माणक तत्वों (प्रोटीन एवं खनिज लवण) की आवश्यकता सामान्य क्रियाशील व्यक्ति की अपेक्षा अधिक होती है। अतः प्रत्येक व्यक्ति का संतुलित आहार भी एक समान नहीं होता। हो सकता है कि एक व्यक्ति का संतुलित आहार, दूसरे के लिए अपर्याप्त हो तथा तीसरे के लिए आवश्यकता से अधिक हो। चूंकि प्रत्येक व्यक्ति की पोषक तत्वों की आवश्यकता भिन्न-भिन्न होती है, अतः प्रत्येक व्यक्ति का संतुलित आहार भी भिन्न-भिन्न होता है।

जलवायु और मौसम : जलवायु और मौसम भी आहार की मात्रा को प्रभावित करते हैं। ठंडे देशों के लोगों को गर्म देशों के लोगों की अपेक्षा अधिक आहार की आवश्यकता होती है। ठंडे देश के निवासी ऊर्जा का उपयोग शरीर का ताप बढ़ाने के लिए भी करते हैं अतः सर्दियों में ऊष्मा के रूप में ऊर्जा लेने के कारण अधिक भोजन की आवश्यकता होती है।

विशेष शारीरिक अवस्था : कुछ विशेष शारीरिक अवस्थाएं भी आहार की मात्रा व पोषक तत्वों की आवश्यकता को प्रभावित करती है, जैसे— गर्भावस्था, दुग्धपान करने की अवस्था, ऑपरेशन के बाद की अवस्था, जल जाने के बाद की अवस्था तथा रोग का उपचार होने के बाद स्वस्थ होने की अवस्था। गर्भावस्था में पोषक तत्वों की आवश्यकता मां का शारीरिक आकार व भार बढ़ जाने के कारण अधिक होती है। दुग्धपान करने की अवस्था में मां के शरीर में लगभग 400 से 500 मिलीलीटर दूध का प्रतिदिन निर्माण होता है तथा मां की आधारभूत चयापचयी क्रिया (बीएमआर) अधिक होने के कारण ऊर्जा तथा अन्य तत्वों की आवश्यकता अधिक होती है। ऑपरेशन तथा जल जाने के बाद की अवस्था में भी निर्माणक तत्वों, विशेष रूप से प्रोटीन की आवश्यकता अधिक होती है।

दैनिक आहार में खाद्य पदार्थों का सेवन संतुलित मात्रा में किया जाना चाहिए। किसी भी

खाद्य पदार्थ की अधिक या कम मात्रा से शरीर कई घातक बीमारियों का शिकार हो सकता है। इसलिए कुछ बातों को ध्यान में रखना चाहिए जो इस प्रकार हैं :

- पोषण की दृष्टि से विभिन्न खाद्य-पदार्थों में से बुद्धिमत्तापूर्ण चयन करके पर्याप्त मात्रा में आहार का सेवन करना चाहिए।
 - दैनिक आहार में वसा की मात्रा कम होनी चाहिए। घी की तुलना में डबल फिल्टर्ड तेल का उपयोग ज्यादा अच्छा रहता है।
 - दैनिक आहार में अधिक शक्कर के उपयोग की अपेक्षा यदि अनाज एवं रोटी के रूप में कार्बोहाइड्रेट्स लिए जाएं तो रक्त में शक्कर का स्तर एकदम से नहीं बढ़ता। इससे मधुमेह से बचा जा सकता है।
 - हरी पत्तेदार सब्जियों एवं फलों का सेवन प्रचुर मात्रा में करना चाहिए। इनसे हमारी आंतों के लिए ज़रूरी रेशे प्राप्त होते हैं जिससे हमारा पाचनतंत्र सक्रिय एवं पेट साफ़ रहता है।
 - अधिक मात्रा में कैलोरी के सेवन से उच्च रक्तचाप, मधुमेह, मोटापा एवं हृदय संबंधी रोगों का ख़तरा बढ़ जाता है। इसलिए संतुलित मात्रा में ही भोजन ग्रहण करना चाहिए।
 - नमक का उपयोग संयम के साथ करना चाहिए। अधिक नमक सेवन का सीधा संबंध रक्त संबंधी बीमारियों से होता है।
 - सेवन किए गए सभी खाद्य पदार्थ पूर्णतः स्वच्छ तथा निरापद होने चाहिए।
 - पर्याप्त मात्रा में पानी पीना चाहिए और कृत्रिम पेय से बचना चाहिए।
- उपर्युक्त बातों से स्पष्ट है कि हर व्यक्ति को अपने लिए एक संतुलित आहार का निर्धारण करना चाहिए। आहार संतुलित न होने से सभी पोषक तत्व हमारे शरीर को नहीं मिल पाते हैं और दूसरी तरफ कुछ तत्वों की अत्यधिक मात्रा से संबंधित रोगों का ख़तरा बढ़ जाता है। अतः संतुलित आहार सभी रोगों से बचने की सबसे सरल औषधि है। इसमें हल्का व्यायाम और सैर भी जोड़ दें तो यह स्वस्थ रहने का बेमिसाल फार्मूला बन सकता है। □
- (लेखक महाराणा प्रताप कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय उदयपुर (राजस्थान) में आणविक जीव विज्ञान एवं जैव प्रौद्योगिकी विभाग से संबद्ध हैं।
ई-मेल : khandelwalsk19@yahoo.com)

मानव अधिकार का मेरुदंड

‘आत्मवत् सर्वभूतेषु’

● सरोज कुमार शुक्ल

आत्मवत् सर्वभूतेषु अर्थात् सभी प्राणियों को अपने जैसा मानने की परिकल्पना जिस साहित्य में विद्यमान है, उसके विषय में यह चिंता करने का कोई कारण नहीं है कि उसमें मानवाधिकारों की सत्ता और इयत्ता है या नहीं।

प्राचीन भारतीय साहित्य में इस संबंध में उपलब्ध चर्चा इतनी अधिक मात्रा में मिलती है जिसके अध्ययन, मनन एवं चिंतन से इस विषय का प्रतिपादन और विस्तार के लिए प्रचुर अवसर प्राप्त होता है।

सभ्यता और संस्कृति की चिन्तनधारा में मानव की अस्मिता, मानवीय गरिमा की सर्वोच्चता,

मानवीय प्रतिष्ठा की अपरिहार्यता और मानव के सर्वांगीण विकास का भाव अनेक तरह से प्रकट हुआ है। यह सुखद आश्चर्य है कि आधुनिक विश्वव्यापी और सार्वभौमिक अवधारणा के अनुरूप हमारे देश में भी मानवाधिकारों के विभिन्न संदर्भ और आयाम दृष्टिगत होते हैं। दरअसल, भारतीय संस्कृति में मानवाधिकारों की अवधारणा का बीज अत्यंत प्राचीन काल से मौजूद था। प्राचीन भारत में:

सर्वं भवन्तु सुखिनः सर्वं सन्तु निरामयाः।
सर्वं भद्राणि पश्यन्तु मा कश्चित् दुःखभाग् भवेत्॥

अर्थात् सभी सुखी हों, सभी निरोग हों, सभी का कल्याण हो, किसी को भी दुख का अनुभव न करना पड़े, का सिद्धांत सर्वप्रसिद्ध और लोकप्रिय था। इस प्रकार की अवधारणा

अशोक के शिलालेखों, भगवान बुद्ध और भगवान महावीर के उपदेशों, बाइबल, कुरान, और गुरु ग्रंथ साहब के पवित्र संदेशों में समान रूप से दृष्टिगोचर होती है। मध्यकालीन संतों की वाणियों के माध्यम से समता और सर्वकल्याण की वह धारा हम तक निरंतर प्रवाहित होती रही है, जो उपनिषदों के शांतिपाठों से निकली थी। इस वैचारिक संपत्ति से समृद्ध होने के कारण हमारे संविधान निर्माता मानवाधिकारों की अनिवार्यता और अपरिहार्यता को भली-भांति समझ सके। उन्होंने मौलिक अधिकारों और

कहा कि तुम दोबारा बाहर जाकर देखो। दूसरी बार जाने में उन्हें दिखाई दिया कि एक कुत्ता कुछ कहने के अंदाज में भौंक रहा है। उसको देखकर लक्षण ने कुत्ते से पूछा कि क्या तुम्हें दरबार से कोई शिकायत है। कुत्ते ने कहा, हाँ। इसके पश्चात लक्षण राम के पास गए और कहा कि दरबार की दहलीज पर एक कुत्ता मौजूद है जो कुछ शिकायत करना चाहता है। यह सुनकर कुत्ते को बुलाया गया और उसकी शिकायत पर उसे पीटने वाले व्यक्ति को दंडित किया गया। प्रतीकार्थ यह है कि आदर्श राज्य की परिकल्पना में छोटे-से-छोटे, गरीब-से-गरीब, कमज़ोर - से-कमज़ोर तबके की बात सुनना

राज्य के लिए आवश्यक है और यदि वह तबका स्वयं अपनी बात अधिकारियों तक न पहुंचा सके तो अधिकारियों का यह कर्तव्य बनता है कि वे वहां जाएं और पता लगाएं कि क्या कोई कष्ट किसी को है और यदि है तो उसका निवारण करें। इन व्यवस्था में न्यायिक प्रक्रिया के अंतर्गत छोटे-से-छोटे और बड़े-से-बड़े के बीच कोई भेदभाव नहीं किया जाए और सबके लिए समान तथा निष्पक्ष प्रक्रिया हो। राज्य को इसकी प्रतीक्षा नहीं करनी चाहिए कि लोग सत्ता के पास अपने कष्टों का निवेदन करने आएं बल्कि राज्य के अधिकारियों को स्वयं लोगों के पास जाकर उनका दुख-सुख समझना एवं अनुभव करना चाहिए।

10 दिसंबर, अंतरराष्ट्रीय मानवाधिकार दिवस पर विशेष

वाल्मीकि ने शाश्वत मूल्यों का साक्षात्कार किया था जिसका दर्शन उस काल के मनीषियों के आचरण में होता है। परंतु आज ये मूल्य लुप्त हो रहे हैं। इसलिए वाल्मीकि के काव्य से नयी पीढ़ी को प्रेरणा लेनी है। वाल्मीकि ने एकत्र का दर्शन किया था, समत्व का दर्शन किया था, समतामूलक समाज की अवधारणा प्रस्तुत करने के साथ-साथ उन्होंने मानवता के गौरव को प्रस्तुत किया था। एक ही आत्मा प्रत्येक व्यक्ति में विद्यमान है, फिर भेद-दृष्टि क्यों हो? जब अणु-अणु में एक ही परम शक्ति व्याप्त है, तो वे भिन्न दृष्टि का आश्रय कैसे ले सकते हैं? जब इस अभेद-दृष्टि का उदय हो जाता है, तब मानव का अधिकार सुरक्षित हो जाता है। वाल्मीकि का काव्य इसका जीवंत निर्दर्शन है।

अगर हम यज्ञ, अनुष्ठान या शुभ कार्य में पढ़े जाने वाले शार्ति पाठ की ओर ध्यान दें तो उसमें हमें संपूर्ण विश्व के भयमुक्त, उद्वेगहीन और कष्टमुक्त रहने की मनोकामना का प्राधान्य दिखाई देगा। जब द्यौ शार्तिः (आकाश शांतिमय हो), पृथ्वी शार्तिः (पृथ्वी शांतिमय हो), औषधयः शार्तिः (औषधियां शांतिमय हों) आपः शार्तिः (जल शांतिमय हों), वनस्पतयः शार्तिः (वनस्पतियां शांतिमय हों) कहा जाता है और सबके अंत में समस्त संसार के शांतिमय होने

की कामना की जाती है तो उसका अर्थ यही है कि किसी प्रकार का ज्ञार-जुल्म, चाहे वह मनुष्य का मनुष्य के प्रति हो, चाहे मनुष्य का प्रकृति के प्रति हो या पशुओं का प्रकृति के प्रति, वह न होने पाए।

महाकवि कालिदास ने अभिज्ञान शाकुंतलम् के अत में जो भरत वाक्य लिखा है उसका प्रारंभ होता है - प्रवर्तताम् प्रकृतिहिताय पार्थिवः से, अर्थात् राजा प्रजा के कल्याण के लिए प्रवृत्त हो।

महाभारत में हमें यह कहानी मिलती है कि एक ब्राह्मण को धर्म का उपदेश एक व्याध देता है जिसका रोजगार पशु-पक्षियों का मांस बेचना है। कोई भी रोजगार, कोई भी पेशा मनुष्य को नीचा व ऊंचा नहीं बनाता। यह हमारी संस्कृति व साहित्य में निरंतर प्रतिपादित है। कालिदास ने अपने ग्रन्थ अभिज्ञान शाकुंतलम् में इस सिंदूरात से संबंधित एक बहुत प्रभावशाली उदाहरण दिया है- एक धीवर को राजा के कर्मचारी चोरी के संदेह में पकड़ते हैं क्योंकि उसके पास राजा की अंगूठी मिलती है जो वस्तुतः उसे एक मछली का पेट चीरने से मिली थी। पूछताछ के दौरान अधिकारी उसके मछली पकड़ने की जीविका के ऊपर व्यंग्य करता है। धीवर यों तो प्राणदंड दिए जाने के भय से कांप रहा है लेकिन पलटकर जवाब देने

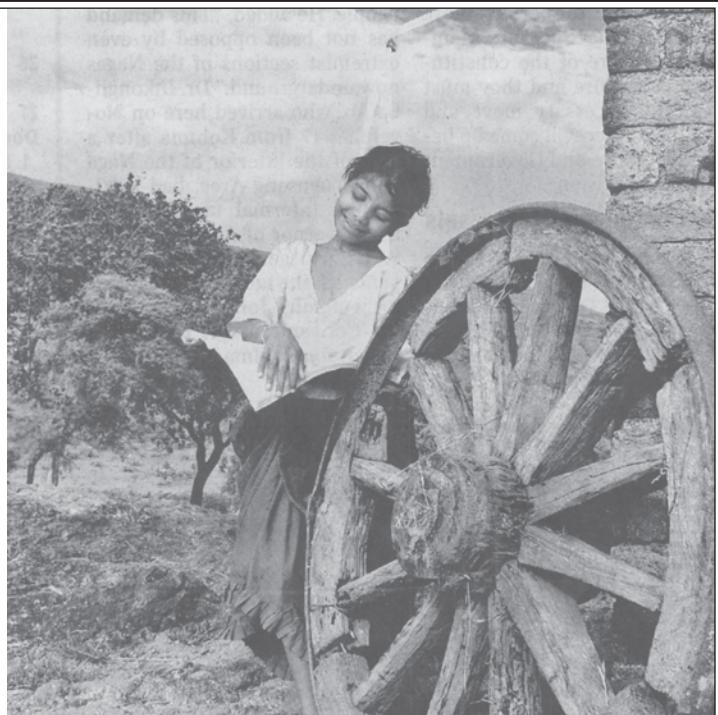
में नहीं चूकता और कहता है कि 'कोई भी रोजगार या व्यवसाय निदित नहीं होता बर्शें वह नियमों के अधीन किया जाए। यज्ञ में जब पशु बलि होती है तो पुरोहित ही उस पशु को मारता है।'

चाहे हमारा वैदिक साहित्य हो या पौराणिक, सबमें समग्र मानव जाति, पशु-पक्षी, यहां तक कि पर्यावरण के वे अवयव जिन्हें सामान्यतया जड़ माना जाता है, जैसे- वृक्ष और जल इन सबके समुचित संरक्षण और न्यायपूर्ण प्रबंधन की भावना दिखाई देती है। स्मृतियों में इस तरह के तमाम नियम हैं। तालाब या बावड़ी के जल को गंदा नहीं करना चाहिए, हरे पेड़ को नहीं काटना चाहिए, नये कुएं और बावड़ी खुदवाने से पुण्य होता है। यहां पाप-पुण्य किसी धर्म विशेष के विधि और निषेध की सूची के अंग नहीं हैं। यह केवल उन मुहावरों और भाषा के उदाहरण हैं जो उस समय प्रचलित थे। आधुनिक भाषा में न्याय और मानव अधिकारों की बात करते हुए पाप-पुण्य जैसे शब्दों का प्रयोग नहीं करते किंतु इसका अर्थ यह नहीं है कि पहले जो बातें कहीं कई हैं उनमें उन मुद्दों की कोई चर्चा ही नहीं थी जो आज मानव अधिकार के मूल सरोकार हैं। □

(लेखक राष्ट्रीय मानव अधिकार आयोग, नयी दिल्ली से संबद्ध हैं)

बढ़ते कदम

'बढ़ते कदम : सपना उम्मीद भरा'
शीर्षक रतलाम, मध्य प्रदेश निवासी
देवेन्द्र की उपरोक्त फोटो को भारत
सरकार के सूचना और प्रसारण मंत्रालय
के फोटो विभाग द्वारा आयोजित 22वें
राष्ट्रीय फोटो प्रतियोगिता में प्रथम
पुरस्कार से नवाज़ा गया है।



प्रकाशन विभाग

सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय, सी.जी.ओ. कॉम्प्लेक्स
लोधी रोड, नयी दिल्ली

विज्ञापन सं. ई-11016/1/2008-हिन्दी दिनांक 16.10.2008

भारतेंदु हरिश्चन्द्र पुरस्कार 2007 एवं 2008

भारतेंदु हरिश्चन्द्र पुरस्कार योजना के अंतर्गत क्रमशः वर्ष 2007 एवं 2008 के पुरस्कारों के लिए प्रविष्टियां आमंत्रित हैं। 1 जनवरी, 2007 से 31 दिसंबर, 2007 (कैलेंडर वर्ष) तथा 1 जनवरी, 2008 से 31 दिसंबर, 2008 के दौरान निम्नलिखित विषयों पर प्रकाशित पुस्तकों/अप्रकाशित पांडुलिपियों पर पुरस्कार प्रदान किए जाएंगे :

(क) पत्रकारिता एवं जनसंचार

यह पुरस्कार हिन्दी में जनसंचार के विभिन्न माध्यमों— पत्रकारिता, प्रचार, विज्ञापन, रेडियो, टेलीविज, फ़िल्म, मुद्रण, प्रकाशन आदि विषयों पर मौलिक लेखन को प्रोत्साहन देने के उद्देश्य से प्रकाशित पुस्तकों/पांडुलिपियों के लिए दिया जाता है।

प्रथम पुरस्कार	35,000/- रुपये
द्वितीय पुरस्कार	25,000/- रुपये
तृतीय पुरस्कार	20,000/- रुपये
मान पुरस्कार	5,000/- रुपये

(ख) राष्ट्रीय एकता

राष्ट्रीय एकता से संबंधित विषयों पर लिखी पुस्तकों एवं पांडुलिपियों पर दिया जाता है।

प्रथम पुरस्कार	15,000/- रुपये
द्वितीय पुरस्कार	10,000/- रुपये

(ग) महिला समस्या

समाज में महिलाओं की स्थिति से संबंधित समसामयिक विषयों पर महिला लेखिकाओं द्वारा लिखी पुस्तकों एवं पांडुलिपियों पर दिया जाता है।

प्रथम पुरस्कार	15,000/- रुपये
द्वितीय पुरस्कार	10,000/- रुपये

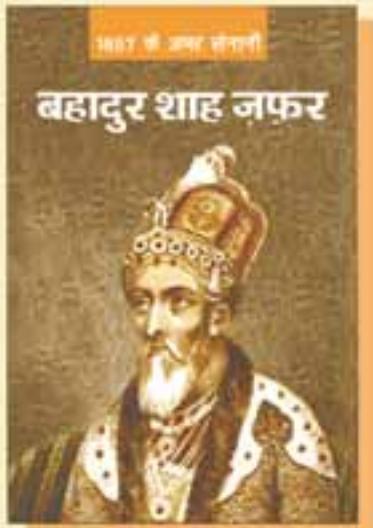
(घ) बाल साहित्य

बच्चों के लिए लिखी गई पुस्तकों एवं पांडुलिपियों पर दिया जाता है।

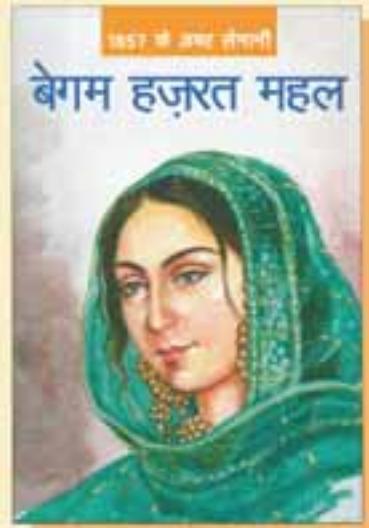
प्रथम पुरस्कार	15,000/- रुपये
द्वितीय पुरस्कार	10,000/- रुपये

इस योजना का विस्तृत विवरण तथा आवेदन प्रपत्र एवं नियमावली डाक द्वारा सहायक निदेशक (रा.भा.), कमरा नं. 342, सूचना भवन, सी.जी.ओ. कॉम्प्लेक्स, नयी दिल्ली-110003 से मंगाए जा सकते हैं। इसके साथ ही पूर्ण जानकारी प्रकाशन विभाग की वेबसाइट www.publicationsdivision.nic.in से भी प्राप्त की जा सकती है।

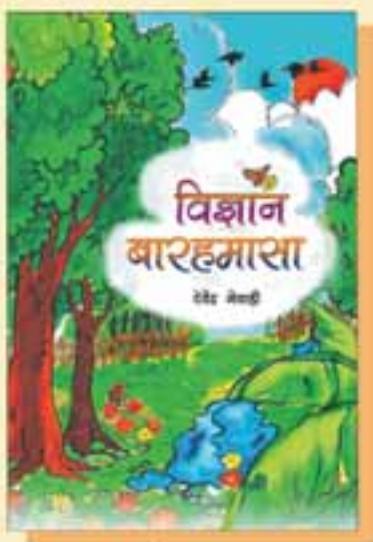
प्रकाशन विभाग की नवीनतम पुस्तकें



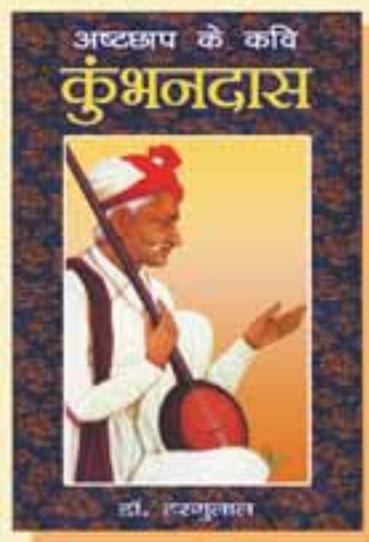
पुस्तक : बहादुरशाह ज़फर
लेखक : महेश दर्पण; **मूल्य :** 50 रुपये
आईएमबीएन : 978-81-230-1472-2



पुस्तक : बेगम हज़रत महल
लेखक : के.मी. यादव; **मूल्य :** 90 रुपये
आईएमबीएन : 978-81-230-1538-5



पुस्तक : विज्ञान बारहमासा
लेखक : देवेंद्र मेवाड़ी; **मूल्य :** 100 रुपये
आईएमबीएन : 978-81-230-1514-9



पुस्तक : अष्टधाप के कवि कुंभनदास
लेखक : डॉ. हरगुलाल; **मूल्य :** 90 रुपये
आईएमबीएन : 978-81-230-1439-5

पुस्तक के लिये कृपया हमारे निम्नलिखित विक्री केंद्रों पर संपर्क करें : - मैथन भवन भौतिकी कॉम्प्लेक्स, लोधी रोड, नवी दिल्ली-110003 (ट्रूभाप : 24367260, 5610), लाल म. 196, पुष्टा मध्यवालय, दिल्ली-110054 (ट्रूभाप : 23890205) * 201, चौ. विंग, सातहों भौतिक, कॉटोव माल, बेलापुर, नवी मुंबई-400614 (ट्रूभाप : 27570686) * 8, एमलालेन्ड इंस्ट, कोलकाता-700069 (ट्रूभाप : 22488030) * 'ए' विंग, राजाली भवन, चंद्रल नगर, चैन्नै-600010 (ट्रूभाप : 24917673) * प्रेस गोड नगो गवर्नरेंट प्लॉस के निकट, तिक्कानेंपुरम-695001 (ट्रूभाप : 23306550) * लाली कॉटोव म-4, चहला तल, गुहकल्प, एमवी एंड, नामपाली, दिल्लाप-500001 (ट्रूभाप : 24605383) * चार्टर्ड एंटर्प्राइज, 'एफ' विंग, कॉटोव माल, काशीपाला, चंगलूर-560034 (ट्रूभाप : 25537244) * विहार राज्य कॉटोवर्टिट बैंक भवन, अर्थोक राजपथ, पट्टा-800004 (ट्रूभाप : 2663407) * गोली स-1, दृमदा तल, कॉटोव भवन, सेक्टर-11, लखनऊ, लखनऊ-226024 (ट्रूभाप : 2225455) * अंतिम कॉटोवर्टिट, चार्टर्ड एंटर्प्राइज, काल्पी, अहमदाबाद-380007 (ट्रूभाप : 26588669) * के.आ.चौ. रोड, नवी कालिंगी, मुम्बई संक्षेत्र-7, चंद्रीकूटी, गुवाहाटी-781003 (ट्रूभाप : 2665090)

प्रकाशक व मुद्रक चीना जैन, अपर महानिदेशक द्वारा प्रकाशन विभाग के लिये ब्रजबासी आर्ट प्रेस लिमिटेड, ई-46/11, ओखला औद्योगिक क्षेत्र, फेस-2, नवी दिल्ली-110 020 से मुद्रित एवं प्रकाशन विभाग, सूचना भवन, सी.जी.ओ. कॉलेक्शन, लोधी रोड, नवी दिल्ली-110 003 से प्रकाशित। संपादक : राकेशरेणु



रोज़गार समाचार

साप्ताहिक

क्या आप सरकारी/सार्वजनिक क्षेत्र उपक्रम/कर्मचारी चयन आयोग/संघ लोक सेवा आयोग/
रेलवे भर्ती बोर्ड/सशत्र सेना और/बैंकों में रोज़गार तलाश रहे हैं?



रोज़गार समाचार आपका
श्रद्धार्थ मानदण्ड है। यह विभिन्न
तीस दर्ती से नीकरियों के लिए
सबसे अधिक विकने वाला
साप्ताहिक है। आप भी
इसके रहभागी बनें।

आपका हमारी वेबसाइट
employmentteews.gov.in

- पर स्वप्राप्त है, जो कि
- नवीनतम ड्रीमोगिकी से विकसित है।
 - उन्नत किसन के सर्वद्विधिन
से युक्त है।
 - आपको प्रस्तुती का विशेषज्ञान द्वारा
शीघ्र सम्पादन करती है।

रोज़गार समाचार/एम्प्लाएमेंट न्यूज की प्रति के लिए निकटतम वितरक
से संपर्क करें।

रोज़गार समाचार के लिए संपर्क करें:

रोज़गार समाचार, पूर्वी खण्ड 4, तल 5, रामकृष्ण पुरम, नई दिल्ली।

फोन: 26182079, 26107405, ई-मेल: enabm_sa@yahoo.com



प्रकाशन विभाग
सूचना और प्रसारण मंत्रालय
भारत सरकार